इस्लाही ख़ुतबात

8

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

इस्लाही ख़ुतबात

(8)

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती

मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

अनुवादक

मुहम्मद इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	इस्लाही ख़ुतबात जिल्द (8)
ख़िताब	मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी
अनुवादक	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	2100
प्रकाशन वर्ष	अप्रैल 2002
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस, 3289786,3289159, आवास, 3262486

मुख़्तसर फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

तफ़्सीली फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

(72) राहत किस तरह हासिल हो?

(73) दूसरों को तक्लीफ़ मत दीजिए

(76) मुसलमान मुसलमान, भाई भाई

पेश लफ़्ज़

हज़रत मौलाना मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

بسم اللہ الرحمن الرحیم

الحمد للہ وکفیٰ وسلام علی عبادہ الذین اصطفیٰ، امابعد

अपने बाज़ बुज़ुर्गों के इर्शाद की तामील में अह्कर कई साल से जुमे के दिन अ़सर के बाद जामा मस्जिद बैतुल मुकर्रम गुलशन इक़बाल कराची में अपने और सुनने वालों के फ़ायदे के लिए कुछ दीन की बातें किया करता है। इस मज्लिस में हर तब्क़ा–ए–ख़्याल के हज़रात और औरतें शरीक होते हैं। अल्हम्दु लिल्लाह! अह्कर को ज़ाती तौर पर भी इसका फ़ायदा होता है और अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल से सुनने वालों भी फ़ायदा महसूस करते हैं। अल्लाह तआ़ला इस सिलसिले को हम सब की इस्लाह का ज़रिया बनाएं, आमीन।

अह्कर के ख़ुसूसी मददगार मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब सल्ल–महू ने कुछ मुद्दत से अह्कर के उन बयानात को टेप रिकार्डर के ज़रिये महफ़ूज़ करके उनके कैसिट तैयार करने और उनको शाया करने का एहतिमाम किया, जिसके बारे में दोस्तों से मालूम हुआ के अल्लाह के फ़ज़्ल से उनसे भी मुसलमानों को फ़ायदा पहुंच रहा है।

उन कैसिटों की तायदाद अब दो सौ से ज़ायद हो गयी है, उन्हीं में से कुछ कैसिटों की तक़रीरें मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब सल्ल–महू ने क़लम बन्द भी फ़रमा लीं, और उनको छोटे छोटे रिसालों की शक्ल में शाया किया। अब वह उन तक़रीरों का मजमूआ़ "इस्लाही ख़ुतबात" के नाम से शाया कर रहे हैं।

इनमें से बाज़ तक़रीरों को अह्कर ने देखा भी है, और मौसूफ़ ने उन पर एक मुफ़ीद काम भी किया है, कि तक़रीरों में जो हदीसें आती हैं उनको असल किताबों से निकाल करके उनके हवाले भी

दर्ज कर दिए हैं, और इस तरह उनका फ़ायदा और ज्यादा बढ़ गया है।

इस किताब के मुताले के वक़्त यह बात ज़ेहन में रहनी चाहिए कि यह कोई बाक़ायदा तसनीफ़ नहीं है, बल्कि तक़रीरों का ख़ुलासा है जो कैसिटों की मदद से तैयार किया गया है। इसलिये इसका अन्दाज़ तहरीरी नहीं बल्कि ख़िताबी है। अगर किसी मुसलमान को इन बातों से फ़ायदा पहुंचे तो यह महज़ अल्लाह तआला का करम है, जिस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करना चाहिए, और अगर कोई बात ग़ैर मोह्तात या ग़ैर मुफ़ीद है तो वह यक़ीनन अह्क़र की किसी ग़लती या कोताही की वजह से है। लेकिन अल्हम्दु लिल्लाह! इन बयानात का मक़सद तक़रीर बराय तक़रीर नहीं, बल्कि सब से पहले अपने आपको और फिर सुनने वालों को अपनी इस्लाह की तरफ़ मुतवज्जह करना है।

अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से इन ख़ुतबात को ख़ुद अह्क़र की और तमाम पढ़ने वालों की इस्लाह का ज़रिया बनायें, और ये हम सब के लिए ज़ख़ीरा–ए–आख़िरत साबित हों। अल्लाह तआला से मज़ीद दुआ है कि वह इन ख़ुतबात के मुरत्तिब और नाशिर को भी इस ख़िदमत का बेहतरीन सिला अता फ़रमाएं, आमीन।

मुहम्मद तक़ी उस्मानी

بسم الله الرحمٰن الرحيم

अर्ज़े नाशिर

अल्हम्दु लिल्लाह "इस्लाही खुतबात" की आठवीं जिल्द आप तक पहुंचाने की हम सआदत हासिल कर रहे हैं। सातवीं जिल्द की मक़बूलियत और इफ़ादियत के बाद मुख़्तलिफ़ हज़रात की तरफ़ से आठवीं जिल्द को जल्द से जल्द शाया करने का शदीद तक़ाज़ा हुआ, और अब अल्हम्दु लिल्लाह, दिन रात की मेहनत और कोशिश के नतीजे में सिर्फ़ चन्द माह के अन्दर यह जिल्द तैयार होकर सामने आ गयी। इस जिल्द की तैयारी में बिरादरे मुकर्रम मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब ने अपनी मसरूफ़ियात के साथ साथ इस काम के लिए अपना क़ीमती वक़्त निकाला, और दिन रात की अंथक मेहनत और कोशिश करके आठवीं जिल्द के लिए मवाद तैयार किया। अल्लाह तआ़ला उनकी सेहत और उम्र में बर्कत अ़ता फ़रमाए, और मज़ीद आगे काम जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

हम जामिया दारुल उलूम कराची के उस्तादे हदीस जनाब मौलाना महमूद अशरफ़ उस्मानी साहिब मद्दज़िल्लहुम और मौलाना अ़ज़ीज़ुर्रहमान साहिब मद्दज़िल्लहुम के भी शुक्रगुज़ार हैं, जिन्होंने अपना क़ीमती वक़्त निकाल कर इस पर नज़रे सानी फ़रमाई, और मुफ़ीद मश्विरे दिए, अल्लाह तआ़ला दुनिया व आख़िरत में उन हज़रात को बेहतरीन अज्र अ़ता फ़रमाए, आमीन।

तमाम पढ़ने वालों से दुआ़ की दरख़्वास्त है कि अल्लाह तआ़ला इस सिलसिले को और आगे जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, और इसके लिए वसाइल और अस्बाब में आसानी पैदा फ़रमाए। इस काम को इख़्लास के साथ जारी रखने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए।

नाशिर

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم

तब्लीग़ व दावत के उसूल

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"وَالْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ، يَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَيُطِيْعُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ، اُولٰٓئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللّٰهُ، اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ. (سورة التوبة:٧١)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن علىٰ ذالك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين.

अच्छे काम का हुक्म करने और बुराई से रोकने के दरजात

इस आयत का ताल्लुक़ "अम्र बिल मारूफ़ और नही अ़निल मुन्कर" (अच्छे काम का हुक्म करने और बुराई से रोकने) से है। नेक बन्दों की सिफ़त बयान करते हुए अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि वे लोग दूसरों को नेकी का हुक्म देते हैं और बुराइयों से रोकते हैं। "अम्र" के मायने हैं "हुक्म देना" और "मारूफ़" के मायने हैं "नेकी" और "नही" के मायने हैं "रोकना" और "मुन्कर" के मायने हैं "बुराई" फ़ुक़हा-ए-किराम ने लिखा है कि जिस तरह हर मुसलमान पर नमाज़ रोज़ा लाज़मी फ़र्ज़ है, इसी तरह यह भी लाज़मी फ़र्ज़ है कि अगर वह दूसरे को किसी बुराई में मुब्तला देखे तो अपनी ताक़त व हिम्मत के मुताबिक़ उसको रोके और मना करे कि यह काम गुनाह

है, इसको न करो। लोगों को इतनी बात तो मालूम है कि "अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर" फ़र्ज़े ऐन है। लेकिन आम तौर पर इसकी तफ़सील मालूम नहीं कि यह किस वक़्त फ़र्ज़ है और किस वक़्त फ़र्ज़ नहीं। और मालूम न होने का नतीजा यह है कि बहुत से लोग तो इस फ़रीज़े से ही बिल्कुल ग़ाफ़िल हैं। वे लोग अपनी आंखों से अपने बीवी बच्चों को और अपने दोस्तों को देख रहे हैं कि वे हराम कामों में मुब्तला हैं, लेकिन इसके बावजूद उनको रोकने की तौफ़ीक़ नहीं होती। उनको देख रहे हैं कि वे फ़राइज़ के अदा करने में कोताही कर रहे हैं, लेकिन उनको कहने की तौफ़ी नहीं होती। और बाज़ लोग इस हुक्म को इतना आम समझते हैं कि सुबह से लेकर शाम तक उन्होंने दूसरों को रोकने टोकने को अपना मशग़ला बना रखा है। इस तरह इस आयत पर अमल करने में लोग कमी बेशी में मुब्तला हैं। वजह इसकी यह है कि इस आयत का सही मतलब मालूम नहीं, इसलिये इसकी तफ़सील समझना ज़रूरी है।

दावत व तब्लीग़ के दो तरीक़े, इन्फ़िरादी, इज्तिमाई

पहली बात यह समझ लें कि दावत व तब्लीग़ करने और दीन की बात दूसरों तक पहुंचाने के दो तरीक़े हैं। (१) इन्फ़िरादी दावत व तब्लीग़ (२) इज्तिमाई दावत व तब्लीग़। इन्फ़िरादी का मतलब यह है कि एक शख़्स अपनी आंखों से दूसरे शख़्स को देख रहा है कि वह फ़लां गुनाह और फ़लां बुराई के अन्दर मुब्तला है, या वह शख़्स फ़लां फ़र्ज़ या वाजिब के अदा करने में कोताही कर रहा है। अब इन्फ़िरादी तौर पर उस शख़्स को इस तरफ़ मुतवज्जह करना कि वह उस बुराई को छोड़ दे और नेकी पर अमल करे। इसको इन्फ़िरादी तब्लीग़ व दावत कहते हैं। दूसरी इज्तिमाई दावत व तब्लीग़ होती है, इसका मतलब यह है कि कोई शख़्स एक बड़े मज्मे के सामने दीन की बात कहे, उनके सामने वाज़ व तक़रीर करे, या उनको दर्स दे, या इस बात का इरादा करे कि मैं किसी फ़ौरी सबब के बग़ैर दूसरों के पास जा जाकर उनको दीन की बात सुनाऊंगा और दीन

फैलाऊंगा, जैसे माशा अल्लाह हमारे तब्लीग़ी जमाअत के हज़रात करते हैं, कि लोगों के पास उनके घरों पर उनकी दुकानों पर जाकर उनको दीन की बात पहुंचाते हैं। यह इज्तिमाई तब्लीग़ है। दावत व तब्लीग़ के इन दोनों तरीक़ों के अहकाम अलग अलग हैं, और दोनों के आदाब अलग अलग हैं।

इज्तिमाई तब्लीग़ फ़र्ज़े किफ़ाया है

"इज्तिमाई तब्लीग़" फ़र्ज़े अ़ैन नहीं है बल्कि फ़र्ज़े किफ़ाया है, इसलिये हर हर मुसलमान पर फ़र्ज़ नहीं है कि दूसरों के पास जाकर वाज़ कहे, या दूसरों के घर पर जाकर तब्लीग़ करे, क्योंकि यह फ़र्ज़े किफ़ाया है, और फ़र्ज़े किफ़ाया होने का मतलब यह है कि अगर कुछ लोग वह काम कर रहे हों तो बाक़ी लोगों से वह फ़रीज़ा उतर जाता है, और अगर कोई शख़्स भी अन्जाम न दे तो सब गुनाहगार होंगे। जैसे नमाज़े जनाज़ा फ़र्ज़े किफ़ाया है, अब हर शख़्स के ज़िम्मे ज़रूरी नहीं कि वह नमाज़े जनाज़ा में शामिल हो, अगर शामिल होगा तो सवाब मिलेगा, और शामिल नहीं होगा तो गुनाह नहीं होगा, जब तक कि कुछ पढ़ने वाले लोग मौजूद हों। लेकिन अगर एक भी शख़्स पढ़ने वाला नहीं होगा तो उस वक़्त सब मुसलमान गुनाहगार होंगे, इसको फ़र्ज़े किफ़ाया कहा जाता है। इसी तरह यह इज्तिमाई दावत फ़र्ज़े किफ़ाया है, फ़र्ज़े अ़ैन नहीं है।

इन्फ़िरादी तब्लीग़ फ़र्ज़े अ़ैन है

"इन्फ़िरादी दावत व तब्लीग़" यह है कि हम अपनी आंखों से एक बुराई होती हुई देख रहे हैं, या हम यह देख रहे हैं कि कोई शख़्स किसी फ़र्ज़ को छोड़ रहा है तो उस वक़्त अपनी ताक़त व हिम्मत की हद तक उस बुराई को रोकना फ़र्ज़े किफ़ाया नहीं बल्कि फ़र्ज़े अ़ैन है। और फ़र्ज़े अ़ैन होने का मतलब यह है कि आदमी यह सोच कर न बैठ जाए कि यह काम दूसरे लोग कर लेंगे, या यह तो मौलवियों का काम है, या तब्लीग़ी जमाअत वालों के करने का काम

है, यह दुरुस्त नहीं, इस हदीस की रू से यह काम हर हर मुसलमान के ज़िम्मे फ़र्ज़े अ़ैन है। इसलिये यह इन्फ़िरादी दावत व तब्लीग़ फ़र्ज़े अ़ैन है।

'अम्र बिल मारूफ़ और नही अ़निल मुन्कर' फ़र्ज़े अ़ैन है

क़ुरआने करीम में अल्लाह तआ़ला ने बेशुमार आयतों में नेक बन्दों की बुनियादी सिफ़तें बयान करते हुए फ़रमायाः

"يامرون بالمعروف وينهون عن المنكر"

यानी वे नेक बन्दे दूसरों को नेकी का हुक्म देते हैं, और बुराई से लोगों को मना करते हैं। इसलिये यह 'अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर' हर मुसलमान के ज़िम्मे फ़र्ज़े अ़ैन है। आज हम लोग इसके फ़र्ज़ होने ही से ग़ाफ़िल हैं। अपनी आंखों से अपनी औलाद को अपने घर वालों को ग़लत रास्ते पर जाते हुए देख रहे हैं, अपने मिलने जुलने वालों को ग़लत काम करता हुआ देखते हैं, लेकिन फिर भी उस बुराई पर उनको तंबीह करने का कोई जज़्बा और कोई तक़ाज़ा हमारे दिलों में पैदा नहीं होता। हालांकि यह एक मुस्तक़िल फ़रीज़े के अदा करने में कोताही करना है। जिस तरह हर मुसलमान पर पांच वक़्त की नमाज़ फ़र्ज़ है, जिस तरह रमज़ान के रोज़े हर मुसलमान पर फ़र्ज़ हैं, ज़कात और हज फ़र्ज़ है, बिल्कुल इसी तरह 'अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर' यानी अच्छे काम का हुक्म करना और बुराई से रोकना भी फ़र्ज़ है, इसलिये सब से पहले इस काम की अहमियत को समझना चाहिए। अगर किसी ने सारी उम्र नेकियों में गुज़ार दी, एक नमाज़ नहीं छोड़ी, रोज़ा एक भी नहीं छोड़ा, ज़कात और हज अदा करता रहा, और अपनी तरफ़ से किसी बड़े गुनाह का इर्तिकाब नहीं किया, लेकिन उस शख़्स ने 'अम्र बिल मारूफ़ और नही अ़निल मुन्कर' का काम भी अन्जाम नहीं दिया, और दूसरों को बुराइयों से बचाने की फ़िक्र भी नहीं की, याद रखिए, अपनी ज़ाती नेकियों के बावजूद आख़िरत में उस शख़्स की पकड़ हो

जायेगी कि तुम्हारी आंखों के सामने ये बुराइयां हो रही थीं, और इन बुरे कामों का सैलाब उमड रहा था, तुमने उसको रोकने का क्या इक़्दाम किया? इसलिये तन्हा अपने आपको सुधार लेना काफ़ी नहीं, बल्कि दूसरों की फ़िक्र करना भी ज़रूरी है।

'अम्र बिल मारूफ़ और नही अ़निल मुन्कर' कब फ़र्ज़ है

दूसरी बात यह समझ लीजिए कि इबादतों की दो क़िस्में हैं। एक इबादत वह है जो फ़र्ज़ या वाजिब है। जैसे नमाज़, रोज़ा, ज़कात, हज वग़ैरह। दूसरी इबादत वह है जो सुन्नत या मुस्तहब है। जैसे मिस्वाक करना, खाना खाने से पहले बिस्मिल्लाह पढ़ना, तीन सांस में पानी पीना वग़ैरह, इसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तमाम सुन्नतें दाख़िल हैं। इसी तरह बुराइयों की भी दो क़िस्में हैं। एक बुराई वह है जो हराम और ना जायज़ नहीं, बल्कि ख़िलाफ़े सुन्नत है, या ना मुनासिब है, या अदब के ख़िलाफ़ है। अगर कोई शख़्स फ़राइज़ या वाजिबात को छोड़ रहा हो, या हराम और ना जायज़ काम का इर्तिकाब कर रहा हो तो वहां 'अम्र बिल मारूफ़ और नही अ़निल मुन्कर' फ़र्ज़े अ़ैन है। जैसे कोई शख़्स शराब पी रहा है, या बदकारी के अन्दर मुब्तला है, या ग़ीबत कर रहा है, या झूठ बोल रहा है। चूंकि ये सब खुले गुनाह हैं, यहां 'नही अ़निल मुन्कर' फ़र्ज़ है। या जैसे कोई शख़्स फ़र्ज़ नमाज़ छोड़ रहा है, या ज़कात नहीं दे रहा है, या रमज़ान के रोज़े नहीं रख रहा है तो उसको उसके अदा करने के लिए कहना फ़र्ज़ है।

उस वक़्त 'नही अ़निल मुन्कर' फ़र्ज़ नहीं

और फिर इसमें भी तफ़सील है। वह यह है कि यह उस वक़्त फ़र्ज़ होता है जब उसको बताने या उसको रोकने के नतीजे में उसके मान लेने का गुमान हो। और उसको बताने के नतीजे में बताने वाले को कोई तक्लीफ़ पहुंचने का अन्देशा न हो। इसलिये अगर कोई शख़्स गुनाह के अन्दर मुब्तला है, और आपको यह ख़्याल

है कि अगर मैं इसको इस गुनाह से रोकूंगा तो यक़ीन है कि यह शख़्स मानेगा नहीं, बल्कि यह शख़्स उल्टा शरीअ़त के हुक्म का मज़ाक़ उड़ायेगा, और उसकी तौहीन करेगा, और उस तौहीन के नतीजे में यह अन्देशा है कि कहीं कुफ़्र में मुब्तला न हो जाये। इसलिये कि शरीअ़त के किसी हुक्म की तौहीन करना सिर्फ़ गुनाह नहीं, बल्कि यह अ़मल इन्सान को इस्लाम से ख़ारिज कर देता है, और काफ़िर बना देता है। इसलिये अगर इस बात का ग़ालिब गुमान हो कि अगर मैं उस शख़्स को इस वक़्त इस गुनाह से रोकूंगा तो यह शरीअ़त के हुक्म की तौहीन करेगा तो ऐसी सूरत में उस वक़्त 'नही अ़निल मुन्कर' यानी बुराई से रोकने का फ़रीज़ा साक़ित हो जाता है। इसलिये ऐसे मौक़े पर उसको गुनाह से नहीं रोकना चाहिए, बल्कि अपने आपको उस गुनाह के काम से अलग कर लेना चाहिए, और उस शख़्स के हक़ में दुआ़ करना चाहिए कि या अल्लाह! आपका यह बन्दा एक बीमारी में मुब्तला है, अपने फ़ज़्ल व करम से इसे इस बीमारी से निकाल दीजिए।

गुनाह में मुब्तला शख़्स को मौक़े पर रोकना

एक शख़्स पूरे ज़ौक़ व शौक़ के साथ किसी गुनाह की तरफ़ मुतवज्जह है, उस वक़्त इस बात का दूर दूर तक कोई गुमान नहीं है कि वह किसी की बात सुनेगा और मान लेगा, अब ऐ़न उस वक़्त एक शख़्स उसके पास तब्लीग़ के लिए और 'अम्र बिल मारूफ़' के लिए पहुंच गया, और यह नहीं सोचा कि उस वक़्त तब्लीग़ करने का नतीजा क्या होगा? चुनांचे उसने तब्लीग़ की, उसने सामने से शरीअ़त के उस हुक्म का मज़ाक़ उड़ा दिया और उसके नतीजे में कुफ़्र के अन्दर मुब्तला हो गया। उसके कुफ़्र में मुब्तला होने का सबब यह शख़्स बना जिसने जाकर उसको तब्लीग़ की। इसलिये ऐ़न उस वक़्त जब कोई शख़्स गुनाह के अन्दर मुब्तला हो, उस वक़्त रोकना टोकना कभी कभी नुक़सान देने वाला होता है। इसलिये उस वक़्त

रोकना टोकना ठीक नहीं, बल्कि बाद में मुनासिब मौक़े पर उसको बता देना और समझा देना चाहिए कि जो अ़मल तुम कर रहे थे वह दुरुस्त नहीं था।

अगर मानने और न मानने दोनों बातों का गुमान बराबर हो

और अगर दोनों गुमान बराबर हों यानी यह गुमान भी हो कि शायद यह मेरी बात सुन कर मान ले और उस गुनाह से बाज़ आ जाए, और यह गुमान भी हो कि शायद यह मेरी बात न माने, तो ऐसे मौक़े में बात कह देना ज़रूरी है, इसलिये कि क्या पता कि तुम्हारे कहने की बर्कत से अल्लाह तआ़ला उसके दिल में यह बात उतार दे और उसके नतीजे में उसकी इस्लाह हो जाये। और अगर तुम्हारे कहने के नतीजे में उसकी इस्लाह हो गई तो फिर उसकी आइन्दा सारी उम्र की नेकियां तुम्हारे नामा–ए–आमाल में लिखी जायेंगी।

अगर तक्लीफ़ पहुंचने का अन्देशा हो

और अगर यह ख़्याल है कि यह शख़्स जो गुनाह के अन्दर मुब्तला है, अगर मैं इसको रोकूंगा तो यह शख़्स अगरचे शरीअ़त के हुक्म की तौहीन तो नहीं करेगा, लेकिन मुझे तक्लीफ़ पहुंचायेगा। तो इस सूरत में अपने आपको उस तक्लीफ़ से बचाने के लिए उसको गुनाह से न रोकना जायज़ है, और उस वक़्त 'अम्र बिल मारूफ़' यानी अच्छे काम का हुक्म करना और 'नही अ़निल मुन्कर' यानी बुराई से रोकना फ़र्ज़ नहीं रहेगा, लेकिन अफ़ज़ल फिर भी यह है कि उस से कह दे, और यह सोचे कि अगरचे मुझे तक्लीफ़ पहुंचायेगा और मेरे पीछे पड़ जायेगा, लेकिन मैं हक़ बात उसको कह दूं। इसलिये उस वक़्त बात कह देना अफ़ज़ल है, और जो तक्लीफ़ पहुंचे उसको बर्दाश्त करना चाहिए। बहर हाल, ऊपर ज़िक्र हुई तीन सूरतें याद रखने की हैं। जिसका ख़ुलासा यह है कि जिस जगह यह अन्देशा हो कि सामने वाला शख़्स मेरी बात सुनने और मानने के बजाए शरीअ़त के हुक्म की तौहीन करेगा, वहां 'अम्र बिल मारूफ़' न

करे, बल्कि ख़ामोश रहे, और जिस जगह दोनों बातों का गुमान बराबर हो कि शायद मेरी बात मान लेगा, या शायद तौहीन पर उतर आयेगा, उस जगह पर बात कहना ज़रूरी है, और जिस जगह यह अन्देशा हो कि वह मुझे तक्लीफ़ पहुंचायेगा तो वहां शरीअ़त की बात कहना ज़रूरी नहीं, लेकिन अफ़ज़ल यह है कि शरीअ़त की बात कह दे और उस तक्लीफ़ को बर्दाश्त करे। यह ख़ुलासा है जिसे हर शख़्स को याद रखना चाहिए।

टोकते वक़्त नियत दुरुस्त होनी चाहिए

फिर शरीअ़त की बात कहते वक़्त हमेशा नियत दुरुस्त रखनी चाहिए। और यह समझना नहीं चाहिए कि हम इस्लाह करने वाले और बड़े हैं। और हम दीनदार और मुत्तक़ी हैं, दूसरा शख़्स फ़ासिक़ और बुरा है, और हम उसकी इस्लाह के लिए खड़े हुए हैं, हम ख़ुदाई फ़ौजदार और दारोग़ा हैं। इसलिये कि इस नियत के साथ अगर शरीअ़त की बात कही जायेगी तो उसका फ़ायदा न सुनने वाले को पहुंचेगा न तुम्हें फ़ायदा होगा, इसलिये कि इस नियत के साथ तुम्हारे दिल में तकब्बुर और घमण्ड पैदा हो गया, जिसके नतीजे में यह अ़मल अल्लाह तआ़ला के पास मक़बूल नहीं रहा, और तुम्हारा यह अ़मल बेकार और अकारत हो गया, और सारी मेहनत ज़ाया हो गई। और सुनने वाले के दिल में भी तुम्हारी बात कहने का असर नहीं होगा। इसलिये रोकते वक़्त नियत का दुरुस्त होना ज़रूरी है।

बात कहने का तरीक़ा दुरुस्त होना चाहिए

इसी तरह जब भी दूसरे से शरीअ़त की बात कहनी हो तो सही तरीक़े से बात कहो, प्यार व मुहब्बत और ख़ैर ख़्वाही के साथ बात कहो, ताकि उसकी दिल शिकनी कम से कम हो। और इस अन्दाज़ से बात कहो कि उसकी ज़िल्लत न हो, और लोगों के सामने उसकी बेइज़्ज़ती न हो। शैख़ुल इस्लाभ हज़रत अ़ल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि एक जुम्ला फ़रमाया करते थे जो मेरे

वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि से कई बार हमने सुना, वह यह कि हक़ बात हक़ तरीक़े और हक़ नियत से जब भी कही जायेगी वह कभी नुक़सान देह नहीं होगी। इसलिये जब भी तुम यह देखो कि हक़ बात कहने के नतीजे में कहीं लड़ाई झगड़ा हो गया, या नुक़सान हो गया, या फ़साद हो गया तो समझ लो कि इन तीन बातों में से ज़रूर कोई बात होगी। या तो बात हक़ नहीं थी और ख़्वाह मख़्वाह उसको हक़ समझ लिया था। या बात तो हक़ थी लेकिन नियत दुरूस्त नहीं थी, और बात कहने का मक़सद दूसरे की इस्लाह नहीं थी बल्कि अपनी बड़ाई ज़ाहिर करनी मक़सद थी, या दूसरे को ज़लील करना मक़सद था, जिसकी वजह से बात के अन्दर असर नहीं था। या यह कि बात भी हक़ थी, नियत भी दुरुस्त थी, लेकिन तरीक़ा हक़ नहीं था, और बात ऐसे तरीक़े से कही जैसे दूसरे को लठ मार दिया। कलिमा--ए--हक़ कोई लठ नहीं है कि उठा कर किसी को मार दो, बल्कि हक़ कलिमा कहना मुहब्बत और ख़ैर ख़्वाही वाला काम है जो हक़ तरीक़े से अन्जाम पायेगा। जब ख़ैर ख़्वाही में कमी हो जाती है तो फिर हक़ बात से भी नुक़सान पहुंच जाता है।

नर्मी से समझाना चाहिए

मेरे वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा और हज़रत हारून अ़लैहिमस्सलाम को फ़िरऔन की इस्लाह के लिए भेजा, और फ़िरऔन कौन था? ख़ुदाई का दावेदार था, जो यह कहता था कि:

"أَنَا رَبُّكُمُ الْأَعْلَىٰ" (النازعات: ٢٤)

यानी मैं तुम्हारा बड़ा परवर्दिगार हूं। गोया कि वह फ़िरऔन बद--तरीन काफ़िर था। लेकिन जब ये दोनों पैग़म्बर फ़िरऔन के पास जाने लगे तो अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया:

"فَقُولَا لَهُ قَوْلًا لَّيِّنًا لَّعَلَّهُ يَتَذَكَّرُ أَوْ يَخْشَىٰ" (سورة طه: ٤٤)

यानी तुम दोनों फ़िरऔन के पास जाकर नर्म बात कहना, शायद कि वह नसीहत मान ले, या डर जाए। यह वाक़िआ सुनाने के बाद वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि आज तुम हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से बड़े इस्लाह करने वाले नहीं हो सकते, और तुम्हारा मुक़ाबिल फ़िरऔन से बड़ा गुमराह नहीं हो सकता। चाहे वह कितना ही बड़ा फ़ासिक़, गुनाहगार और मुश्रिक हो, इसलिये कि वह तो ख़ुदाई का दावेदार था। इसके बावजूद हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम और हज़रत हारून अलैहिस्सलाम से फ़रमाया जा रहा है कि जब फ़िरऔन के पास जाओ तो ज़रा नर्मी से बात करना, सख़्ती से बात मत करना। इसके ज़रिये हमारे लिये क़ियामत तक यह पैग़म्बराना तरीक़ा–ए–कार मुक़र्रर फ़रमा दिया कि जब भी किसी से दीन की बात कहें तो नर्मी से कहें, सख़्ती से न कहें।

हुज़ूर सल्ल. के समझाने का अन्दाज़

एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ फ़रमा थे, और सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम भी मौजूद थे। इतने में एक देहाती शख़्स मस्जिदे नबवी में दाख़िल हुआ और आकर जल्दी जल्दी उसने नमाज़ पढ़ी और नमाज़ के बाद अजीब व ग़रीब दुआ की कि:

"اَللّٰهُمَّ ارْحَمْنِیْ وَمُحَمَّدًا وَلَا تَرْحَمْ مَعَنَا اَحَدًا"

ऐ अल्लाह! मुझ पर रहम फ़रमा और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर रहम फ़रमा, और हमारे अलावा किसी पर रहम न फ़रमा। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसकी यह दुआ सुनी तो फ़रमाया कि तुमने अल्लाह तआला की रहमत को बहुत तंग और सीमित कर दिया, कि सिर्फ़ दो आदमी पर रहम फ़रमा, और किसी पर रहम न फ़रमा, हालांकि अल्लाह तआला की रहमत बहुत बड़ी है। थोड़ी देर के बाद उसी देहाती ने मस्जिद के सेहन में बैठ कर पेशाब कर दिया। सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु

अ़न्हुम ने जब यह देखा कि वह मस्जिद में पेशाब कर रहा है तो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम जल्दी से उसकी तरफ़ दौड़े और क़रीब था कि उस पर डांट डपट शुरू कर देते, इतने में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"لَا تُزْرِمُوْهُ" (مسلم شریف)

यानी उसका पेशाब बन्द मत करो। जो काम करना था, वह उसने कर लिया और पूरा पेशाब करने दो, उसको मत डांटो। और फ़रमायाः

"اِنَّمَا بُعِثْتُمْ مُيَسِّرِيْنَ وَلَمْ تُبْعَثُوْا مُعَسِّرِيْنَ" (مسلم شریف)

यानी तुम्हें लोगों के लिए ख़ैर ख़्वाही करने वाला और आसानी करने वाला बना कर भेजा गया है, दुश्वारी करने वाला बना कर नहीं भेजा गया। इसलिये अब जाकर मस्जिद को पानी के ज़रिये साफ़ कर दो। फिर आपने उसको बुला कर समझाया कि यह मस्जिद अल्लाह का घर है, इस क़िस्म के कामों के लिए नहीं है। इसलिये तुम्हारा यह अ़मल दुरुस्त नहीं, आइन्दा ऐसा मत करना।

अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम का तब्लीग़ का अन्दाज़

अगर हमारे सामने कोई शख़्स इसत तरह मस्जिद में पेशाब कर दे तो शायद हम लोग तो उसकी तिका बोटी कर दें। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा कि यह शख़्स देहाती है और ना वाक़िफ़ है, ना जानकारी और ला इल्मी की वजह से उसने यह हर्कत की है। इसलिये उसको यह डांटने का मौक़ा नहीं है बल्कि नर्मी से समझाने का मौक़ा है। चुनांचे आपने नर्मी से उसको समझा दिया। अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम की यही तालीम है। अगर कोई मुख़ालिफ़ गाली भी देता है तो अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम उसके जवाब में गाली नहीं देते, क़ुरआने करीम में मुश्रिकीन का यह क़ौल नक़ल किया गया है कि उन्होंने अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम से मुख़ातिब होकर कहा किः

"اِنَّا لَنَرَاكَ فِىْ سَفَاهَةٍ وَّاِنَّا لَنَظُنُّكَ مِنَ الْكٰذِبِيْنَ" (الاعراف:٦٦)

यानी हम आपको देख रहे हैं कि आप बेवकूफ़ हैं, और हमारे ख़्याल में आप झूठे हैं। अगर कोई शख़्स किसी आ़लिम या मुक़र्रिर या ख़तीब को यह कह दे कि तुम बेवकूफ़ और झूठे हो, तो जवाब में उसको यह कह देगा कि तू बेवकूफ़ तेरा बाप बेवकूफ़, लेकिन पैग़म्बर ने जवाब में फ़रमायाः

"يٰقَوْمِ لَيْسَ بِىْ سَفَاهَةٌ وَّلٰكِنِّىْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ"

ऐ मेरी क़ौम, मैं बेवकूफ़ नहीं हूं, बल्कि मैं तो रब्बुल आ़लमीन का पैग़म्बर हूं। देखिएः गाली का जवाब गाली से नहीं दिया जा रहा है, बल्कि मुहब्बत और प्यार का बर्ताव किया जा रहा है। एक और क़ौम ने अपने पैग़म्बर से कहाः

"اِنَّا لَنَرَاكَ فِىْ ضَلَالٍ مُّبِيْنٍ" (الاعراف:٦٠)

तुम तो खुले गुमराह नज़र आ रहे हो। जवाब में वह पैग़म्बर फ़रमाते हैं। ऐ मेरी क़ौम! मैं गुमराह नहीं हूं। बल्कि मैं तो अल्लाह का रसूल हूं। यह पैग़म्बरों की इस्लाह व दावत का तरीक़ा है। इसलिये हमारी बातें जो बे असर हो रही हैं, इसकी वजह यह है कि या तो बात हक़ नहीं है, या तरीक़ा हक़ नहीं है, या नियत हक़ नहीं है। और इसी वजह से ये सारी ख़राबियां पैदा हो रही हैं।

हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह. का वाक़िआ

हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि उन बुज़ुर्गों में से हैं जिन्होंने इस पर अ़मल करके दिखा दिया है। उनका वाक़िआ है कि एक मर्तबा आप देहली की जामा मस्जिद में वाज़ कह रहे थे। वाज़ के दौरान एक शख़्स खड़ा हुआ और उसने कहाः मौलाना मेरे एक सवाल का जवाब दे दें, हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने पूछा क्या सवाल है? उसने कहाः मैंने सुना है कि आप हराम ज़ादे हैं। अल्लाह की पनाह। अ़ैन वाज़ के दौरान भरे मजमे में यह बात उसने ऐसे शख़्स से कही जो न सिर्फ़ यह कि बड़े

आलिम थे बल्कि शाही ख़ानदान के शहज़ादे थे। हम जैसा कोई होता तो फ़ौरन गुस्सा आ जाता और न जाने उसका क्या हश्र करता। और हम न करते तो हमारे मोतक़िदीन उसकी तिका बोटी कर डालते कि यह हमारे शैख़ को ऐसा कहता है, लेकिन हज़रत मौलाना शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने जवाब में फ़रमाया कि भाई: आपको ग़लत इत्तिला मिली है, मेरी वालिदा के निकाह के गवाह तो अब भी देहली में मौजूद हैं। उसकी गाली का इस तरह जवाब दिया और इसको मसला नहीं बनाया।

बात में तासीर कैसे पैदा हो?

इसलिये जब कोई अल्लाह का बन्दा अपनी नफ़्सानियत को फ़ना करके अपने आपको मिटा कर अल्लाह के लिए बात करता है और उस वक़्त दुनिया वालों को यह बात मालूम होती है कि उसके सामने उसका अपना कोई मफ़ाद (स्वार्थ) नहीं है, और यह जो कुछ कह रहा है अल्लाह के लिए कह रहा है तो फिर उसकी बात में असर होता है। चुनांचे हज़रत शाह इसमाईल शहीद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि के एक एक वाज़ में हज़ारों अफ़राद उनके हाथ पर तौबा करते थे। आज हम लोगों ने अव्वल तो तब्लीग़ व दावत छोड़ दी, और अगर कोई करता भी है तो ऐसे तरीक़े से करता है जो लोगों को बिदकाना होता है। जिस से सही मायने में फ़ायदा नहीं पहुंचता। इसलिये ये तीन बातें याद रखनी चाहिएं। अव्वल बात हक़ हो, दूसरे नियत हक़ हो, तीसरे तरीक़ा हक़ हो। इसलिये हक़ बात हक़ तरीक़े से हक़ नियत से कही जायेगी तो वह कभी नुक़सान देह नहीं होगी, बल्कि उसका फ़ायदा ही पहुंचेगा।

इज्तिमाई तब्लीग़ का हक़ किसको है?

तब्लीग़ की दूसरी क़िस्म है "इज्तिमाई तब्लीग़" यानी लोगों को जमा करके कोई वाज़ तक़रीर करना, या उनको नसीहत करना। इसको इज्तिमाई दावत व तब्लीग़ कहते हैं। यह इज्तिमाई तब्लीग़ व

दावत फ़र्ज़े ऐन नहीं है, बल्कि फ़र्ज़े किफ़ाया है। इसलिये अगर कुछ लोग इस फ़रीज़े के अदा करने के लिए काम करें तो बाक़ी लोगों से यह फ़रीज़ा साक़ित हो जाता है। लेकिन यह "इज्तिमाई तब्लीग़" करना हर आदमी का काम नहीं है, कि जिसका दिल चाहे खड़ा हो जाए, और वाज़ करना शुरू कर दे, बल्कि इसके लिए मतलूब इल्म की ज़रूरत है, अगर इतना इल्म नहीं है तो इस सूरत में इज्तिमाई तब्लीग़ का इन्सान मुकल्लफ़ नहीं है। और कम से कम इतना इल्म होना ज़रूरी है जिसके नतीजे में वाज़ के दौरान ग़लत बात कहने का अन्देशा न हो, तब वाज़ कहने की इजाज़त है, वर्ना इजाज़त नहीं। यह वाज़ व तब्लीग़ का मामला बड़ा नाज़ुक है, जब आदमी यह देखता है कि इतने सारे लोग बैठ कर मेरी बातें सुन रहे हैं, तो ख़ुद उसके दिमाग़ में बड़ाई आ जाती है। अब ख़ुद ही तक़रीर और वाज़ के ज़रिये लोगों को धोखा देता है। उसके नतीजे में लोग उसके धोखे में आ जाते हैं कि यह शख़्स इल्म जानने वाला है और बड़ा नेक आदमी है। और जब लोग धोखे में आ गये अब ख़ुद भी धोखे में आ गया कि इतनी सारी मख़्लूक़, इतने सारे लोग मुझे आलिम कह रहे हैं, और मुझे अच्छा और नेक कह रहे हैं तो ज़रूर मैं कुछ हूंगा, तभी तो ये ऐसा कह रहे हैं, वर्ना ये सारे लोग पागल तो नहीं हैं। बहर हाल, वाज़ और तक़रीर के नतीजे में आदमी इस फ़ितने में मुब्तला हो जाता है।

इसलिये हर शख़्स को तक़रीर और वाज़ नहीं करना चाहिए। हां अगर वाज़ कहने के लिए कोई बड़ा किसी जगह बिठा दे तो उस वक़्त बड़ों की सर परस्ती में अगर काम करे, और अल्लाह तआला से मदद भी मांगता रहे तो फिर अल्लाह तआला इस फ़ितने से महफ़ूज़ रखते हैं।

दर्से कुरआन और दर्से हदीस देना

वाज़ और तक़रीबर फिर भी ज़रा हल्की बात है, लेकिन अब तो

दर्से कुरआन और दर्से हदीस देने तक नौबत पहुंच गई है। जिसके दिल में भी दर्से कुरआन देने का ख़्याल आया, बस उसने दर्से कुरआन देना शुरू कर दिया, हालांकि कुरआने करीम वह चीज़ है, जिसके बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया:

"من قال فی القرآن بغیر علم فلیتبوأ مقعده من النار"

जो शख़्स कुरआने करीम की तफ़सीर में इल्म के बग़ैर कोई बात कहे तो वह शख़्स अपना ठिकाना जहन्नम में बना ले। एक दूसरी हदीस में आपने फ़रमाया:

"من قال فی کتاب الله عزوجل برایه فاصاب فقداخطا" (ابوداؤد شریف)

जो शख़्स अल्लाह जल्ल शानुहू की किताब में अपनी राय से कलाम करे, अगर सही भी करे तो भी उसने ग़लत काम किया। इतनी संगीन वईद हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाई है इसके बावजूद आज यह हाल है कि अगर किसी शख़्स को किताबों के मुताले के ज़रिये दीन की कुछ बातें मालूम हो गयीं तो अब वह आ़लिम बन गया, और उसने दर्से कुरआन देना शुरू कर दिया, हलांकि यह दर्से कुरआन और दर्से हदीस ऐसा अ़मल है कि बड़े बड़े उलमा इस से थर्राते हैं कहां यह कि आ़म आदमी कुरआने करीम का दर्स दे और उसकी तफसीर बयान करे।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रह. और कुरआने करीम की तफ़सीर

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने उम्र के सत्तर पछत्तर साल दीन के उलूम पढ़ने पढ़ाने में गुज़ारे, आख़िर उम्र में जाकर "मआ़रिफ़ुल कुरआन" के नाम से तफ़सीर तालीफ़ फ़रमाई, उसके बारे में आप मुझसे बार बार फ़रमाते थे कि मालूम नहीं कि मैं इस क़ाबिल था कि तफ़सीर पर क़लम उठाता, मैं तो हक़ीक़त में तफ़सीर का अहल नहीं हूं लेकिन हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी

रह्मतुल्लाहि अलैहि की तफ़सीर को मैंने आसान अल्फ़ाज़ में ताबीर कर दिया है। सारी उम्र यह फ़रमाते रहे, बड़े बड़े उलमा तफ़सीर पर कलाम करते हुए थर्राते रहे।

इमाम मुस्लिम और हदीस की तश्रीह

हज़रत इमाम मुस्लिम रह्मतुल्लाहि अलैहि जिन्होंने "सही मुस्लिम" के नाम से सही हदीसों का एक मज्मूआ जमा फ़रमा दिया है, उस किताब में सही हदीसें तो जमा कर दीं लेकिन हदीस की तश्रीह में एक लफ़्ज़ कहना भी गवारा नहीं किया, यहां तक कि अपनी किताब में "बांब" भी नहीं क़ायम किए, जैसे दूसरे मुहद्दिसीन ने "नमाज़ का बाब, तहारत का बाब" वग़ैरह के उन्वान से बाब क़ायम फ़रमाए हैं। सिर्फ़ इस ख़्याल से बाब क़ायम नहीं फ़रमाए कि कहीं ऐसा न हो कि मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीस की तश्रीह में कोई बात कह दूं, उसमें मुझ से कोई ग़लती हो जाए, फिर अल्लाह तआला के यहां उस पर मेरी पकड़ हो जाए। बस यह फ़रमा दिया कि मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीसें जमा कर रहा हूं। अब उलमा उन हदीसों से जो मसले चाहें निकाल लें। इस से अन्दाज़ा लगाइये कि यह कितना नाज़ुक काम है। लेकिन आजकल जिसका दिल चाहता है दर्स देना शुरू कर देता है। मालूम हुआ कि फ़लां जगह फ़लां साहिब ने दर्से क़ुरआन देना शुरू कर दिया है। फ़लां साहिब ने दर्से हदीस देना शुरू कर दिया। हालांकि न इल्म है और न दर्स देने की शराइत हैं। इसी का नतीजा यह है कि आज तरह तरह के फ़ितने फैल रहे हैं, फ़ितनों का बाज़ार गर्म है।

इसलिये किसी के दर्से क़ुरआन और दर्से हदीस में शरीक होने से पहले इस बात का इत्मीनान कर लेना चाहिए कि जो शख़्स दर्स दे रहा है वह हक़ीक़त में दर्स देने का अहल है या नहीं? उसके पास इल्म मुकम्मल है या नहीं? इसलिये कि दर्स देना हर एक के बस का काम नहीं। बहर हाल, मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि जिस शख़्स के

पास जैसा कि उसका हक़ है इल्म न हो, उसको इज्तिमाई तब्लीग़ और वाज़ व तक़रीर नहीं करनी चाहिए, लेकिन ऐसे शख़्स को इन्फ़िरादी तब्लीग़ में हिस्सा लेना चाहिए।

क्या बे अमल शख़्स वाज़ व नसीहत न करे?

एक यह बात मशहूर है कि अगर कोई शख़्स ख़ुद किसी ग़लती के अन्दर मुब्तला है तो उसको यह हक़ नहीं है कि वह दूसरों को उस ग़लती से रोके। जैसे एक शख़्स नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने का पूरी तरह पाबन्द नहीं है, तो यह कहा जाता है कि ऐसा शख़्स दूसरों को भी जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने की तल्क़ीन न करे, जब तक कि ख़ुद जमाअत की नमाज़ का पाबन्द न हो जाए। यह बात दुरुस्त नहीं। बल्कि हक़ीक़त में बात उल्टी है, वह यह कि जो शख़्स दूसरों को जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने की तल्क़ीन करता है, उसको चाहिए कि वह ख़ुद भी नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने की पाबन्दी करे, न यह कि जो शख़्स नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने का पाबन्द नहीं है वह दूसरों को तल्क़ीन न करे। आम तौर पर लोगों में यह बात मशहूर है कि:

"يٰاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِمَ تَقُوْلُوْنَ مَا لَا تَفْعَلُوْنَ" (سورہ صف:۲)

यानी ऐ ईमान वालो! वह बात क्यों कहते हो जो करते नहीं हो। बाज़ लोग इस आयत का मतलब यह समझते हैं कि अगर कोई शख़्स कोई काम नहीं करता तो वह शख़्स दूसरों को भी उसकी तल्क़ीन न करे। जैसे एक शख़्स सदक़ा नहीं देता तो वह दूसरों को भी सदक़े की तल्क़ीन न करे। आयत का यह मतलब लेना दुरुस्त नहीं। बल्कि इस आयत का मतलब यह है कि जो बात और जो चीज़ तुम्हारे अन्दर मौजूद है, जैसे अगर तुम नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने के पाबन्द नहीं हो तो दूसरों से यह मत कहो कि मैं नमाज़ जमाअत के साथ पढ़ने का पाबन्द हूं। या तुम अगर नेक और मुत्तक़ी नहीं हो तो दूसरों के सामने यह दावा मत करो कि मैं नेक और

मुत्तक़ी हूं। या जैसे तुमने हज नहीं किया तो यह मत कहो कि मैंने हज कर लिया है। इस आयत के मायने यह हैं। यानी जो काम तुम करते नहीं हो, दूसरों के सामने उसका दावा क्यों करते हो? आयत के मायने यह नहीं हैं कि जो काम तुम ख़ुद नहीं करते तो दूसरों को उसकी तल्क़ीन भी मत करो, इसलिये कि कभी कभी दूसरों को कहने से इन्सान को ख़ुद फ़ायदा हो जाता है, जब इन्सान दूसरों को कहता है और ख़ुद अ़मल नहीं करता तो इन्सान को शर्म आती है, और उस शर्म की वजह से इन्सान ख़ुद भी अ़मल करने पर मजबूर हो जाता है।

दूसरों को नसीहत करने वाला ख़ुद भी अ़मल करे

कुरआने करीम की एक दूसरी आयत है, जिसमें अल्लाह तआ़ला ने यहूदी उलमा से ख़िताब करते हुए फ़रमायाः

"أَتَأْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنْسَوْنَ أَنْفُسَكُمْ" (سورہ بقرہ:٤٤)

क्या तुम दूसरों को तो नेकी की तल्क़ीन करते हो और अपने आपको भूल जाते हो, और ख़ुद उस नसीहत पर अ़मल नहीं करते। इसलिये जब तुम दूसरों को किसी अ़मल की नसीहत कर रहे हो तो ख़ुद भी अ़मल करो, न यह कि चूंकि ख़ुद अ़मल नहीं कर रहे हो इसलिये दूसरों को भी नसीहत न करो, यह मतलब नहीं है। बहर हाल, दूसरों को नसीहत करने में इस बात की रुकावट नहीं होनी चाहिए कि मैं ख़ुद इस पर नहीं चल हूं बल्कि बुज़ुर्गों ने तो यह फ़रमाया है किः

मन न कर्दम शुमा हज़र बकुनेद,

मैंने परहेज़ नहीं किया, लेकिन तुम परहेज़ कर लो। हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि कभी कभी जब मुझे अपने अन्दर कोई ऐब महसूस होता है तो मैं उस ऐब के बारे में वाज़ कह देता हूं। उसके ज़रिये अल्लाह तआ़ला मेरी इस्लाह फ़रमा देते हैं।

लेकिन यह बात ज़रूर है कि एक शख़्स वह है जो ख़ुद तो अ़मल नहीं करता, लेकिन दूसरों को नसीहत करता है, और एक आदमी वह है जो ख़ुद भी अ़मल करता है और दूसरों को भी उसकी नसीहत करता है, दोनों की नसीहत की तासीर में फ़र्क़ है, जो शख़्स अ़मल करके नसीहत करता है, अल्लाह तआ़ला उसकी बात में असर पैदा फ़रमा देते हैं। वह बात दिलों में उतर जाती है, उस से इन्सानों की ज़िन्दगियों में इन्क़िलाब आता है। और बे अ़मली के साथ जो नसीहत की जाती है, उसका असर सुनने वालों पर भी पूरी तरह नहीं होता, ज़बान से बात निकलती है और कानों से टकरा कर वापस आ जाती है, दिलों में नहीं उतरती। इसलिये अ़मल की कोशिश ज़रूर करनी चाहिए, मगर यह चीज़ नसीहत की बात कहने से रोक नहीं होनी चाहिए।

मुस्तहब के छोड़ने पर रोक टोक दुरुस्त नहीं

बहर हाल! अगर कोई शख़्स फ़राइज़ और वाजिबात में कोताही कर रहा हो, या किसी खुले गुनाह में मुब्तला हो तो उसको तब्लीग़ करना और 'अम्र बिल मारूफ़' और 'नही अनिल मुन्कर' करना फ़र्ज़ है, जिसकी तफ़सील ऊपर अ़र्ज़ कर दी। शरीअ़त के बाज़ अहकाम ऐसे हैं जो फ़र्ज़ व वाजिब नहीं हैं बल्कि मुस्तहब हैं। मुस्तहब का मतलब यह है कि अगर कोई उसको करेगा तो सवाब मिलेगा, नहीं करेगा तो कोई गुनाह नहीं। या शरीअ़त के आदाब हैं जो उलमा-ए-किराम रहमतुल्लाहि अ़लैहिम बताते हैं। उन मुस्तहब्बात और आदाब के बारे में हुक्म यह है कि लोगों को उनकी तर्ग़ीब तो दी जायेगी कि इस तरह कर लो तो अच्छी बात है, लेकिन उनके न करने पर रोक टोक नहीं की जायेगी। अगर कोई शख़्स उस मुस्तहब को अन्जाम नहीं दे रहा है तो आपके लिए उसको ताना देने या मलामत करने का कोई जवाज़ नहीं कि तुमने यह काम क्यों नहीं किया? हां! अगर कोई तुम्हारा शागिर्द है, या बेटा है, या तुम्हारे ज़ेरे

तर्बियत है, जैसे तुम्हारा मुरीद है तो बेशक उसको कह देना चाहिए कि फ़लां वक़्त में तुमने फ़लां मुस्तहब अ़मल छोड़ दिया था। या फ़लां अदब का लिहाज़ नहीं किया था, उसको करना चाहिए। लेकिन अगर एक आम आदमी कोई मुस्तहब अ़मल छोड़ रहा है तो उस सूरत में आपको उस पर एतिराज़ करने का कोई हक़ नहीं। बाज़ लोग मुस्तहब्बात को वाजिबात का दर्जा देकर लोगों पर एतिराज़ शुरू कर देते हैं कि तुमने यह काम क्यों छोड़ा? हालांकि कियामत के दिन अल्लाह तआ़ला तो यह नहीं पूछेंगे कि तुमने फ़लां मुस्तहब काम क्यों नहीं किया था? न फ़रिश्ते सवाल करेंगे, लेकिन तुम ख़ुदाई फ़ौजदार बन कर एतिराज़ कर देते हो कि यह मुस्तहब काम तुमने क्यों छोड़ दिया? यह अ़मल किसी तरह भी दुरुस्त नहीं।

अज़ान के बाद दुआ़ पढ़ना

जैसे अज़ान के बाद दुआ़ पढ़ना मुस्तहब है:

"اللهم رب هذه الدعوة التامة والصلوة القائمة آت محمدا الوسيلة والفضيلة وابعثه مقاما محمودا الذى وعدته انك لا تخلف الميعاد"

"अल्लाहुम्-म रब्-ब हाज़िहिदअ़्वतित्ताम्मति वस्सलातिल क़ाइ-मति आति मुहम्म-द निल-वसील-त वल फ़ज़ील-त वब्अ़स्हु मक़ामम्-महमू-द निल्लज़ी वअ़त्तहू इन्न-क ला तुख़्लिफुल मीआ़द"

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से इस दुआ़ की तर्ग़ीब है, कि हर मुसलमान को अज़ान के बाद यह दुआ़ पढ़नी चाहिए। यह बड़ी बर्कत की दुआ़ है। इसलिये अपने बच्चों को और अपने घर वालों को इसकी तालीम देनी चाहिए कि यह दुआ़ पढ़ा करें। इसी तरह दूसरे मुसलमानों को भी इस दुआ़ के पढ़ने की तर्ग़ीब देनी चाहिए। लेकिन अगर एक शख़्स ने अज़ान के बाद यह दुआ़ नहीं पढ़ी, अब आप उस पर एतिराज़ शुरू कर दें कि तुमने यह दुआ़ क्यों नहीं पढ़ी? और उस पर नकीर शुरू कर दें, यह दुरुस्त नहीं। इसलिये कि नकीर (रोक टोक और बुरा भला कहना) हमेशा

फ़र्ज़ के छोड़ने पर या गुनाह के करने पर की जाती है, मुस्तहब काम के छोड़ने पर कोई नकीर नहीं हो सकती।

आदाब के छोड़ने पर रोक टोक जायज़ नहीं

बाज़ आमाल ऐसे हैं जो शर्ई एतिबार से मुस्तहब भी नहीं हैं। और कुरआन व हदीस में उनको मुस्तहब क़रार नहीं दिया गया है। लेकिन बाज़ उलमा ने उनको आदाब में शुमार किया है। जैसे बाज़ उलमा ने यह अदब बताया है कि जब खाना खाने के बाद हाथ धोए जायें तो उनको तौलिये या रूमाल वग़ैरह से पोंछा न जाए। इसी तरह यह अदब बताया कि दस्तरख़्वान पर पहले तुम बैठ जाओ, खाना बाद में रखा जाए, अगर खाना पहले लगा दिया, तुम बाद में पहुंचे तो यह खाने के अदब के ख़िलाफ़ है। कुरआन व हदीस में यह आदाब कहीं भी मौजूद नहीं हैं। लेकिन उलमा–ए–किराम ने ये खाने के आदाब बताये हैं, इनको मुस्तहब कहना भी मुश्किल है। अब अगर एक शख़्स ने इन आदाब का लिहाज़ न किया, जैसे उसने खाने के बाद हाथ धोकर तौलिये से पोंछ लिए, या दस्तरख़्वान पर खाना पहले लगा दिया गया और वह शख़्स बाद में जाकर बैठा, तो अब उस शख़्स पर एतिराज़ करना और उसको यह कहना कि तुमने शरीअत के ख़िलाफ़ या सुन्नत के ख़िलाफ़ काम किया, यह बात दुरुस्त नहीं। इसलिये कि ये आदाब न तो शरीअत के एतिबार से सुन्नत हैं और न मुस्तहब हैं। इसलिये इन आदाब के छोड़ने वाले पर एतिराज़ और नकीर करना दुरुस्त नहीं। इन मामलात के अन्दर हमारे समाज में बहुत कोताहियां पाई जाती हैं, और कभी कभी छोटी छोटी बात पर बड़ी नकीर की जाती है जो किसी तरह भी दुरुस्त नहीं।

चार ज़ानूं बैठ कर खाना भी जायज़ है

खाने के वक़्त चार ज़ानूं बैठना भी जायज़ है, ना जायज़ नहीं। इसमें कोई गुनाह नहीं, लेकिन बैठने का यह अन्दाज़ तवाज़ो के इतने

क़रीब नहीं है, जितना दो ज़ानूं बैठ कर खाने या एक टांग खड़ी करके खाने की नशिस्त तवाज़ो के क़रीब है। इसलिये आदत तो इस बात की डालनी चाहिए कि आदमी दो ज़ानूं बैठ कर खाए, या एक टांग खड़ी करके खाए, चार ज़ानूं न बैठे। लेकिन अगर किसी से इस तरह नहीं बैठा जाता, या कोई शख़्स अपने आराम के लिए चार ज़ानूं बैठ कर खाना खाता है तो यह कोई गुनाह नहीं। यह जो लोगों में मशहूर है कि चार ज़ानूं बैठ कर खाना ना जायज़ है, यह ख़्याल दुरुस्त नहीं। इसलिये जब चार ज़ानूं बैठ कर खाना जायज़ है तो इस तरह बैठ कर खाने वाले पर नकीर करना भी दुरुस्त नहीं।

मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना भी जायज़ है

मेज़ कुर्सी पर खाना भी कोई गुनाह और ना जायज़ नहीं। लेकिन ज़मीन पर बैठ कर खाने में सुन्नत की इत्तिबा का सवाब भी है, और सुन्नत से ज़्यादा क़रीब भी है। इसलिये जहां तक हो सके इन्सान को इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि वह ज़मीन पर बैठ कर खाना खाए, इसलिये कि जितना सुन्नत से ज़्यादा क़रीब होगा उतनी ही बर्कत ज़्यादा होगी और उतना ही सवाब ज़्यादा मिलेगा। उतने ही फ़ायदे ज़्यादा हासिल होंगे। बहर हाल! मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना भी जायज़ है, गुनाह नहीं है। इसलिये मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने वाले पर नकीर (रोक टोक करना और बुरा भला कहना) दुरुस्त नहीं।

ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत है

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दो वजह से ज़मीन पर बैठ कर खाना खाते थे, एक तो यह कि उस ज़माने में ज़िन्दगी सादा थी, मेज़ कुर्सी का रिवाज ही नहीं था। इसलिये नीचे बैठा करते थे। दूसरी वजह यह थी कि नीचे बैठ कर खाने में तवाज़ो ज़्यादा है, और खाने की इज़्ज़त भी ज़्यादा है। आप इसका तजुर्बा करके देख लीजिए कि मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने में दिल की कैफ़ियत और

होगी और ज़मीन पर बैठ कर खाने में दिल की कैफ़ियत और होगी। दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क महसूस होगा। इसलिये कि ज़मीन पर बैठ कर खाने की सूरत में तबीयत के अन्दर तवाज़ो ज़्यादा होगी, आजज़ी होगी, मस्कनत होगी, बन्दगी होगी। और मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने की सूरत में ये बातें पैदा नहीं होतीं। इसलिये जहां तक हो सके इस बात की कोशिश करनी चाहिए कि आदमी ज़मीन पर बैठ कर खाना खाए। लेकिन अगर कहीं मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने का मौक़ा आ जाए तो इस तरह खाने में कोई हर्ज और गुनाह नहीं है। इसलिये इस पर इतनी सख़्ती करना भी ठीक नहीं, जैसा कि बाज़ लोग मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाने को हराम और ना जायज़ ही समझते हैं और इस पर बहुत ज़्यादा नकीर करते हैं। यह अमल भी दुरुस्त नहीं।

बशर्ते कि इस सुन्नत का मज़ाक न उड़ाया जाए

और यह जो मैंने कहा कि ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत से ज़्यादा क़रीब है और ज़्यादा अफ़ज़ल है और ज़्यादा सवाब का सबब है, यह भी उस वक़्त है जब इस सुन्नत को "अल्लाह अपनी पनाह में रखे" मज़ाक़ न बनाया जाए। इसलिये अगर किसी जगह पर इस बात का अन्देशा हो कि अगर नीचे ज़मीन पर बैठ कर खाना खाया तो लोग इस सुन्नत का मज़ाक़ उड़ायेंगे तो ऐसी जगह ज़मीन पर खाने की ज़िद करना भी दुरुस्त नहीं।

होटल में ज़मीन पर खाना खाना

हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने एक दिन सबक़ में हमें एक वाक़िआ सुनाया, कि एक दिन मैं और मेरे कुछ दोस्त देवबन्द से दिल्ली पहुंचे तो वहां खाना खाने की ज़रूरत पेश आई, चूंकि कोई और जगह खाने की नहीं थी इसलिए एक होटल में खाने के लिए चले गए। अब ज़ाहिर है कि होटल में मेज़ कुर्सी पर खाने का इन्तिज़ाम होता है, इसलिये हमारे दो साथियों ने कहा कि हम तो

मेज़ कुर्सी पर बैठ कर खाना नहीं खायेंगे, क्योंकि ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत है। चुनांचे उन्होंने यह चाहा कि होटल के अन्दर ज़मीन पर अपना रूमाल बिछा कर वहां बेरे से मंगवाएं। हज़रत वालिद साहिब फ़रमाते हैं कि मैंने उनको मना किया कि ऐसा न करें, बल्कि मेज़ कुर्सी ही पर बैठ कर खाना खा लें। उन्होंने कहा कि हम मेज़ कुर्सी पर क्यों खायें? जब ज़मीन पर बैठ कर खाना सुन्नत के ज़्यादा क़रीब है, तो फिर ज़मीन पर बैठ कर खाने से क्यों डरें और क्यों शरमाएं। हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने फ़रमाया कि शर्माने और डरने की बात नहीं। बात असल में यह है कि जब तुम लोग यहां इस तरह ज़मीन पर अपना रूमाल बिछा कर बैठोगे तो लोगों के सामने इस सुन्नत का तुम मज़ाक़ बनाओगे, और लोग इस सुन्नत की तौहीन के मुर्तकिब होंगे। और सुन्नत की तौहीन का जुर्म करना सिर्फ़ गुनाह ही नहीं बल्कि कभी कभी इन्सान को कुफ़्र तक पहुंचा देता है। अल्लाह तआ़ला बचाए।

एक सबक़ सिखाने वाला वाक़िआ

फिर हज़रत वालिद साहिब ने उनसे फ़रमाया कि मैं तुमको एक क़िस्सा सुनाता हूं, एक बहुत बड़े मुहद्दिस और बुज़ुर्ग गुज़रे हैं, जो "सुलैमान आमश" के नाम से मश्हूर हैं, और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के उस्ताद भी हैं। हदीस की तमाम किताबें उनकी रिवायतों से भरी हुई हैं। अ़र्बी ज़बान में "आमश" चूंधे को कहा जाता है। जिसकी आंखों में चुंधयाहट हो, जिसमें पलकें गिर जाती हैं और रोशनी की वजह से उसकी आंखें ख़ैरा हो जाती हैं। चूंकि उनकी आंखें चुंधाई हुई थीं, इस वजह से "आमश" के लक़ब से मश्हूर थे। उनके पास एक शागिर्द आ गए, वह शागिर्द आरज यानी लंगड़े थे, पांव से माज़ूर थे, शागिर्द भी ऐसे थे जो हर वक़्त उस्ताद से चिम्टे रहने वाले थे। जैसे बाज़ शागिर्दों की आदत होती है कि हर वक़्त उस्ताद से चिम्टे रहते हैं। जहां उस्ताद जा रहे हैं

वहां शागिर्द भी साथ साथ जा रहे हैं, यह भी ऐसे ही थे। चुनांचे इमाम आमश रहमतुल्लाहि अलैहि जब बाज़ार जाते तो यह "लंगड़े" शागिर्द भी साथ हो जाते, बाज़ार में लोग आवाज़ कसते कि देखो उस्ताद "चूंधा" है और शागिर्द "लंगड़ा" चुनांचे इमाम आमश रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपने शागिर्द से फ़रमाया कि जब हम बाज़ार जाया करें तो तुम हमारे साथ मत जाया करो, शागिर्द ने कहा क्यों? मैं आपका साथ क्यों छोड़ दूं? इमाम आमश रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि हम जब बाज़ार जाते हैं तो लोग हमारा मज़ाक़ उड़ाते हैं कि उस्ताद चूंधा है और शागिर्द लंगड़ा है। शागिर्द ने कहा:

"مَالَنَا نُوجَرُ وَيَاثَمُوْنَ"

हज़रत! जो लोग हमारी मज़ाक़ उड़ाते हैं, उनको मज़ाक़ उड़ाने दें। इसलिये कि उस मज़ाक़ उड़ाने के नतीजे में हमें सवाब मिलता है और उनको गुनाह होता है। इसमें हमारा तो कोई नुक़सान नहीं बल्कि फ़ायदा है। हज़रत आमश रहमतुल्लाहि अलैहि ने जवाब में फ़रमाया कि:

"نَسْلَمُ وَيَسْلَمُوْنَ خَيْرًا مِنْ نُوجَرُوَيَاثَمُوْنَ"

अरे भाई! वे भी गुनाह से बच जायें और हम भी गुनाह से बच जाएं, यह बेहतर इस से कि हमें सवाब मिले और उनको गुनाह हो। मेरे साथ जाना कोई फ़र्ज़ व वाजिब तो है नहीं, और न जाने में कोई नुक़सान भी नहीं, लेकिन फ़ायदा यह है कि लोग इस गुनाह से बच जायेंगे। इसलिये आइन्दा मेरे साथ बाज़ार मत जाया करो।

यह है दीन की समझ, अब बज़ाहिर तो शागिर्द की बात सही मालूम हो रही थी कि अगर लोग मज़ाक़ उड़ाते हैं तो उड़ाया करें, लेकिन जिस शख़्स की मख़्लूके ख़ुदा पर शफ़क़त की निगाह होती है, वह मख़्लूक़ की ग़लतियों पर इतनी नज़र नहीं डालता, बल्कि वह यह सोचता है कि जितना हो सके मैं मख़्लूक़ को गुनाह से बचा लूं यह बेहतर है। इसलिये उन्होंने बाज़ार जाना छोड़ दिया। बहर हाल,

जिस जगह यह अन्देशा हो कि लोग और ज़्यादा ढिटाई का मुज़ाहरा करेंगे तो उस सूरत में कुछ न कहना बेहतर होता है।

हज़रत अ़ली रज़ि. का इर्शाद

हज़रत अ़ली रज़ियल्लाहु अ़न्हु का यह इर्शाद याद रखने के लायक़ है, आपने फ़रमायाः

"كَلِّمُوا النَّاسَ بِمَا يَعْرِفُوْنَ، اَتُحِبُّوْنَ اَنْ يُّكَذَّبَ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ"

यानी जब लोगों के सामने दीन की बात कहो तो ऐसे अन्दाज़ से कहो जिस से लोगों के अन्दर बग़ावत पैदा न हो, क्या तुम इस बात को पसन्द करते हो कि अल्लाह और उसके रसूल को झुठलाया जाए? जैसे दीन की कोई बात बे मौक़ा कह दी जिसके नतीजे में झुठलाने की नौबत आ गई, ऐसे मौक़े पर दीन की बात कहना ठीक नहीं।

मौलाना इलियास रह. का एक वाक़िआ़

हज़रत मौलाना इलियास साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की ज़ात से आज कौन मुसलमान ना वाक़िफ़ होगा। अल्लाह तबारक व तआ़ला ने तब्लीग़ और दीन की दावत का जज़्बा आग की तरह उनके सीने में भर दिया था, जहां बैठते बस दीन की बात शुरू कर देते, और दीन का पैग़ाम पहुंचाते। उनका वाक़िआ किसी ने सुनाया कि एक साहिब उनकी ख़िदमत में आया करते थे, काफ़ी दिन तक आते रहे, उन साहिब की दाढ़ी नहीं थी, जब उनको आते हुए काफ़ी दिन हो गए तो हज़रत मौलाना इलियास रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने सोचा कि अब यह मानूस हो गए हैं। चुनांचे एक दिन हज़रत ने उनसे कह दिया कि भाई साहिब हमारा दिल चाहता है कि तुम भी इस दाढ़ी की सुन्नत पर अ़मल कर लो, वह साहिब उनकी यह बात सुन कर कुछ शर्मिन्दा से हो गए और दूसरे दिन से आना छोड़ दिया। जब कई दिन गुज़र गए तो हज़रत मौलाना इलियास साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने लोगों से उनके बारे में पूछा तो लोगों ने बताया कि उन्होंने

आना छोड़ दिया है। हज़रत मौलाना इलियास साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि को बहुत अफ़सोस हुआ, और लोगों से फ़रमाया कि मुझ से बड़ी सख़्त ग़लती हो गई कि मैंने कच्चे तवे पर रोटी डाल दी, यानी अभी तवा गर्म भी नहीं हुआ था, और इस क़ाबिल नहीं हुआ था कि उस पर रोटी डाली जाए, मैंने पहले ही रोटी डाल दी, इसका नतीजा यह हुआ कि उन साहिब ने आना ही छोड़ दिया। अगर वह आते रहते तो कम से कम दीन की बातें कान में पड़ती रहतीं। और इसका फ़ायदा होता। अब एक ज़ाहिरी नज़र वाला आदमी तो यह कहेगा कि अगर एक शख़्स ग़लत काम के अन्दर मुब्तला है तो उस से ज़बान से कह दो, इसलिये कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इर्शाद है कि अगर हाथ से बुराई को नहीं रोक सकते तो कम से कम ज़बान से कह दो, लेकिन आपने देखा कि ज़बान से कहना उल्टा नुक़सान देह हो गया। क्योंकि अभी तक ज़ेहन उसके लिए साज़गार और तैयार नहीं था। ये बातें हिक्मत की होती हैं, कि किस वक़्त क्या बात कहनी है, और किस अन्दाज़ से कहनी है, और कितनी बात कहनी है। दीन की बात कोई पत्थर नहीं है कि उसको उठा कर फेंक दिया जाए, या ऐसा फ़रीज़ा नहीं है कि उसको सर से टाल दिया जाए, बल्कि यह देखो कि इस बात के कहने से क्या नतीजा निकलेगा? इसका नतीजा ख़राब तो नहीं होगा? अगर बात कहने से ख़राब और बुरा नतीजा निकलने का अन्देशा हो तो उस वक़्त दीन की बात कहने से रुक जाना चाहिए, उस वक़्त बात नहीं कहनी चाहिए। यह बात भी ताक़त न होने में दाख़िल है।

ख़ुलासा

बहर हाल! यह बात कि किस मौक़े पर क्या अमल का तरीक़ा इख़्तियार किया जाए? किस मौक़े पर सख़्ती करे? और किस मौक़े पर नर्मी करे? यह बात सोहबत के बग़ैर सिर्फ़ किताबें पढ़ने से हासिल नहीं हो सकती? जब तक किसी अल्लाह वाले मुत्तक़ी बुज़ुर्ग के साथ रह कर इन्सान ने रगड़े न खाए हों। इसलिये दूसरा इन्सान

जब कोई ग़लती करे तो उसको ज़रूर टोकना और बताना तो चाहिए लेकिन इसका लिहाज़ रखना और जानना ज़रूरी है कि किस मौक़े पर टोकना फ़र्ज़ है और किस मौक़े पर फ़र्ज़ नहीं? और किस मौक़े पर किस तरह बात करनी चाहिए? यह सारे तब्लीग़ व दावत के अहकाम का ख़ुलासा है। अल्लाह तआला हमें इसकी सही समझ अता फ़रमाए, और इसके ज़रिये हमारी और सब मुसलमान बहन भाइयों की इस्लाह फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

राहत

किस तरह हासिल हो?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی هريرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: انظروا الی من هو اسفل منکم، ولا تنظروا الی من هو فوقکم، فهواجدران لا تزدروا نعمة الله عليکم" (مسلم شريف)

अपने से कमतर लोगों को देखो

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः तुम उन लोगों की तरफ़ देखो जो तुम से दुनियावी साज़ व सामान के एतिबार से कम हैं। (जिनके पास दुनिया का माल व दौलत और दुनिया का साज़ व सामान इतना नहीं है जितना तुम्हारे पास है। तुम उनकी तरफ देखो) और उन लोगों की तरफ़ मत देखो जो माल व दौलत में और साज़ व सामान के एतिबार से तुम से ज़्यादा हैं। उसके नतीजे में तुम्हारे दिल में अल्लाह की नेमत की बे वक़अ़ती और नाक़द्री पैदा नहीं होगी। (इसलिये कि अगर तुम अपने से ऊंचे आदमी को देखते रहोगे तो फिर हर वक़्त अल्लाह तआला की नेमतों को नाक़द्री की निगाह से देखोगे, और तुम्हारे दिल में उसकी बे वक़अ़ती पैदा होगी, और तुम परेशान रहोगे।)

दुनिया की मुहब्बत दिल से निकाल दो

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दुनिया की मुहब्बत दिल से निकालने का और दुनिया के अन्दर हक़ीक़ी राहत हासिल करने का नुस्ख़ा-ए-अक्सीर बयान फ़रमाया है। जैसा कि पहले अर्ज़ किया था कि आदमी के पास दुनिया तो हो, लेकिन दुनिया की मुहब्बत दिल में न हो। आदमी के पास दुनिया का होना इसलिये ज़रूरी है कि उसके बग़ैर गुज़ारा नहीं। अगर इन्सान के पास खाने पीने की चीज़ें न हों, रहने के लिए मकान न हो, पहनने के लिए कपड़े न हों तो फिर इन्सान कैसे ज़िन्दा रहेगा? इसलिये इन चीज़ों की ज़रूरत है, लेकिन इन चीज़ों को अपना ज़िन्दगी का मक़सद न बनाए, और इन चीज़ों को अपना आख़री मर्कज़े नज़र न बनाए, और सुबह व शाम हर वक़्त इसकी धुन में न रहे, और दिल में उनकी मुहब्बत पैदा न करे। और यह बात "क़नाअत" के ज़रिये पैदा होती है। जब इन्सान के अन्दर "क़नाअत" की सिफ़त पैदा हो जाती है तो फिर उसके पास दुनिया होती हैं लेकिन उसकी मुहब्बत दिल में नहीं होती। इसलिये जब इन्सान के दिल में दुनिया की मुहब्बत होती है तो हर वक़्त इन्सान इस फ़िक्र में रहता है कि यह चीज़ नहीं मिली, वह मिल जाए। फ़लां चीज़ की कमी है वह मिल जाए, कल इतने पैसे कमाए थे, आज उस से डबल कमा लूं। सुबह से लेकर शाम तक बस इसी फ़िक्र और धुन में मगन रहता है। बस इसी का नाम दुनिया की मुहब्बत है। इस मुहब्बत के नतीजे में लाज़मी तौर पर हिर्स पैदा हो जाती है।

"क़नाअत" हासिल करने का ला जवाब नुस्ख़ा

एक हदीसे क़ुदसी में अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया कि "अगर इब्ने आदम को एक वादी सोने की भरी मिल जाए तो वह चाहेगा कि मुझे एक वादी और मिल जाए। जब दो मिल जायेंगी तो फिर यह चाहेगा कि मुझे एक वादी और मिल जाए, फिर फ़रमायाः

"لا يملأ جوف ابن آدم الا التراب" (بخاری شریف)

आदमी का पेट सिवाए क़ब्र की मट्टी के और कोई चीज़ नहीं भरेगी। जब वह दुनिया से रुख़्सत होगा और उसको क़ब्र में दफ़न किया जायेगा तब उसका पेट भरेगा। और दुनिया में माल व दौलत जमा करने के लिए जो भाग दौड़ और मेहनत कर रहा था वह सारी मेहनत धरी रह जायेगी और सब माल व दौलत यहां छोड़ कर ख़ाली हाथ दुनिया से रुख़्सत हो जायेगा। लेकिन अगर अल्लाह तआ़ला किसी बन्दे को "क़नाअ़त" अ़ता फ़रमा दें तो यह एक ऐसी चीज़ है जो इन्सान का पेट भर देती है, और इस "क़नाअ़त" को हासिल करने का नुस्ख़ा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हदीस में बयान फ़रमाया। अगर तुम दुनिया और आख़िरत की फ़लाह चाहते हो तो इस नुस्ख़े पर अ़मल कर लो और फ़लाह नहीं चाहते हो तो अ़मल मत करो, लेकिन फिर सारी उम्र बेचैनी और परेशानी का शिकार रहोगे। वह नुस्ख़ा यह है कि दुनियावी माल व दौलत के एतिबार से अपने से ऊंचे को मत देखो, वर्ना यह ख़्याल आयेगा कि उसको फ़लां चीज़ मिल गई है मुझे वह चीज़ नहीं मिली। बल्कि अपने से कमतर आदमी को देखो कि उसके पास दुनिया के अस्बाब क्या हैं, और तुम्हें उसके मुक़ाबले में कितना ज़्यादा मिला हुआ है। उस वक़्त अल्लाह का शुक्र अदा करोगे कि अल्लाह तआ़ला ने मुझे जो सामान और राहत अ़ता फ़रमाई है वह उसको हासिल नहीं। और अगर अपने से ऊंचे को देखोगे तो दिल में "हिर्स" पैदा होगी। फिर मुक़ाबला और दौड़ पैदा होगी और उसके नतीजे में दिल के अन्दर "हसद" पैदा होगा कि वह आगे निकल गया, मैं पीछे रह गया। फिर "हसद" के नतीजे में "बुग्ज़" पैदा होगा। फिर "दुश्मनी" पैदा होगी। ताल्लुक़ात ख़राब होंगे। अल्लाह तआ़ला के हुक़ूक़ भी ज़ाया होंगे और अल्लाह तआ़ला के बन्दों के हुक़ूक़ भी ज़ाया होंगे। और अगर क़नाअ़त हासिल हो गई और यह सोचा कि अल्लाह तआ़ला का शुक्र है कि मुझे इज़्ज़त के साथ रिज़्क़ मिल रहा है। यह अल्लाह तआ़ला

का इनाम है। बहुत से लोग इस से महरूम हैं। अल्हम्दु लिल्लाह मैं इस नेमत पर ख़ुश हूं। पस इस पर अल्लाह तआ़ला क़नाअ़त अ़ता फ़रमायेंगे। इसका नतीजा यह होगा कि सुकून में आ जाओगे, बस इसके अलावा सुकून का कोई रास्ता नहीं है।

दुनिया की ख़्वाहिशात ख़त्म होने वाली नहीं

जहां तक इस दुनिया का ताल्लुक़ है तो यह दुनिया ऐसी चीज़ है कि इस रूए ज़मीन पर कभी कोई इन्सान ऐसा पैदा नहीं हुआ जो यह कह दे कि मेरी सारी ख़्वाहिशात पूरी हो गयीं। इसलिये कि ख़्वाहिशात की कोई इन्तिहा नहीं। कोई हद नहीं। अगर क़ारून का ख़ज़ाना भी मिल जाए तब भी ख़्वाहिशात पूरी नहीं होंगी। दुनिया की ख़्वाहिशात ऐसी हैं कि इसकी एक कड़ी दूसरी कड़ी से मिली हुई है। अ़र्बी का एक शायर "मुतनब्बी" गुज़रा है। वह कभी कभी बहुत समझदारी के शेर कहता था। उसने दुनिया के बारे में एक बड़ी सच्ची बात कही है कि:

"وَمَا قَضٰى اَحَدٌ مِنْهَا لُبَانَتَهٗ وَمَا انْتَهٰى اَرَبٌ اِلَّا اِلٰى اَرَبٖ

यानी दुनिया का यह हाल है कि आज तक एक शख़्स भी ऐसा नहीं गुज़रा जिसने इस दुनिया की सारी लज़्ज़तों और राहतों और ख़्वाहिशात को पूरा हासिल कर लिया हो, बल्कि इस दुनिया का हाल यह है कि अभी एक ख़्वाहिश पूरी नहीं होती है कि दूसरी ख़्वाहिश उभर आती है।

कारे दुनिया कसे तमाम न कर्द

जैसे एक शख़्स बे रोज़गार है। उसकी ख़्वाहिश भी है और ज़रूरत भी है कि मुझे रोज़गार मिल जाए। चुनांचे उसको एक रोज़गार की जगह मिल गई। अब उसके मिलते ही फ़ौरन यह ख़्वाहिश होगी कि दूसरे लोगों की तन्ख़्वाह तो मुझ से ज़्यादा है, वे ज़्यादा कमा रहे हैं। मैं उन तक पहुंच जाऊं। चुनांचे उन तक पहुंच गए। जब आगे पहुंचा तो और ऊपर के लोग नज़र आए कि वे तो

मुझ से ज़्यादा कमा रहे हैं। अब ख़्वाहिश यह हो रही है कि उन तक पहुंच जाऊं। इस इन्सान की पूरी ज़िन्दगी इसी दौड़ धूप में गुज़र जायेगी, लेकिन किसी जगह पर चैन से बैठना नसीब न होगा। आज हर शख़्स की ज़िन्दगी में यह चीज़ नज़र आयेगीः

"कारे दुनिया कसे तमाम न कर्द"

यानी किसी ने आज तक दुनियावी काम पूरा नहीं किया। हां! उस शख़्स ने पूरा किया जिसने इस दुनिया की हक़ीक़त को समझ लिया। यानी अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम और उनके वारिस जो इस दुनिया की हक़ीक़त को समझते हैं कि यह दुनिया चन्द दिन की है, और इस दुनिया में सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक़ ही कमाना है। इस दुनिया में बहुत ज़्यादा अस्बाब व सामान जमा करने और ऐश व आराम की फ़िक्र ज़्यादा नहीं करनी। अगर अल्लाह तआ़ला महज़ अपनी रहमत से दुनिया के माल व अस्बाब अ़ता फ़रमा दें तो यह उसकी नेमत है। लेकिन अपनी तरफ़ से उसको हासिल करने की ज़्यादा फ़िक्र नहीं करनी। ये हज़रात ऊपर के बजाए नीचे की तरफ़ देखते हैं।

दीन के मामलात में ऊपर वाले को देखो

एक और हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इर्शाद इस तरह आया है कि "दुनिया के साज़ व सामान के अन्दर तुम अपने से नीचे वाले को देखो कि फ़लां को दुनिया की यह नेमत नहीं मिली, तुमको मिली हुई है, और उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करो और अपने से ऊपर वाले की तरफ़ मत देखो। और दीन के मामलात में अपने से ऊपर वाले को देखो कि फ़लां शख़्स दीन का कितना काम कर रहा है। मैं अब तक वहां नहीं पहुंचा। ताकि तुम्हारे अन्दर दीन के कामों में आगे बढ़ने और तरक़्क़ी करने का रुझान पैदा हो। तुम्हारा दीन भी दुरुस्त होगा और तुम्हारी दुनिया भी दुरुस्त होगी। यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम का बताया हुआ हकीमाना नुस्ख़ा है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रह. का एक वाक़िआ़

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रहमतुल्लाहि अ़लैहि जो बहुत ऊंचे दर्जे के फ़क़ीह मुहद्दिस बुज़ुर्ग और सूफ़ी थे। इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के ज़माने के हैं, और उनके शागिर्दों में से हैं। शुरू में बहुत मालदार, दौलत मन्द और बहुत आज़ाद क़िस्म के थे। ज़मीनें और जायदादें थीं, बाग़ात वग़ैरह थे, न इल्म से कोई ताल्लुक़ न दीन से कोई ताल्लुक़। पीने पिलाने वाले और गाने बजाने वाले थे। उनके सेब के बाग़ात थे। एक मर्तबा जब सेब पकने का मौसम आया तो उन्होंने अपने दोस्तों के साथ उसी बाग़ में डेरा डाल लिया और वहीं मुक़ीम हो गए, ताकि वहां ताज़ा ताज़ा सेब तोड़ कर खायेंगे और तफ़रीह करेंगे। अब वहां खाने पक रहे हैं, सेब खाए जा रहे हैं और शराब व कबाब का दौर भी चल रहा है। एक बार खाने पीने के बाद मौसीक़ी का प्रोग्राम हुआ, हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक ख़ुद भी बेहतरीन साज़ बजाने वाले थे। चुनांचे अब खाना खाया हुआ, बाग़ का बेहतरीन माहौल, दोस्तों की बेहतरीन महफ़िल, शराब पी हुई, उसका नशा चढ़ा हुआ, हाथ में सितार है, उसको बजा रहे हैं। सितार बजाते बजाते सो गए और आंख लग गई। जब आंख खुली तो देखा कि हाथ में सितार है। चुनांचे बेदार होने पर फिर सितार बजाना शुरू कर दिया। लेकिन सितार बजता नहीं है। उसमें से आवाज़ नहीं निकलती। चुनांचे उसके तारों को देखा और ठीक किया। दोबारा बजाने की कोशिश की, फिर भी आवाज़ नहीं आई। तीसरी मर्तबा जब ठीक करके बजाने की कोशिश की तो अब उसके अन्दर से मौसीक़ी की आवाज़ आने के बजाए क़ुरआने करीम की एक आयत की आवाज़ आ रही है, वह आयत यह थी कि:

"اَلَمْ يَاْنِ لِلَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَنْ تَخْشَعَ قُلُوْبُهُمْ لِذِكْرِ اللّٰهِ وَمَا نَزَلَ مِنَ الْحَقِّ" (سورة الحديد:١٦)

यानी क्या अब भी ईमान वालों के लिए वक़्त नहीं आया कि

उनके दिल अल्लाह की याद में पसीज जाएं और अल्लाह ने जो हक़ की बात नाज़िल की है उसके आगे उनके दिल नर्म हो जाएं। क्या अब भी इसका वक़्त नहीं आया? यह आवाज़ उस सितार से आ रही थी। बहर हाल! अल्लाह तआला जिस किसी बन्दे को अपनी तरफ़ खींचना चाहते हैं तो ऐसे ग़ैबी सामान भी पैदा फ़रमा देते हैं। जब सितार से यह आवाज़ सुनी, बस उसी वक़्त दिल की दुनिया बदल गई और ज़बान से इस आयत का जवाब दिया कि:

"بلی یارب قدآن"

ऐ अल्लाह! वह वक़्त आ गया। उसी वक़्त गाने बजाने और शराब कबाब से तौबा की और फिर दिल में इल्म हासिल करने का तक़ाज़ा और जज़्बा पदा हुआ और इल्म हासिल करना शुरू किया और इतने बड़े आलिम बने कि हदीस में बहुत ऊंचे दर्जे के इमाम बन गए। इमाम अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अलैहि की शागिर्दी का शर्फ़ हासिल किया। और अब उनका क़ौल हदीस के अन्दर भी हुज्जत का दर्जा रखता है और फ़िक़ा के अन्दर भी हुज्जत है, और सूफ़िया-ए-किराम के भी बड़े इमाम बन गए।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह. का बुलन्द मक़ाम

उन्हीं का वाक़िआ है कि एक मर्तबा हारून रशीद बग़दाद में अपने महल के बुर्ज में अपनी बीवी के साथ बैठा हुआ था। शाम का वक़्त था, हारून रशीद ने शहर पनाह के बाहर से बहुत ज़बरदस्त शोर सुना। बादशाह को ख़तरा हुआ कि कहीं दुश्मन ने तो शहर पर हमला नहीं कर दिया। उसने जल्दी से आदमी भेजा कि जाकर मालूम करे कि यह कैसा शोर है। चुनांचे वह गया और मालूम करके जब वापस आया तो उसने बताया कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रह्मतुल्लाहि अलैहि आज इस शहर में तश्रीफ़ लाने वाले थे और लोग उनके स्वागत के लिए शहर से बाहर निकले हुए थे, जब वह

तशरीफ़ लाये तो उन्हें वहां पर छींक आ गई। उस छींक पर उन्होंने "अल्हम्दु लिल्लाह" कहा और स्वागत करने वालों ने उसके जवाब में "यर्हमुकल्लाह" कहा, यह उसका शोर था। जब हारून रशीद की बीवी ने यह सूरते हाल सुनी तो हारून रशीद से कहाः हारून! तुम यह समझते हो कि तुम बड़े बादशाह हो और आधी दुनिया पर तुम्हारी हुकूमत है, लेकिन सच्ची बात यह है कि बादशाहत तो इन लोगों का हक़ है और हक़ीक़त में तो ये लोग बादशाह हैं, जो लोगों के दिलों पर हुकूमत कर रहे हैं। कोई पुलिस उनको यहां खींच कर नहीं लाई बल्कि यह सिर्फ़ हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रह्मतुल्लाहि अ़लैहि की मुहब्बत है जिसने इतने सारे लोगों को यहां जमा कर दिया। बहर हाल! बाद में अल्लाह तआ़ला ने उनको यह मक़ाम अ़ता फ़रमाया।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रह. का राहत हासिल करना

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि मेरे ऊपर एक वक़्त गुज़रा है कि मैं बड़े बड़े मालदारों के साथ उठता बैठता था, और हर वक़्त उन्हीं के साथ रहता था, उनके साथ खाता पीता था। लेकिन उस ज़माने में मेरा यह हाल था कि शायद मुझ से ज़्यादा कोई रंज और तक्लीफ़ में नहीं था। इसलिये कि मैं जिस दोस्त के पास जाता तो यह देखता कि उसका घर मेरे घर से अच्छा है, और मैं अपनी सवारी पर बड़ा ख़ुश होता कि मेरी सवारी बड़ी अच्छी है लेकिन जब किसी दोस्त के पास जाता तो यह देखता कि उसकी सवारी तो मेरी सवारी से भी आगे बढ़ी हुई है, और वह बहुत आला और उम्दा है, और बाज़ार से अपने लिए आला से आला शानदार लिबास ख़रीद कर लाया और वह लिबास पहन कर जब दोस्त से मिलने गया तो मैंने देखा कि उसने तो मुझ से भी अच्छा लिबास पहना हुआ है। इसलिये जहां भी जाता हूं तो अपने सामान से

अच्छा सामान नज़र आता है। किसी का मकान अच्छा है, किसी के कपड़े अच्छे हैं, किसी की सवारी अच्छी है। फिर बाद में मैंने ऐसे लोगों के साथ उठना बैठना शुरू कर दिया जो ज़्यादा मालदार नहीं थे, बल्कि मामूली किस्म के लोग थे। इसका नतीज़ा यह हुआ कि मुझे राहत और आराम हासिल हो गया। इसलिये कि अब मैं जिसके पास भी मुलाक़ात के लिए जाता हूं और उसके हालात देखता हूं और उसके मुक़ाबले में अपनी हालत देखता हूं तो यह नज़र आता है कि मेरा मकान उसके मकान से अच्छा है, और मेरी सवारी उसकी सवारी से अच्छी है, मेरा लिबास उसके लिबास से अच्छा है, और अल्लाह तआला का शुक्र अदा करता हूं कि या अल्लाह आपने इस से बेहतर अ़ता फ़रमाया। यह है "क़नाअ़त" अगर यह क़नाअ़त हासिल न हो, फिर न सिर्फ़ यह कि इन्सान सारी उम्र दुनिया हासिल करने की दौड़ में मुब्तला रहेगा बल्कि राहत भी नसीब नहीं होगी।

"राहत" अल्लाह तआ़ला की अ़ता है

इसलिये कि "राहत" इस पैसे और इस दौलत का नाम नहीं, बल्कि "राहत" तो एक दिली कैफ़ियत का नाम है जो महज़ अल्लाह जल्ल जलालुहू की अ़ता होती है। कोठी और बंगले खड़े कर लो, नौकर चाकर जमा कर लो, दरवाज़े पर लम्बी लम्बी गाड़ियां खड़ी कर लो, ये सब चीज़ें जमा कर लो, इसके बावजूद यह हाल है कि रात को जब बिस्तर पर लेटते हैं तो नींद नहीं आती, हालांकि आला दर्जे का बिस्तर लगा हुआ है, आला दर्जे की मसहरी है, शानदार किस्म के गद्दे और तकिये लगे हुए हैं, सारी रात करवटें बदलते गुज़र रही है। नींद की गोलियां खा खाकर नींद लाई जा रही है। वे गोलियां भी एक हद तक काम देती हैं, उसके बाद वे भी जवाब दे जाती हैं। देखिए राहत के सामान सब मौजूद हैं। बंगले हैं, गाड़ी है, रुपया पैसा है, एयर कन्डीशन कमरा है, आराम देह बिस्तर है लेकिन रात की बेचैनी को दूर करने में कोई चीज़ कारामद नहीं। वे अस्बाब बेचैनी दूर नहीं कर सकते, बल्कि अल्लाह जल्ल शानुहू ही उस

बेचैनी को दूर कर सकते हैं। दूसरी तरफ़ एक मज़दूर है जिसके पास न डबल बेड है, न उसके पास एयर कन्डीशन कमरा है, न उसके पास ऐसे गर्म गद्दे और तकिए हैं, लेकिन रात को बिस्तर पर सोता है तो सुबह के वक़्त आठ घन्टे की भर पूर नींद लेकर उठता है। आप ख़ुद फ़ैसला करें कि इस मज़दूर को राहत हासिल है या उस मालदार को राहत हासिल है? याद रखिए! "राहत" अल्लाह तबारक व तआला की अ़ता है। राहत के अस्बाब पर "राहत" हासिल होना ज़रूरी नहीं। "राहत" और चीज़ है "रहात के अस्बाब" और चीज़ हैं।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

मुझे याद है कि जब मैंने अपने घर में एयर कन्डीशंज़ लगाना चाहा तो सब से पहले तो उसकी ख़रीदारी में यह अच्छी ख़ासी बड़ी रक़म ख़ुर्च हुई, जब किसी तरह उसको ख़रीद लिया तो फिर पता चला कि बिजली की वायरिंग इस क़ाबिल नहीं है कि वह उसका बोझ उठा सके। इसलिये उसके लिए नई वायरिंग होगी और उसमें इतने पैसे ख़र्च होंगे। चुनांचे पैसे ख़र्च करके नई वायरिंग करा ली, फिर पता चला कि वोलटेज इतना कम है कि वह उसको नहीं चला सकता। उसके लिए स्टेपलाईज़र की ज़रूरत है। चुनांचे वह भी ख़रीद कर लगा लिया। लेकिन फिर भी वह न चला और यह पता चला कि यहां पर बिजली का पॉवर और ज़्यादा कम है। उसके लिए फ़लां पॉवर का स्टेपलाईज़र की ज़रूरत है। तक़रीबन छह महीने इस उधेड़ बुन में गुज़र गए और मुझे मुतनब्बी का यह शेर बार बार याद आता रहा कि:

"وما انتهى ارب الا الى ارب"

यानी दुनिया की कोई ज़रूरत ऐसी नहीं है कि उसके पूरा होने के बाद दूसरी नई ज़रूरत सामने न आ जाए। पैसे भी ख़र्च कर लिए, भाग दौड़ भी कर ली, लेकिन वह "राहत" हासिल नहीं हो रही है। इसलिये कि यह "राहत" यह आराम यह सुकून अल्लाह जल्ल

जलालुहू की अता है। यह पैसों से नहीं ख़रीदा जा सकता।

याद रखिए! जब तक इन्सान के अन्दर "क़नाअत" पैदा न हो, और जब तक इन्सान अल्लाह तआला की नेमतों पर शुक्र करने का आदी न बन जाए, उस वक़्त तक कभी राहत और सुकून हासिल नहीं हो सकता। चाहे उसके लिए कितने ही पैसे ख़र्च कर डालो, और कितना ही साज़ व सामान जमा कर लो, बल्कि उसके हासिल करने का तरीक़ा वह है जो मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें बताया, वह यह कि हमेशा अपने से नीचे वाले को देखो। अपने से ऊपर वाले को मत देखो। और फिर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करो।

ऊपर की तरफ़ देखने के बुरे परिणाम

इस तरीक़े पर अमल करने में यह फ़ायदा होगा कि इसके ज़रिये क़नाअत पैदा होगी। लेकिन अगर इस पर अमल नहीं करोगे, बल्कि अपने से ऊपर वाले को देखते रहोगे तो हमेशा रंज और सदमे में रहोगे और यह रंज और सदमा किसी न किसी वक़्त "हसद" में तब्दील हो जायेगा। इसलिये कि जब दिल में दुनिया की हिर्स पैदा हो गई और किसी को अपने से आगे बढ़ता हुआ देख लिया तो फिर यह मुम्किन नहीं है कि "हसद" पैदा न हो। क्योंकि "दुनिया की हिर्स" का लाज़मी ख़ास्सा यह है कि उस से "हसद" पैदा होगा कि यह मुझ से आगे बढ़ गया, और मैं पीछे रह गया। और फिर "हसद" के नतीजे में "बुग्ज़" "इख़्तिलाफ़" "अदावतें और दुश्मनियां" पैदा होंगी। आज समाज के अन्दर देख लें कि ये सब चीज़ें किस तरह समाज के अन्दर फैली हुई हैं। और जब यह दौड़ लगी हुई है कि मुझे दूसरों से आगे बढ़ना है तो इसके नतीजे में लाज़मी तौर पर इन्सान के अन्दर यह बात पैदा होगी कि वह हलाल व हराम की फ़िक्र छोड़ देगा। इसलिये कि जब उसने तय कर लिया कि मुझे यह चीज़ हर क़ीमत पर हासिल करनी है, तो अब वह चीज़ चाहे हलाल

तरीके से हासिल हो या हराम तरीके से हासिल हो। उसको इसकी कोई परवाह नहीं होगी। चुनांचे उसके हासिल करने के लिए फिर वह रिश्वत भी लेगा, धोखेबाज़ी वह करेगा, मिलावट भी करेगा, सारे बुरे काम वह करेगा। इसलिये कि उसको तो फ़लां चीज़ हासिल करनी है। यह सब "क़नाअ़त" इख़्तियार न करने का नतीजा है। इसलिये हुज़ूर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि "क़नाअ़त" इख़्तियार करो और अपने से नीचे वाले को देखो।

हिर्स और हसद का एक इलाज

एक और हदीस में इस बात को दूसरे अल्फ़ाज़ में बयान फ़रमाया कि:

"اذا نظر احدكم الى من فضل عليه في المال والخلق فلينظر الى من هو اسفل منه ممن فضل عليه" (مسلم شريف)

पिछली हदीस में तो यह बयान फ़रमाया था कि अपने से ऊंचे आदमी की तरफ़ मत देखो, यानी बाक़ायदा सोच विचार करके उसकी तरफ़ नज़र मत करो। लेकिन ज़ाहिर है कि जब इन्सान इस दुनिया के अन्दर रह रहा है तो ऐसा नहीं हो सकता कि अपने से ज़्यादा दौलत मन्द पर नज़र ही न पड़े, बल्कि उसके साथ उठना बैठना भी होगा, उसको देखेगा भी, उसके साथ मेल मिलाप भी होगा। इसलिये जब कभी ऐसा हो कि तुम ऐसे शख़्स को देखो जो तुम से माल में ज़्यादा है, या जिस्म की बनावट में ज़्यादा हो। जैसे वह ख़ूबसूरत है, ज़्यादा ताक़तवर है, तुम से ज़्यादा तन्दुरुस्त है। उस वक़्त तुम फ़ौरन ऐसे शख़्स को देखो और उसका तसव्वुर करो जो तुम से माल व दौलत में और राहत व आराम में और जिस्म की ख़ूबसूरती और तन्दुरुस्ती में तुम से कमतर हो, ताकि पहले वाले शख़्स को देख कर तुम्हारे दिल में जो हसरत पैदा हुई है वह हसरत किसी वक़्त हिर्स और हसद में तब्दील हो सकती है। इसलिये दिल

में उस "हसरत" को बाक़ी न रहने दो, बल्कि अपने से नीचे वाले को देख लो। इसके नतीजे में इन्शा अल्लाह उस "हसरत" का ख़ात्मा हो जायेगा, और फिर वह "हिर्स और हसद" पैदा नहीं होगा।

वह शख़्स बर्बाद हो गया

एक और हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"تعس عبد الدينار والدرهم والقطيفة الخميصة، ان اعطى رضى وان لم يعط لم يرض"

फ़रमाया कि वह शख़्स बर्बाद हो गया जो दिर्हम और दीनार का ग़ुलाम है। "दीनार" एक सोने का सिक्का होता था जिसको "अशरफ़ी" कहते हैं और "दिर्हम" चांदी का सिक्का होता था। यानी जो शख़्स पैसों का ग़ुलाम है और अच्छे अच्छे कपड़ों और अच्छी अच्छी चादरों का ग़ुलाम है, वह शख़्स बर्बाद हो गया। और ग़ुलाम होने का मतलब यह है कि दिन रात उसको यही फ़िक्र लगी हुई है कि पैसा किस तरह आ जाए और मुझे किस तरह अच्छे से अच्छा कपड़ा और अच्छा साज़ व सामान हासिल हो जाए। जो शख़्स इस फ़िक्र में मुब्तला है वह उसका ग़ुलाम है। इसलिये कि यह फ़िक्र उसके ऊपर इतनी ग़ालिब आ चुकी है कि वह अल्लाह तआ़ला के अहकाम को भूल गया है। ऐसा शख़्स हलाक और बर्बाद है। उसका हाल यह है कि अगर उसको कोई चीज़ दे दी जायेगी तो वह ख़ुश हो जायेगा और अगर नहीं दी जायेगी तो उस सूरत में राज़ी नहीं होगा। बख़िलाफ़ उस शख़्स के जो "क़नाअ़त पसन्द" है और अल्लाह जल्ल शानुहू की अ़ता पर राज़ी है। उसका हाल यह होता है कि जायज़ तरीक़ों से, जायज़ हदों में अपनी कोशिश करने के बाद जितना मिल गया उस पर अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करता है, और जो नहीं मिला, उस पर उसके दिल में कोई गिला और शिकवा पैदा नहीं होता कि फ़लां को इतना मिल गया मुझे क्यों नहीं मिला।

बहर हाल! ये तमाम हदीसें यह बयान कर रही हैं कि दुनिया के साज़ व सामान से दिल न लगाओ। चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा–ए–किराम के दिल में एक मर्तबा यह बात बिठा दी कि यह दुनिया बेवक़्अत और बे हक़ीक़त है, और इसका साज़ व सामान ऐसी चीज़ नहीं है कि आदमी दिन रात उसकी फ़िक्र में लगा रहे और परेशान रहे, बल्कि ज़रूरत के मुताबिक़ उसको इख़्तियार करना चाहिए।

असहाबे सुफ़्फ़ा कौन थे?

चुनांचे एक हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं किः

"لقد رايت سبعين من اهل الصفة، مامنهم رجل عليه رداء، اما ازار اما كساء، قد ربطوا فى اعناقهم، فمنها ما يبلغ نصف الساقين، ومنها ما يبلغ الكعبين، فيجمعه بيده كراهية ان ترى عورته"

इस हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु "असहाबे सुफ़्फ़ा" का हाल बयान फ़रमा रहे हैं। वे सहाबा–ए–किराम जो अपना सारा काम छोड़ कर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में दीन का इल्म हासिल करने की ग़र्ज़ से आ पड़े थे। उनको "असहबे सुफ़्फ़ा" कहा जाता है। जिन हज़रात को मदीना मुनव्वरा में हाज़री की सआदत हासिल हुई है उन्होंने देखा होगा कि "मस्जिदे नबवी" में एक चबूतरा है जिसको "सुफ़्फ़ा" कहा जाता है। उसी चबूतरे पर दिन रात ये असहाबे सुफ़्फ़ा रहते थे। यही उनका मदरसा था, यही उनकी दर्स गाह थी, यही उनकी यूनिवर्सिटी थी, जिसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनको तालीम देते थे। तालीम का कोई निसाब किताब की शक्ल में नहीं था। उसके कोई टाईम बाक़ायदा मुक़र्रर नहीं थे। बस जिस वक़्त भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाये और आपने कोई बात इर्शाद फ़रमाई, उन हज़रात ने उसको सुना और याद कर

लिया। या अगर कोई शख़्स आपके पास मुलाक़ात के लिए आया, और उसने आकर सवाल किया, आपने उसका जवाब दिया, उन हज़रात ने सवाल व जवाब को सुन कर याद कर लिया। या आपने किसी के साथ किसी तरह का मामला फ़रमाया, उसको महफ़ूज़ कर लिया। उन हज़रात की सारी ज़िन्दगी इसी काम के लिए वक़्फ़ थी। उन्हीं को "असहाबे सुफ़्फ़ा" कहा जाता है। ये असहाबे सुफ़्फ़ा इस्लाम की तारीख़ के पहले तालिबे इल्म थे और "सुफ़्फ़ा" इस्लामी तारीख़ का पहला मदरसा था जो एक चबूतरे पर क़ायम हुआ।

असहाबे सुफ़्फ़ा की हालत

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु भी उन्हीं में से एक थे। वह इस हदीस में उनका हाल बयान फ़रमा रहे हैं कि मैंने सत्तर असहाबे सुफ़्फ़ा को देखा कि उनमें से किसी के पास अपने जिस्म को ढांपने के लिए पूरे दो कपड़े नहीं थे, बल्कि किसी के पास तो सिर्फ़ एक चादर थी और उसी चादर को उसने अपने गले से बांध कर आधी पिंडली तक अपने जिस्म को उसके ज़रिये छुपा रखा था, और किसी के पास सिर्फ़ तहबन्द था। जिसके ज़रिये उसने जिस्म का नीचे का हिस्सा तो छुपा रखा था और ऊपर का जिस्म ढांपने के लिए उसके पास कोई कपड़ा नहीं था। और कभी कभी यह होता कि वे सहाबी जिन्होंने अपने गले से चादर बांधी हुई होती वे अपनी चादर को चलते हुए इस ख़ौफ़ से बार बार समेटते थे कि कहीं सतर न खुल जाए और बहुत एहतियात से चलते थे। इस हालत में वे सहाबा-ए-किराम हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के पास इल्म हासिल करने के लिए पड़े हुए थे। क्या वे हज़रात अगर दुनिया जमा करना चाहते तो न कर सकते थे? अल्लाह तआला ने उनको सलाहियत, ज़हानत इतनी अता फ़रमाई थी कि अगर दुनिया हासिल करना चाहते तो ज़रूर हासिल कर लेते। लेकिन वजह यह थी कि उनको दुनिया की तरफ़ तवज्जोह ही नहीं थी। बस ज़रूरत के लायक़ जो मिल गया उस पर इक्तिफ़ा कर लिया। उस ज़माने में

"असहाबे सुफ़्फ़ा" के चबूतरे पर एक सतून था। उसकी यादगार अब भी मौजूद है। उस सतून के साथ लोग असहाबे सुफ़्फ़ा के लिए खजूर के ख़ोशे लटकाया करते थे। खजूर के वे ख़ोशे उन असहाबे सुफ़्फ़ा की गिज़ा होते थे। जब किसी को भूख लगती तो वह उस ख़ोशे से खजूर लेकर खा लेता।

हज़रत अबू हुरैरह रज़ि. की भूख की सख़्ती

ख़ुद हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु अपना हाल बयान करते हुए फ़रमाते हैं कि मैं हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमते अक़्दस में मस्जिदे नबवी में रहता था, और कभी कभी भूख की शिद्दत की वजह से मेरा यह हाल होता था कि मैं निढाल होकर मस्जिदे नबवी के दरवाज़े पर गिर जाता था। लोग यह समझते कि शायद इसको मिर्गी का दौरा पड़ा है, चुनांचे लोग मेरी गर्दन पर पांव रख कर गुज़रते थे। उस ज़माने में अहले अ़रब के अन्दर यह मशहूर था कि अगर किसी को मिर्गी का दौरा पड़े तो यह समझा जाता था कि उसकी गर्दन पर पांव रखा जाए तो इस से दौरा खुल जाता था। फिर क़सम खाकर फ़रमाते हैं कि:

"وَاللّٰهِ مَا بِیَ اِلَّا الْجُوْعُ"

अल्लाह की क़सम न मुझे मिर्गी का दौरा था और न वह ग़शी की कैफ़ियत थी, बल्कि भूख की सख़्ती की वजह से निढाल होकर मैं लेटा हुआ होता था। इस हालत में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने वक़्त गुज़ारा तब जाकर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पांच हज़ार तीन सौ चौंसठ हदीसें हम तक पहुंचाई और ज़ख़ीरा–ए–हदीस में सब से ज़्यादा हदीसें उनसे रिवायत की गयी हैं।

बहर हाल! सहाबा–ए–किराम ने ख़ुद फ़ाक़े बर्दाश्त करके, मोटा झोटा पहन कर, रूखी सूखी खाकर हमारे लिए यह पूरा दीन महफ़ूज़ करके चले गए। यह उनका हम पर बहुत बड़ा एहसान है। अल्लाह तआ़ला उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाए, आमीन।

हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. की तर्बियत

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम का यह मिज़ाज बना दिया था कि दुनिया की हिर्स, दुनिया की मुहब्बत, दुनिया का ज़रूरत से ज़्यादा शौक़ ख़त्म हो जाए। उनमें से हर शख़्स इस फ़िक्र में था कि किसी तरह अल्लाह तआ़ला मुझे आख़िरत की ख़ैर व कामयाबी अ़ता फ़रमा दे, दुनिया हो तो वह सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक़ हो। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सहाबा-ए-किराम की किस तरह तर्बियत फ़रमाया करते थे? उसके वाक़िआ़त सुनिए। यही हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि एक मर्तबा मैं दोपहर के वक़्त अपने घर से बाहर निकला तो देखा कि हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु दोनों रास्ते में टहल रहे हैं। मैंने सोचा कि मालूम नहीं ये दोनों इस वक़्त किस वजह से टहल रहे हैं। मैंने जाकर उनसे वजह पूछी तो उन्हों ने बताया कि भूख लगी हुई है और घर में खाने को कुछ नहीं है। सोचा कि कुछ मेहनत मज़दूरी करके कुछ खाने का बन्दोबस्त करें। अभी कुछ ही देर गुज़री थी कि जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम भी घर से बाहर तशरीफ़ ले आए, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आप हज़रात से पूछा कि आप हज़रात किस वजह से बाहर तशरीफ़ लाए? उन हज़रात ने जवाब दिया कि:

"ما اخرجنا الا الجوع"

या रसूलल्लाह! हमें भूख ने बाहर निकाला है। आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मैं भी इसी वजह से निकला हूं। फिर आपने फ़रमाया कि मेरे एक दोस्त हैं, उनके बाग़ में चलते हैं। वह एक अन्सारी सहाबी थे। उनका एक बाग़ था, चुनांचे ये हज़रात वहां पहुंचे तो मालूम हुआ कि वह सहाबी मौजूद नहीं हैं। उनकी बीवी मौजूद थीं। उन्होंने जब देखा कि जनाब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम और हज़रत अबू बक्र और हज़रत उमर

रज़ियल्लाहु अन्हु हमारे बाग़ में तशरीफ़ लाये हैं तो उनकी ख़ुशी की कोई इन्तिहा न रही, और उन्होंने कहा कि आज तो मुझ से ज़्यादा ख़ुश क़िस्मत कोई नहीं है, क्योंकि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मेरे मेहमान हैं। जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उनके बाग़ में तशरीफ़ फ़रमा हुए तो उन ख़ातून यानी उन सहाबी की बीवी ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! आप मुझे थोड़ी देर की इजाज़त दीजिए कि आपके लिए एक बकरी ज़िबह कर लूं। आपने फ़रमाया कि बकरी के ज़िबह करने में कोई हर्ज नहीं लेकिन इसका ख़्याल रहे कि कोई दूध देनी वाली बकरी मत ज़िबह करना। उन साहिबा ने फ़रमाया कि मैं दूसरी बकरी ज़िबह करूंगी। चुनांचे उन ख़ातून ने बकरी ज़िबह की और उसका गोश्त और बाग़ की ताज़ा खजूरें और ठन्डा पानी पेश किया। आपने और हज़रत सिद्दीक़े अक्बर और हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने खाना खाया। जब खाकर फ़ारिग़ हुए तो फ़रमाया कि आज अल्लाह तआला ने हमें खाने की जो नेमत अता फ़रमाई कि इतना अच्छा और उम्दा खाना, इतना उम्दा पानी और दरख़्तों का इतना उम्दा साया जिसमें हम बैठे हुए हैं, यह सब अल्लाह तआला की वे नेमतें हैं जिनके बारे में अल्लाह तआला ने कुरआने करीम में इर्शाद फ़रमायाः

"وَلَتُسْئَلُنَّ يَوْمَئِذٍ عَنِ النَّعِيمِ"

यानी आख़िरत में तुम से इन नेमतों के बारे में सवाल होगा कि हमने तुम्हें ये नेमतें अता कीं, तुमने इनको किस जगह में इस्तेमाल किया?

नेमतों के बारे में सवाल

इस तरह आपने उन हज़रात की तर्बियत फ़रमाई कि भूख की शिद्दत के आलम में यह थोड़ा सा एक वक़्त का खाना मयस्सर आ गया, उसके बारे उनके दिलों में यह बात बैठाई जा रही है कि इसकी मुहब्बत तुम्हारे दिलों में न आ जाए। बल्कि यह ख़ौफ़ पैदा हो कि ये अल्लाह तआला की नेमतें तो हैं, लेकिन कल क़ियामत के दिन

इनके बारे में अल्लाह तआला के यहां जवाब देना होगा। यह ज़हनियत तमाम सहाबा-ए-किराम के अन्दर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पैदा फ़रमा दी थी।

मौत इस से ज़्यादा जल्दी आने वाली है

एक मर्तबा आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम रास्ते से गुज़र रहे थे। देखा कि एक साहिब अपनी झोंपड़ी की मरम्मत कर रहे हैं। जब आप क़रीब से गुज़रे तो आपने उनसे पूछा कि क्या कर रहे हो? उन्होंने अर्ज़ किया कि हमारी झोंपड़ी कुछ कमज़ोर हो गई थी, मैं इसकी मरम्मत कर रहा हूं। आपने उनको मना नहीं फ़रमाया कि यह मरम्मत मत करो, लेकिन बस एक जुम्ला इर्शाद फ़रमाया किः

"ما اری الامر الا اعجل من ذٰلك"

यानी जो वक़्त आने वाला है वह मुझे इस से भी ज़्यादा जल्दी नज़र आता है। यानी अल्लाह तआला के सामने पेश होने का जो वक़्त है वह इतना जल्दी आ सकता है कि अगर उसका ख़्याल और ध्यान हो तो फिर आदमी को इस बात की फ़िक्र नहीं होती कि मेरी झोंपड़ी कमज़ोर हो गई है, उसको ठीक कर लूं। इशारा इस बात की तरफ़ फ़रमा दिया कि इस झोंपड़ी को और इस घर को दुरुस्त करते हुए ज़ेहन में यह बात न आ जाए कि यह मेरा हमेशा का घर है और हमेशा मुझे इसमें रहना है। बल्कि यह ख़्याल रखना कि तुम्हें तो आगे जाना है। यह घर तो तुम्हारे सफ़र की एक मन्ज़िल है, सफ़र की मन्ज़िल में ज़रूरत के मुताबिक़ ही इन्तिज़ाम कर लो, इस से ज़्यादा मत करो। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तर्बियत का यह अन्दाज़ था।

क्या दीन पर चलना मुश्किल है?

कभी कभी इन हदीसों को पढ़ कर हम जैसे कम हिम्मत लोगों के ज़ेहन में यह ख़्याल पैदा होने लगता है कि फिर दीन पर चलना हमारे बस की बात नहीं है। यह हज़रत अबू हुरैरह, यह हज़रत अबू

बक्र और हज़रत उमर और असहाबे सुफ़्फ़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ही ने दीन पर अ़मल करके दिखा दिया। हमारे बस में तो यह नहीं है कि इतने दिन की भूख बर्दाश्त कर लें और एक चादर ओढ़ कर अपनी ज़िन्दगी गुज़ार लें और अपने रहने की झोंपड़ी भी हो तो उसकी मरम्मत न करें, और अगर मरम्मत करने लगें तो उस वक़्त यह ख़्याल हो कि क़ियामत का वक़्त क़रीब आने वाला है। ख़ूब समझ लीजिए! ये वाक़िआत सुनाने का यह मक़सद नहीं है कि दिल में मायूसी पैदा हो, बल्कि ये वाक़िआत सुनाने का मन्शा यह है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा–ए–किराम के अन्दर यह ज़ेहनियत पैदा फ़रमाई, जिसका सब से आला मेयार वह था, लेकिन यह ज़रूरी नहीं कि हर इन्सान इस आला मेयार पर पहुंचने के बाद ही नजात हासिल कर सकेगा, बल्कि हर इन्सान की ताक़त और हिम्मत अलग अलग है, और अल्लाह तआ़ला ने कोई हुक्म इन्सान की ताक़त और हिम्मत से ज़्यादा नहीं दिया। किसी ने ख़ूब कहा है:

"देते हैं ज़र्फ़ क़दह ख़्वार देख कर"

यानी जितना जिस शख़्स का ज़र्फ़ होता है, अल्लाह तआ़ला उसके ज़र्फ़ के मुताबिक़ उसके साथ मामला फ़रमाते हैं।

काश हम हुज़ूर सल्ल. के ज़माने में होते

चुनांचे कभी कभी हमारे ज़ेहनों में यह ख़्याल पैदा होता है कि काश हम भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में पैदा हुए होते तो सहाबा–ए–किराम के साथ होते और सरकारे दो आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ियारत नसीब होती। जिहाद और जंगों में आपके साथ शरीक होते। लेकिन हक़ीक़त यह है कि अल्लाह जल्ल शानुहू की मस्लिहत है कि उन्होंने हमें उस दौर में पैदा नहीं किया, अगर हम अपनी मौजूदा सलाहियत और मौजूदा ज़र्फ़ के साथ जो आज हमारे अन्दर है, उस दौर में होते तो शायद

अबू जहल, अबू लहब की सफ़ में होते। यह तो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम का ज़र्फ़ था, और उनकी हिम्मत व ताक़त थी कि उन्होंने सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ऐसे मुश्किल हालात में साथ दिया, लेकिन सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें और आपको और क़ियामत तक आने वलो तमाम इन्सानों को यह रास्ता बता दिया कि तुम्हारी ताक़त व हिम्मत के मुताबिक़ तुम्हारे ज़िम्मे यह काम है कि दुनिया की मुहब्बत और उसकी हिर्स तुम्हारे दिल में न हो। मुहब्बत और हिर्स के बग़ैर दुनिया को अपनाओ, और दुनिया को जायज़ और हलाल तरीक़ों से हासिल करो और हराम तरीक़ों से परहेज़ करो। बस यह चीज़ तुम्हारे दुनिया से बे-रग़बत होने के लिए काफ़ी है।

हज़रत थानवी रह. अपने दौर के मुजद्दिद थे

हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि हक़ीक़त में वह हमारे दौर में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वारिस हैं और अपने ज़माने के मुजद्दिद हैं। चुनांचे वह हमें बता गए कि हमें हमारी सलाहियत और ज़र्फ़ के मुताबिक़ क्या करना है और क्या नहीं करना है। शायद यह बात उनसे ज़्यादा बेहतर अन्दाज़ में कोई और न बता सकेगा। चुनांचे उन्होंने हमें इस बारे में एक उसूल बता दिया कि दुनिया कितनी हासिल करो और किस दर्जे में हासिल करो और दुनिया के साथ किस तरह का मामला करो। यह उसूल असल में तो मकान के सिलसिले में बयान फ़रमाया कि आदमी कैसा मकान बनाए? लेकिन यह उसूल ज़िन्दगी की तमाम ज़रूरियात पर लागू होता है।

मकान बनाने के चार मक़ासिद

चुनांचे उन्हों ने यह उसूल बयान फ़रमाया कि मकान चार मक़ासिद के लिए बनाया जा सकता है। पहला मक़सद है "रिहाइश" यानी ऐसा मकान जिसमें आदमी रात गुज़ार सके और उसके ज़रिये

धूप, बारिश, सर्दी और गर्मी से हिफ़ाज़त हो जाए। अब यह ज़रूरत एक झोंपड़ी के ज़रिये भी पूरी हो सकती है। इस मक़सद के तहत मकान बनाना जायज़ है। दूसरा मक़सद है "आसाइश" यानी सिर्फ़ रिहाइश मक़सद नहीं बल्कि मक़सद यह है कि वह रिहाइश, आराम और आसाइश के साथ हो। जैसे झोंपड़ी और कच्चे मकान में इन्सान जूं तूं गुज़ारा तो कर लेगा लेकिन उसमें आसाइश हासिल नहीं होगी और आराम नहीं मिलेगा। हो सकता है कि बारिश के अन्दर उसमें से पानी टपकना शुरू हो जाए और उसमें धूप की तपिश भी अन्दर आ रही है, इसलिये आसाइश हासिल करने के लिए मकान को पक्का बना दिया तो यह आसाइश भी जायज़ है, कोई गुनाह नहीं है। तीसरा दर्जा "आराइश" यानी उस मकान की सजावट, आपने मकान तो पक्का बना लिया और उसकी वजह से आपको रिहाइश हासिल हो गई लेकिन उसकी दीवारों पर पलास्टर नहीं किया है और न उस पर रंग व रोग़न है, अब रिहाइश भी हासिल है और पूरा आराम यानी आसाइश भी हासिल है। लेकिन आराइश नहीं है। इसलिये कि उस पर रंग व रोग़न नहीं है। जब आप उस मकान में दाख़िल होते हैं तो आपकी तबीयत खुश नहीं होती। अब अपने दिल को खुश करने के लिए रंग व रोग़न करके कुछ सजा संवार ले तो यह भी कोई गुनाह नहीं। अल्लाह तआला की तरफ़ से इसकी भी इजाज़त है। बशर्ते कि अपने दिल को खुश करने के लिए यह आराइश वाला काम करे। चौथा दर्जा है "नुमाइश" यानी उस मकान के ज़रिये रिहाइश का मक़सद भी हासिल हो गया, आसाइश और आराइश का मक़सद भी हासिल कर लिया। अब दिल यह चाहता है कि अपने मकान को ऐसा बनाऊं कि देखने वाले यह कहें कि हमने फ़लां शख़्स का मकान देखा उसको देख कर उसकी खुश ज़ौक़ी की दाद देनी पड़ती है और उसकी मालदारी का पता चलता है। अब अगर इस मक़सद को हासिल करने के लिए आदमी अपने मकान के अन्दर कोई कार्रवाई करता है ताकि लोग उसको बड़ा आदमी समझें, ताकि लोग उसको

दौलत मन्द समझें, ताकि लोग उसको अपने से ज़्यादा बड़ा समझें तो यह सूरत हराम है। ख़ुलासा यह है कि रिहाइश हासिल करना जायज़, आसाइश हासिल करने के लिए कोई काम करना जायज़, आराइश के हासिल करने के लिए कोई काम करना जायज़, लेकिन "नुमाइश" और दिखावे के लिए कोई काम करना हराम और ना जायज़ है, और नुमाइश की ग़र्ज़ से जो चीज़ भी हासिल की जायेगी वह हराम होगी।

"क़नाअ़त" का सही मतलब

यह तफ़सील इसलिये अ़र्ज़ कर दी ताकि "क़नाअ़त" का सही मतलब समझ में आ जाए। "क़नाअ़त" के मायने यह हैं कि जो कुछ अल्लाह तआ़ला ने दिया है, उस पर आदमी राज़ी और ख़ुश हो जाए। लेकिन "क़नाअ़त" के साथ अगर आदमी के दिल में यह ख़्याल पैदा हो रहा है कि मेरे मकान में फ़लां तक्लीफ़ है यह दूर हो जाए, और मैं जायज़ तरीक़े से और हलाल आमदनी से इस तक्लीफ़ को दूर करना चाहता हूं तो यह "आसाइश" के अन्दर दाख़िल है और जायज़ है। यह ख़्वाहिश "हिर्स" के अन्दर दाख़िल नहीं। या जैसे अगर एक शख़्स ने यह सोचा कि मेरा मकान वैसे बहुत अच्छा है माशा अल्लाह, लेकिन जब मैं दाख़िल होता हूं तो मुझे देखने में अच्छा नहीं लगता, इसलिये दिल चाहता है कि उसमें कुछ हरियाली वग़ैरह लगी हुई हो, ताकि देखने में अच्छा लगे और मेरा दिल ख़ुश हो जाया करे। अब वह अपने दिल को ख़ुश करने के लिए यह काम करता है, तो यह हिर्स में दाख़िल नहीं। बशर्ते कि इसको को कराने के लिए जायज़ और हलाल तरीक़ा इख़्तियार करे। ना जायज़ और हराम तरीक़ा इख़्तियार न करे, तो यह जायज़ है। लेकिन अगर मकान में तमाम सहूलतें हासिल हैं, अच्छा भी लगता है, आराम भी है, लेकिन मेरे मकान को देख कर लोग यह समझते हैं कि यह तो थर्ड क्लास आदमी है, या मैं जिस मौहल्ले में रहता हूं उसमें मेरा मकान दूसरों के मकानों के साथ मैच नहीं करता, बल्कि मेरे मकान को देख

कर ऐसा मालूम होता है कि मालदारों के मौहल्ले में कोई निचले दर्जे का आदमी आ गया है। अब इस ग़र्ज़ के लिए मकान को उम्दा बनाता हूं ताकि उसकी नुमाइश हो, लोग उसकी तारीफ़ करें और उसको देख कर लोग मुझे दौलत मन्द समझें। उस वक़्त यह काम करना हराम है, हिर्स में दाख़िल है और यह काम "क़नाअ़त" के ख़िलाफ़ है। या अगर कोई शख़्स "आसाइश" और "आराइश" को हासिल करने के लिए ना जायज़ और हराम तरीक़ा इख़्तियार करता है, जैसे रिश्वत की आमदनी के ज़रिये वह यह आसाइश और आराइश हासिल करना चाहता है, या सूद लेकर, दूसरे को धोखा देकर या दूसरे का हक़ मार कर यह चीज़ हासिल करना चाहता है तो फिर यह हिर्स में दाख़िल है और ना जायज़ और हराम है।

कम से कम अदना दर्जा हासिल कर लें

बहर हाल, सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के जो हालात मैंने आपको सुनाए। इसका मक़सद यह बयान करना था कि वह तो आला दर्जे के लोग थे, अगर हम अपनी कमज़ोरी की वजह से सहाबा-ए-किराम के उस आला मक़ाम तक नहीं पहुंच सकते तो कम से कम उसका अदना दर्जा तो हासिल करने की फ़िक्र करें जिसको हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने बयान फ़रमाया है, और यह दर्जा उस वक़्त तक हासिल नहीं होगा जब तक दुनिया की ना पायदारी और आख़िरत की फ़िक्र और मौत का ध्यान इन्सान के अन्दर पैदा न हो जाए। आज इन्सान सालों के मन्सूबे बना रहा है। उसको यह पता नहीं कि वह कल ही इस दुनिया से रुख़्सत हो जायेगा। बैठे बैठे इन्सान दुनिया से रुख़्सत हो जाता है। इसलिये ऐसे लम्बे लम्बे मन्सूबे बनाने से परहेज़ करे और सिर्फ़ बक़दरे ज़रूरत दुनिया के माल व अस्बाब पर क़नाअ़त करे, इस क़नाअ़त के ज़रिये अल्लाह तआ़ला दुनिया में भी राहत अ़ता फ़रमायेंगे और आख़िरत में भी सुकून मिलेगा और इसका तरीक़ा वह है कि जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाया कि

अपने से नीचे वाले को देखो और अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करो, अपने से ऊपर की तरफ़ मत देखो, इसलिये कि ऊपर की तो कोई इन्तिहा नहीं है।

एक यहूदी का इब्रतनाक क़िस्सा

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने एक यहूदी का क़िस्सा लिखा है कि उसने माल व दौलत के बहुत ख़ज़ाने जमा कर रखे थे। एक दिन वह ख़ज़ाने का मुआयना करने के इरादे से चला। ख़ज़ाने पर एक चौकीदार बिठाया हुआ था, लेकिन वह यह देखना चाहता था कि कहीं चौकीदार तो ख़ियानत नहीं कर रहा है। इसलिये चौकीदार को इत्तिला दिए बग़ैर ख़ुद अपनी ख़ुफ़िया चाबी से ख़ज़ाने का ताला खोल कर अन्दर चला गया, चौकीदार को पता नहीं था कि मालिक मुआयने के लिए अन्दर गया हुआ है। उसने जब यह देखा कि ख़ज़ाने का दरवाज़ा खुला हुआ है, उसने आकर बाहर से ताला लगा दिया, अब वह मालिक अन्दर मुआयना करता रहा, ख़ज़ाने की सैर करता रहा, जब मुआयने से फ़ारिग़ होकर बाहर निकलने के लिए दरवाज़े के पास आया तो देखा कि दरवाज़ा बाहर से बन्द है। अब अन्दर से आवाज़ लगाता है तो बाहर नहीं जाती। उस ख़ज़ांने के अन्दर सोना चांदी के ढेर लगे हुए हैं, लेकिन भूख मिटाने के लिए उनको खा नहीं सकता, प्यास लग रही है लेकिन उनके ज़रिये अपनी प्यास नहीं बुझा सकता। यहां तक कि उस ख़ज़ाने के अन्दर भूख और प्यास की शिद्दत से तड़प तड़प कर जान दे दी और वही ख़ज़ाना उसकी मौत का सबब बन गया। इसलिये अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि:

"اِنَّمَا يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِى الْحَيَاةِ الدُّنْيَا" (سورة توبه:٥٥)

यानी अल्लाह तआ़ला बाज़ अहले दुनिया को इस दुनिया ही के ज़रिये इस दुनियावी ज़िन्दगी में अ़ज़ाब देते हैं। अगर उस अ़ज़ाब से बचना है तो इसका तरीक़ा वही है कि अपने से ऊपर मत देखो, अपने से नीचे वाले को देखो, और अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा

करो। लेकिन जायज़ हदों में रह कर अपनी जायज़ ज़रूरियात पूरी कर लो। बाक़ी सुबह व शाम दिन रात दुनिया को जमा करने के अन्दर जो मश्गूलियत और जो फ़िक्र है उसको ख़त्म करने की कोशिश करो।

एक ताजिर का अजीब क़िस्सा

हज़रत शैख़ सादी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने गुलिस्तां में एक क़िस्सा लिखा है कि मैं एक मर्तबा सफ़र कर रहा था। सफ़र के दौरान एक ताजिर के घर रात गुज़ारने के लिए क़ियाम किया। उस ताजिर ने सारी रात मेरा दिमाग़ चाटा, वह इस तरह कि अपनी तिजारत के सारे क़िस्से मुझे सुनाता रहा कि फ़लां मुल्क में मेरी यह तिजारत है, फ़लां जगह मेरी यह तिजारत है, फ़लां जगह इस चीज़ की दुकान है, फ़लां मुल्क से यह चीज़ इम्पोर्ट करता हूं। यह चीज़ एक्सपोर्ट करता हूं। सारी रात क़िस्से सुनाकर आख़िर में कहने लगा कि मेरी सब आरज़ूएं तो पूरी हो गई हैं और मेरी तिजारत परवान चढ़ गई, लेकिन अब सिर्फ़ एक आख़री सफ़र करने का इरादा है, आप दुआ करें कि मेरा वह सफ़र कामयाब हो जाए तो फिर उसके बाद क़नाअत की ज़िन्दगी इख़्तियार कर लूंगा और बक़िया ज़िन्दगी अपनी दुकान पर बैठ कर गुज़ार दूंगा।

शैख़ सादी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने पूछा कि वह कैसा सफ़र है? उस ताजिर ने जवाब दिया कि यहां से फ़ारसी गन्धक लेकर चीन जाऊंगा। इसलिये कि मैंने सुना है कि वह चीन में बहुत ज़्यादा क़ीमत पर फ़रोख़्त हो जाती है। फिर चीन से चीनी के बरतन लेकर रूम में फ़रोख़्त करूंगा और वहां से रूमी कपड़ा हिन्दुस्तान में फ़रोख़्त करूंगा और फिर हिन्दुस्तान से फ़ौलाद ख़रीद कर हलब (मुल्क शाम) में लेजा कर फ़रोख़्त करूंगा और हलब से शीशा ख़रीद कर यमन में फ़रोख़्त करूंगा और फिर वहां से यमनी चादर लेकर वापस फ़ारस (ईरान) आ जाऊंगा। ग़र्ज़ यह कि उसने सारी दुनिया के एक सफ़र का मन्सूबा बना लिया और शैख़ से फ़रमाया कि बस!

इस एक आख़री सफ़र का इरादा है। उसके लिये आप दुआ कर दें। उसके बाद मैं कनाअ़त से अपनी दुकान पर बक़िया ज़िन्दगी गुज़ार दूंगा। उस वक़्त भी यही ख़्याल है कि सब कुछ करने के बाद भी बक़िया ज़िन्दगी दुकान पर ही गुज़ार लेगा। शैख़ सादी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि जब मैंने उसके सफ़र की रूदाद सुनी तो मैंने उस से कहा कि:

आं शुनीदस्ती कि दर सेहरा-ए-ग़ौर
बार सालारे बयुफ़्ताद अज़ सतूर
गुफ़्त चश्मे तंग दुनिया दार रा
या क़नाअ़त पुर कुनद या ख़ाके गोर

फ़रमाया कि तुमने यह क़िस्सा सुना है कि ग़ौर के जंगल में एक बहुत बड़े सौदागर का सामान उसके ऊंट से गिरा हुआ पड़ा था और एक तरफ़ उसका ऊंट भी मरा पड़ा था और दूसरी तरफ़ वह ख़ुद भी मरा पड़ा था। उसका वह सामान ज़बाने हाल से यह कह रहा था कि दुनियादार की तंग निगाह को या तो क़नाअ़त पुर कर सकती है या क़ब्र की मिट्टी पुर कर सकती है। उसके पुर करने का तीसरा कोई तरीक़ा नहीं है। (गुलिस्तां सादी पेज ११६)

यह माल भी आख़िरत का सामान है

यह वाक़िआ बयान करने के बाद शैख़ सादी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बयान फ़रमाते हैं कि जब दुनिया इन्सान के ऊपर मुसल्लत हो जाती है तो फिर उसको किसी और चीज़ का ख़्याल भी नहीं आता। यह है दुनिया की मुहब्बत जिस से मना किया गया है। अगर यह मुहब्बत न हो, और फिर अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से माल दे दे और उसके साथ दिल अटका हुआ न हो, और वह माल अल्लाह तआ़ला की पैरवी में रुकावट न बने, वह माल अल्लाह तआ़ला के अहकाम बजा लाने में ख़र्च हो और उसके ज़रिये इन्सान जन्नत कमाए तो वह माल फिर दुनिया नहीं है, वह माल भी आख़िरत का सामान है। लेकिन अगर उस माल के ज़रिये आख़िरत के रास्ते में रुकावट पैदा हो गई

तो वह दुनिया है जिस से रोका गया है।

दिल से दुनिया की मुहब्बत कम करने का तरीक़ा

और दुनिया की मुहब्बत दिल से निकालने और आख़िरत की मुहब्बत दिल में लाने का तरीक़ा यह है कि थोड़ा सा वक़्त निकाल कर इन्सान इस बात का ध्यान करे कि ये दिन रात हम ग़फ़लत में मुब्तला हैं। मरने से ग़ाफ़िल हैं, अल्लाह के सामने पेश होने से ग़ाफ़िल हैं। हिसाब व किताब से ग़ाफ़िल हैं। जज़ा और सज़ा से ग़ाफ़िल हैं, आख़िरत से ग़ाफ़िल हैं और इस ग़फ़लत की वजह से आख़िरत और मौत का ख़्याल भी नहीं आता। इसलिये थोड़ा सा वक़्त निकाल कर इन्सान यह मुराक़बा और ध्यान करे कि एक दिन मरूंगा, उस वक़्त मेरा क्या हाल होगा? और किस तरह अल्लाह तआला के सामने पेशी होगी? किस तरह सवाल व जवाब होंगे? और मुझे क्या जवाब देना होगा। रोज़ाना इन बातों को ध्यान करे और ज़ेहन में हाज़िर करे। हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि अगर कोई आदमी रोज़ाना इन बातों का मुराक़बा करे तो चन्द ही हफ़्तों में इन्शा अल्लाह वह यह महसूस करेगा कि दुनिया की मुहब्बत दिल से निकल रही है।

उसको पूरी दुनिया दे दी गई

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"من اصبح منكم آمنا فى سربه معافا فى جسده عنده قُوْة يومه فكأنّما خِيزتْ له الدنيَا" (ترمذی شریف)

यानी जो शख़्स इस तरह सुबह करे कि उसको तीन चीज़ें हासिल हों, एक यह कि वह अपने सर छुपाने की जगह में बेख़ौफ़ हो, यानी अपने घर में बेख़ौफ़ हो और उसको किसी दुश्मन या किसी ज़ालिम के ज़ुल्म का ख़तरा न हो, और दूसरे यह कि उसके बदन में उसको तक्लीफ़ न हो बल्कि सेहत और आफ़ियत की हालत में हो,

कोई बीमारी न हो, तीसरे यह कि उसके पास एक दिन के खाने का इन्तिज़ाम मौजूद हो। जिस शख़्स को ये तीन चीज़ें हासिल हों उसको गोया कि पूरी की पूरी दुनिया तमाम अस्बाब के साथ जमा करके दे दी गई है। इसलिये अगर किसी को ये तीन चीज़ें हासिल हो गयीं, उसकी दुनिया की ज़रूरत पूरी हो गई। उसको अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करना चाहिए कि उसको आ़फ़ियत मिल गई और ज़रूरत के मुताबिक़ दुनिया मिल गई और ऐसे शख़्स को नाशुक्री में नहीं मुब्तला होना चाहिए।

इन नेमतों पर शुक्र अदा करो

इस हदीस में दो बातों की तल्क़ीन फ़रमाई है जो हम सब के लिए बड़ा सबक़ है। एक यह कि इन्सान को शुक्र की आ़दत डालनी चाहिए। नाशुक्री से बचना चाहिए। हम लोग सुबह व शाम जो नाशुक्री में मुब्तला रहते हैं जब कि अल्लाह तआ़ला ने तरह तरह की की नेमतें हमें दे रखी हैं। उसकी नेमतों की बारिश हो रही है लेकिन जब ज़रा सी कोई बात तबीयत के ख़िलाफ़ पेश आ गई तो बस अब तमाम नेमतों को भूल कर नाशुक्री करने लगे, और उन नेमतों के मुक़ाबले में उस ज़रा सी तक्लीफ़ को लेकर बैठ गए और उसके नतीजे में नाशुक्री करने लगे, यह बड़ी ख़तरनाक बात है। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमा दिया कि अगर तुम्हें तीन बातें हासिल हो गयीं तो तुम्हें पूरी दुनिया मिल गई। अगर इस से ज़्यादा नहीं मिली तो उस पर शिकवा करने उस पर नाशुक्री करने का कोई मौक़ा नहीं। आज अगर लोगों से यह पूछा जाता है कि क्या हाल है? तो अक्सर लोगों की ज़बान पर जुम्ला आ जाता है कि "गुज़र रही है" "टाईम पास हो रहा है" अल्लाह तआ़ला बचाए, यह बड़ी नाशुक्री का कलिमा है। इसका मतलब यह है कि हक़ीक़त में तो मुझे अल्लाह तआ़ला की कोई नेमत तो मयस्सर नहीं है, तक्लीफ़ों का आ़लम है, लेकिन मेरा ही हौसला है कि मैं उसको गुज़ार रहा हूं और वक़्त पास कर रहा हूं। हालांकि जब तुम से कोई

पूछे कि क्या हाल है? कैसी गुज़र रही है? तो उस वक़्त अल्लाह तआला की जो नेमतें तुम्हें मयस्सर हैं, उनका ध्यान करो और पहले उनका शुक्र अदा करो कि अल्लाह का शुक्र है कि उसने बड़ी नेमतें अता फ़रमाई हैं और अगर थोड़ी बहुत कोई तक्लीफ़ है तो उसके बारे में अल्लाह तआला से कह दो कि या अल्लाह! आपने मुझे बेशुमार नेमतें अता फ़रमाई हैं और यह जो तक्लीफ़ है यह भी हक़ीक़त में नेमत ही का एक उन्वान है, लेकिन मैं कमज़ोर हूं इस तक्लीफ़ को सहन नहीं कर सकता। या अल्लाह अपनी रहमत से इस तक्लीफ़ को दूर फ़रमा दीजिए। ये अल्फ़ाज़ कहो, यह मत कहो कि मैं बड़ी मुश्किल से ज़िन्दगी गुज़ार रहा हूं।

ऊंचे ऊंचे मन्सूबे मत बनाओ

यह ज़िन्दगी का गुज़रना इसलिये मुश्किल लगता है कि अपने ज़ेहन में पहले से एक बहुत बड़ा मन्सूबा बना लिया कि दुनिया का यह सामान और अस्बाब हासिल करना है। जैसे मेरे पास इतना शानदार बंगला होना चाहिए, ऐसी शानदार कार होनी चाहिए, इतने नौकर चाकर होने चाहिएं, इतनी औलाद होनी चाहिए, इतना बैंक बैलेंस होना चाहिए, ऐसी तिजारत होनी चाहिए। यह मन्सूबा पहले से बना लिया। फिर अगर इस मन्सूबे के मुताबिक़ किसी चीज़ में कमी रह गई तो बस अब नाशुक्री करने लगे कि हम तो ज़िन्दगी गुजार रहे हैं। इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस तरफ़ तवज्जोह दिलाई है कि तुमने ये बड़े बड़े मन्सूबे बना रखे हैं। यह बड़ी सख़्त ग़लती है। इसलिये कि अगर तुम्हें तीन बातें हासिल हैं, एक यह कि घर में तुम इत्मीनान से हो, दूसरे यह कि जिस्म में आफ़ियत है, तीसरे यह कि एक दिन का अपना और अपने बीवी बच्चों के खाने का इन्तिज़ाम मौजूद है, तो तुम्हें सारी दुनिया मिल गई। अगर कोई शख़्स अपने ज़ेहन में यह बात बिठा ले कि बस इन तीन चीज़ों का नाम दुनिया है जो मुझे मिली है, तो उसके बाद अगर उसको इन तीन चीज़ों से ज़्यादा दुनिया मिलेगी तो वह

शख़्स शुक्र अदा करेगा कि मैं मुस्तहिक़ तो कम का था लेकिन अल्लाह तआ़ला ने अपनी रहमत से ज़्यादा दे दिया, और अगर इस से ज़्यादा चीज़ें नहीं मिलेंगी तो वह शख़्स कम से कम नाशुक्री नहीं करेगा, बल्कि वह यह सोचेगा कि दुनिया इतनी ही थी जो मुझे मिलनी चाहिए थी और वह मिल गई। बहर हाल! हमारी सब से बड़ी ग़लती यह है कि हम पहले से बड़े बड़े मन्सूबे ख़ुद बना लेते हैं। फिर उसमें जब कोई कोताही रह जाती है तो नाशुक्री कर देते हैं। इस हदीस में इस ग़लती को दूर फ़रमा दिया कि ऐसे बड़े बड़े मन्सूबे ही मत बनाओ।

अगले दिन की ज़्यादा फ़िक्र मत करो

अब एक सवाल ज़ेहन में यह पैदा होता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सिर्फ़ एक दिन के खाने का ज़िक्र फ़रमाया है, कि अगर तुम्हारे पास एक दिन का खाना मौजूद है तो सारी दुनिया तुम्हें मिल गई, तो फिर अगले दिन क्या होगा? और उसके बाद आइन्दा क्या होगा? बात असल में यह है कि इस हदीस के ज़रिये इशारा इस बात की तरफ़ फ़रमा दिया कि भाई! अगले दिन का क्या पता कि वह आयेगा या नहीं आयेगा, और जिस मालिक ने आज अ़ता फ़रमाया है वह मालिक कल भी देगा। अल्लाह तआ़ला ने साफ़ साफ़ फ़रमा दिया है:

"وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ رِزْقُهَا وَيَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا"

यानी ज़मीन पर चलने वाला जो कोई जानदार है, अल्लाह तआ़ला ने उसका रिज़्क़ अपने ज़िम्मे ले रखा है, और अल्लाह तआ़ला उसका मुस्तक़िल ठिकाना भी जानते हैं, और उसका आ़रज़ी ठिकाना भी जानते हैं। उसका रिज़्क़ वहीं पहुंचायेंगे। इसलिये आने वाली कल तुम मेहनत करना, और अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करना। उस मेहनत और भरोसे के नतीजे में अल्लाह तआ़ला तुम्हें रिज़्क़ अ़ता फ़रमायेंगे। इसलिये कल के लिये अल्लाह तआ़ला पर भरोसा करो और आज जो कुछ मयस्सर है उस पर अल्लाह तआ़ला

का शुक्र अदा करो। इसलिये कि शुक्र करने पर अल्लाह तआला का वायदा है किः

"لَئِنْ شَكَرْتُمْ لَأَزِيْدَنَّكُمْ"

अगर तुम शुक्र करोगे तो तुम्हें और ज़्यादा दूंगा।

सुकून और इत्मीनान क़नाअ़त में है

इस हदीस से दूसरा सबक़ यह मिला कि दुनिया में इत्मीनान और आफ़ियत का रास्ता "क़नाअ़त" के अलावा कुछ नहीं है। यानी जायज़ तरीक़े से मुनासिब तदबीर के तहत जितना कुछ अल्लाह तआ़ला ने अ़ता फ़रमा दिया, उस पर मुत्मइन हो जाए। ज़्यादा की हिर्स और हवस न करे। इसके अ़लावा दुनिया में ख़ुश रहने का कोई और रास्ता नहीं है। माल व दौलत के ढेर लगा लो, बैंक बैलेंस के अंबार लगा लो, कोठियां बना लो, कारें रख लो, लेकिन अगर क़नाअ़त नहीं है तो फिर उन कोठियों और बंगलों में भी तुम्हें सुकून नहीं मिलेगा। उस माल व दौलत के ढेर में भी सुकून नहीं मिलेगा। और अगर क़नाअ़त की दौलत तुम्हें हासिल है तो फिर यक़ीन रखो कि चटनी रोटी में भी तुम्हें वह मज़ा आ जायेगा और वह इत्मीनान व सुकून मयस्सर आ जायेगा जो बड़ी बड़ी कोठी बंगलों में और आला दर्जे के खानों में मयस्सर नहीं आयेगा। इसका तजुर्बा करके देख लो।

बड़े बड़े दौलत मन्दों का हाल

आज लोग दुनिया ही के पैमाने से नापे जाते हैं, चुनांचे जिसके पास ज़्यादा रुपये पैसे नहीं है वह जब किसी बड़े दौलत मन्द को देखता है कि उसके पास पैसे बहुत हैं, उसकी फ़ैक्ट्रीयां खड़ी हुई हैं, उसके नौकर चाकर हैं, उसके पास बैंक बैलेंस है, जो चाहता है करता है, ये सब चीज़ें देख कर वह समझता है कि यह आदमी बड़ा ख़ुश नसीब है, फिर उसको ख़ुश नसीब समझने के नतीजे में अपने दिल में यह हसरत पैदा होती है कि मुझे ये चीज़ें मयस्सर नहीं आयीं

और दिल चाहता है कि ये चीज़ें हमें भी मिल जायें। लेकिन बात यह है कि तुम्हें क्या मालूम कि इस माल व दौलत के पीछे, उस कोठी और बंगले के पीछे उसको सुकून मयस्सर है या नहीं? चूंकि लोग मेरे पस आकर अपने अन्दरूनी हाल बताते हैं इसलिये न जाने कितने लोग ख़ुद मेरे इल्म में ऐसे हैं कि अगर एक आम आदमी उस शख़्स को और उसके ज़ाहिरी हालात को देखेगा तो वह यही समझेगा कि दुनिया की सब से बड़ी दौलत उसको मिली हुई है। काश मैं भी उस जैसा बन जाऊं। उसको यह मालूम नहीं कि उसकी अन्दरूनी ज़िन्दगी में क्या अज़ाब बरपा है, और किस मुसीबत में मुब्तला है। बड़े बड़े अमीर और दौलत मन्दों ने मुझसे रो रो कर यह कहा कि काश! हमें यह रुपया पैसा न मिला होता। काश! हमें यह दौलत मयस्सर न आई होती। शायद हमें इसके बग़ैर ज़्यादा अमन व सुकून और ज़्यादा आफ़ियत मिल जाती।

सुकून पैसे से नहीं ख़रीदा जा सकता

बहर हाल! यह राहत और सुकून पैसे से नहीं ख़रीदा जा सकता और न दौलत के ज़रिये हासिल किया जा सकता है, बल्कि यह तो अल्लाह तआला की अता है। वह अगर चाहें तो चटनी रोटी में दे दें। और अगर न चाहें तो कोठी और बंगले में भी न दें। इसलिये कहां तक उसके पीछे दौड़ लगाओगे? कहां तक मन्सूबे बनाओगे? इसी लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमा रहे हैं कि दुनिया की इतनी सी हक़ीक़त समझ लो कि यह दुनिया हमेशा रहने की जगह ही नहीं। इसलिये अगर इस दुनिया में इतना मिल जाए तो बड़ी ग़नीमत बात है, और जो अल्लाह तआला ने अता फ़रमा दिया उस पर क़नाअत कर लो, फिर उस क़नाअत के ज़रिये तुम्हें सुकून मिल जायेगा। अगर क़नाअत मयस्सर नहीं तो फिर दुनिया के माल व अस्बाब में बढ़ते चले जाओगे मगर सुकून मयस्सर नहीं आयेगा। बाज़ लोग अरबों के मालिक हैं। अगर सारी ज़िन्दगी

बैठ कर खाते रहें तब भी ख़त्म न हो, मगर फिर भी इस फ़िक्र में लगे हुए हैं कि और मिल जाए, और उसके लिए जायज़ और ना जायज़ हलाल व हराम सब एक किया हुआ है। इसके बावजूद कि अरबों के मालिक हैं। अरे पहले यह देख लो कि जो दौलत तुम्हारे पास है उसको कहां इस्तेमाल करोगे?

दुनिया का सब से महंगा बाज़ार "लॉस ऐंजलिस" में

मैं पिछले हफ़्ते अमेरिका गया हुआ था। वहां एक शहर है लॉस ऐंजलिस, वहां के एक दोस्त मुझे एक बाज़ार में ले गये और बताया कि यह बाज़ार दुनिया का सब से मंहगा बाज़ार है, और यहां चीज़ें सब से महंगी बिकती हैं। मैंने पूछा कि कितनी महंगी बिकती हैं? उन्होंने मुझे बताया कि यहां पर एक मोज़े की जोड़ी की क़ीमत दो हज़ार डॉलर है। जिसका मतलब है पाकिस्तानी तक़रीबन पचासी हज़ार रुपये का एक मोज़ा। टाई की क़ीमत तीन हज़ार डॉलर, सूट की क़ीमत दस हज़ार, पन्द्रह हज़ार, बीस हज़ार डॉलर है। एक एक लाख डॉलर के सूट मिलते हैं। एक दुकान के पास से गुज़रे तो हमारे मेज़बान दोस्त ने बताया कि इस दुकान के एक हिस्से में तो आदमी ख़रीदारी के लिए जा सकता है, उसके बाद दूसरे हिस्से में जाने के लिए एक ज़ीने पर जाना पड़ता है। उस हिस्से में किसी शख़्स को जाने की इजाज़त नहीं होती, जब तक इस दुकान का मालिक ख़ुद उसको साथ लेकर न जाए, और वहां लेजाने का मक़सद यह होता है कि मालिक उस शख़्स को बहुत से कलर के सूट और बहुत से डीज़ाईन के सूट दिखाता है और फिर मालिक उसको यह मश्विरा देता है कि आपके जिस्म के लिए कौन सा कलर और कौन सा डीज़ाईन मुनासिब होगा, और फिर मालिक उस ग्राहक से सिर्फ़ मश्विरे के दस हज़ार डॉलर वसूल करता है, और सूट की ख़रीदारी के पैसे अलग देने होंगे। शहज़ादा चार्लस ने उस से मश्विरे के लिए टाईम मांगा था तो छह महीने के बाद उसको मुलाक़ात का टाईम दिया कि आप छह महीने के बाद फ़लां वक़्त पर तशरीफ़ लायें

तो आपको बताऊंगा कि आप कौन से कलर के सूट पहनें और कौन से डीज़ाईन का सूट पहनें।

इस दौलत का दूसरा रुख़

बात असल में यह है कि दौलत की हवस तो ख़त्म नहीं हुई और अब जब दौलत आ गई तो उसको कहां ख़र्च करें। चुनांचे उस दौलत को ख़र्च करने के ये रास्ते तलाश कर लिए। अब उसमें दौलत ख़र्च हो रही है। बहर हाल! एक तरफ़ तो दौलत इस तरह पानी की तरह बहाई जा रही है, लेकिन अभी हम लोग उसी सड़क पर एक मील दूर ही गए थे कि वहां एक अजीब मन्ज़र देखा कि हर सिग्नल पर भिखारी भीख मांग रहे हैं। चुनांचे एक भिखारी जब हमारी गाड़ी के पास आया तो मेरे दोस्त ने उस से कहा कि इस वक़्त मेरे पास पैसे नहीं हैं। उस भिखारी ने कहा कि मैं डॉलर नहीं मांग रहा हूं अगर आपके पास पीनी (रेज़गारी) हो तो वह दे दीजिए। इसलिये कि मैं खाने को तरस रहा हूं। एक तरफ़ तो यह हाल है, और दूसरी तरफ़ दो हज़ार डॉलर के मोज़े बिक रहे हैं। आख़िर दौलत जमा करने की कोई हद और इन्तिहा तो होगी। जितनी दौलत है पहले उसको तो ख़र्च कर लो, फिर बाद में और की फ़िक्र करना। यह दुनिया की हवस ऐसी न ख़त्म होने वाली हवस है जिसकी कोई हद और कोई इन्तिहा नहीं। इसको "जूउल बक़र" कहा जता है। यानी ऐसी भूख है जो कभी मिटती नहीं, चाहे जितना खा ले। ऐसी प्यास है जो कभी बुझती नहीं, चाहे जितना पानी पी ले।

हाथ में उठने वाली खुजली

हमारे ही मुल्क के एक बहुत बड़े सरमायेदार जो मुल्क के गिने चुने लोगों में शुमार होते हैं। एक दिन मेरे पास आए, बात चीत होती रही। मैंने उनसे कहा कि अल्लाह तआला ने आपको बहुत कुछ दिया है, अल्लाह तआला का बड़ा करम है। लोग आपके ऊपर रश्क करते हैं, इस दौलत को कुछ ऐसे कामों में भी ख़र्च कर दीजिए जिस से

यह दौलत आख़िरत में भी कारआमद हो जाए और अल्लाह तआ़ला ने आपको बहुत दौलत दे दी है, आपने बहुत कुछ कमा लिया। अब तौबा कर लीजिए कि सूद की लानत से बचेंगे। मेरी बात सुन कर उन्होंने सूद पर बहस शुरू कर दी कि सूद कैसे हराम है। सूद के बग़ैर दुनिया में कैसे गुज़ारा होगा, कैसे तिजारत होगी। मैंने उनको समझाया तो आख़िर में ख़ामोश हुए। फिर ख़ुद ही मुझसे कहने लगे कि मौलाना साहिब बात तो आप सही कहते हैं मगर मैं इस हाथ में उठने वाली खुजली का क्या करूं? यह खुजली किसी तरह भी ख़त्म नहीं होती। चाहे कितने कारख़ाने लगा लूं, कितनी फ़ैक्ट्रीयां लगा लूं, चाहे कितना बैंक बैलेंस जमा कर लूं मगर यह खुजली ख़त्म नहीं होती और इस खुजली का नतीजा यह है कि घर अन्दर से बर्बाद है। घर का सुकून मयस्सर नहीं। औलाद की राहत मयस्सर नहीं। आपस में लड़ाई झगड़े हैं। तो दौलत तो बहुत है लेकिन राहत और आराम मयस्सर नहीं।

दुनिया का सब से मालदार इन्सान "क़ारून"

क़ुरआने करीम में अल्लाह तआ़ला ने क़ारून के ख़ज़ाने का ज़िक्र करते हुए फ़रमायाः

"وَاِنَّ مَفَاتِحَهٗ لَتَنُوْٓءُ بِالْعُصْبَةِ اُولِى الْقُوَّةِ" (سورة القصص:٧٦)

यानी उसके ख़ज़ाने की सिर्फ़ चाबियां इतनी भारी थीं कि एक बड़ी जमाअ़त मिलकर उसको उठाया करती थी। उसकी चाबियां उठाना एक आदमी के बस में नहीं था। जब वह अपनी दौलत लेकर लोगों के पास से गुज़रा तो बाज़ लोगों ने उसकी दौलत देख कर कहाः

"يٰلَيْتَ لَنَا مِثْلَ مَآ اُوْتِىَ قَارُوْنُ، اِنَّهٗ لَذُوْ حَظٍّ عَظِيْمٍ"

काश वह दौलत हमें भी मिली होती, जैसी दौलत क़ारून को मिली है। वह तो बड़ा ख़ुश क़िस्मत आदमी है। क़ुरआने करीम ने उन लोगों के बारे में फ़रमाया कि ये लोग क़ारून की ज़ाहिरी हालत

को देख रहे थे, कि चूंकि वह बड़ी दौलत रखने वाला है इसलिये बड़ा काबिले रश्क है। लेकिन उनको यह मालूम नहीं था कि उसकी इस माल व दौलत के पीछे क्या अज़ाब छुपा है। चुनांचे जब बाद में लोगों ने कारून का अन्जाम देखा तो उन्हीं लोगों ने कहा कि अल्लाह का कितना बड़ा करम है कि उसने हमें कारून जैसा नहीं बनाया। बहर हाल! दुनिया के माल व अस्बाब की कोई हद नहीं। कहां तक तुम उसके पीछे दौड़ोगे? कहां तक तुम हसरतें करोगे? और याद रखना कि किसी भी हद पर जाकर तुम्हें क़रार नहीं आयेगा। अगर क़रार आयेगा तो वह सिर्फ़ और सिर्फ़ मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इस हिदायत में आयेगा कि क़नाअत इख़्तियार कर लो। "क़नाअत" हासिल कर ली तो इन्शा अल्लाह अल्लाह तआला की रहमत से दुनिया का थोड़ा बहुत अस्बाब जो तुम्हें मयस्सर है उसी अस्बाब में वह राहत हासिल हो जायेगी जो बड़े बड़े बादशाहों को हासिल नहीं, जो बड़े बड़े दौलत वालों और सरमायेदारों को मयस्सर नहीं।

हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह. का एक वाक़िआ

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि जब पाकिस्तान तशरीफ़ लाए तो उस वक़्त हुकूमत ने दस्तूर साज़ एसम्बली के साथ एक "तालीमाते इस्लामी बोर्ड" बनाया था। हज़रत वालिद साहिब को भी उसका मिम्बर बनाया गया, यह बोर्ड हुकूमत ही का एक शोबा था। एक मर्तबा हुकूमत ने कोई काम गड़ बड़ कर दिया तो हज़रत वालिद साहिब ने अख़्बार में हुकूमत के ख़िलाफ़ बयान दे दिया, कि हुकूमत ने यह काम ग़लत किया है। बाद में हुकूमत के कुछ लोगों से मुलाक़ात हुई तो उन्होंने वालिद साहिब से कहा कि हज़रत! आप तो हुकूमत का हिस्सा हैं, आपने हुकूमत के ख़िलाफ़ यह बयान क्यों दे दिया? हालांकि आप

तालीमाते इस्लामी बोर्ड'' के रुक्न हैं। और यह बोर्ड ''दस्तूरे साज़ एसम्बली'' का हिस्सा है। हुकूमत के ख़िलाफ़ आपका यह बयान देना मुनासिब बात नहीं है। जवाब में हज़रत वालिद साहिब ने फ़रमाया कि मैंने यह सदस्यता किसी और मक़सद के लिए क़बूल नहीं की थी। सिर्फ़ दीन की ख़ातिर क़बूल की थी, और दीन के एक ख़ादिम की हैसियत से यह मेरा फ़र्ज़ है कि जो बात मैं हक़ समझूं वह कह दूं। चाहे वह बात हुकूमत के मुवाफ़िक़ पड़े या मुख़ालिफ़ पड़े। मैं इसका मुकल्लफ़ नहीं। बस अल्लाह तआला के नज़दीक जो बात हक़ है वह वाज़ेह करूं। रहा सदस्यता का मसला, यह सदस्यता का मामला मेरी नौकरी नहीं है। आप हुकूमत के ख़िलाफ़ बात कहते हुए डरें, क्योंकि आप हुकूमत के एक मुलाज़िम अफ़सर हैं। आपकी तन्ख़्वाह दो हज़ार रुपये है। अगर यह नौकरी छूट गई तो फिर आपने ज़िन्दगी गुज़ारने का जो निज़ाम बना रखा है वह नहीं चल सकेगा। मेरा हाल यह है कि जिस दिन मैंने सदस्यता क़बूल की थी उसी दिन इस्तेफ़ा लिख कर अपनी जेब में डाल लिया था कि जब कभी मौक़ा आयेगा पेश कर दूंगा। जहां तक नौकरी का मामला है तो मुझ में और आप में यह फ़र्क़ है कि मेरा सर से पांव तक ज़िन्दगी का जो ख़र्चा है वह दो रुपये से ज़्यादा नहीं है। इसलिये अल्लाह के फ़ज़्ल व करम से मैं इस तन्ख़्वाह और इस एलॉउंस का मोहताज नहीं हूं। यह दो रुपये अगर यहां से नहीं मिलेंगे तो कहीं भी मज़दूरी करके कमा लूंगा और अपने इन दो रुपये का ख़र्च पूरा कर लूंगा। और आपने अपनी ज़िन्दगी को ऐसा बनाया है कि दो सौ रुपये से कम में आपका सूट नहीं बनता। इस वजह से आप हुकूमत से डरते हैं कि कहीं नौकरी न छूट जाए। मुझे अल्लाह का शुक्र है इसका कोई डर नहीं है।

आमदनी इख़्तियार में नहीं ख़र्च इख़्तियार में है

इसी तरह वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे

कि आमदनी बढ़ाना इन्सान के इख़्तियार में नहीं, और ख़र्च कम करना इन्सान के इख़्तियार में है। इसलिये ख़र्च कम करके क़नाअ़त इख़्तियार कर लो, इन्शा अल्लाह कोई परेशानी नहीं होगी। पेरशानी इसलिये होती है कि तुमने पहले से अपने ज़ेहन में यह मन्सूबा बना लिया कि इतनी आमदनी होनी चाहिए। जब उतनी आमदनी नहीं हुई तो अब परेशानी शुरू हो गई। लेकिन अगर तुमने अपना ख़र्च कम करके अपनी ज़िन्दगी को सादा बना लिया और अपने आपको उसके मुताबिक़ ढाल लिया और यह सोच लिया कि अगर अल्लाह तआ़ला ने कम दिया है तो कम पर गुज़ारा कर लूंगा, और अगर ज़्यादा दिया है तो उसके मुताबिक़ गुज़ारा कर लूंगा, और इसके नतीजे में अपनी आमदनी पर मुत्मइन हो गए तो फिर बस राहत और ऐश की ज़िन्दगी गुज़रेगी। इसका नाम "क़नाअ़त" है।

यह दुआ किया करें

इसी वजह से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह दुआ तल्क़ीन फ़रमाई जो बड़ी काम की दुआ है। हर मुसलमान को यह दुआ करनी चाहिए, फ़रमायाः

"اَللّٰهُمَّ قَنِّعْنِىْ بِمَا رَزَقْتَنِىْ وَبَارِكْ لِىْ فِيْهِ"

यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की क्या अ़जीब व ग़रीब दुआ है। एक एक जुम्ले पर आदमी क़ुरबान हो जाए। इस दुआ का मतलब यह है कि ऐ अल्लाह जो कुछ आपने मुझे रिज़्क़ अ़ता फ़रमाया है उस पर मुझे क़नाअ़त अ़ता फ़रमाइये और उसमें मेरे लिए बर्कत अ़ता फ़रमा दीजिए। सुब्हानल्लाह। अगर यह दुआ हमारे हक़ में क़बूल हो जाए तो फिर ज़िन्दगी के सारे मसाइल हल हो जायें। इसलिये कि "क़नाअ़त" हासिल हो जाने का नतीजा यह होगा कि हर वक़्त यह जो हमें ज़्यादा कमाने और ज़्यादा खाने की और दुनिया के अस्बाब ज़्यादा से ज़्यादा जमा करने की धुन लगी हुई है, यह धुन ख़त्म हो जायेगी, और उसके बाद सुकून और राहत हासिल

हो जायेगी। और दूसरे जुम्ले में फ़रमाया कि ऐ अल्लाह! उसमें बर्कत अता फ़रमा। बर्कत देने का मतलब यह है कि वह चीज़ अगरचे देखने में थोड़ी हो लेकिन उस चीज़ से फ़ायदा ज़्यादा पहुंच जाए। बर्कत के यह मायने हैं।

बर्कत का मतलब

आजकल लोग "बर्कत" का लफ़्ज़ इस्तेमाल तो बहुत करते हैं। जैसे किसी ने मकान बना लिया, या ख़रीद लिया, तो अब लोग मुबारक बाद देते हैं कि अल्लाह तआ़ला आपको मुबारक करे, मुबारक हो। कार मिल गई, अल्लाह तआ़ला मुबारक करे। शादी हो गई, मुबारक हो, अल्लाह तआ़ला मुबारक करे। यह बर्कत और मुबारक का लफ़्ज़ इस्तेमाल तो हम करते हैं, लेकिन इसका मतलब नहीं मालूम कि क्या मतलब है। बर्कत का मतलब यह है कि अल्लाह तआ़ला इस चीज़ को तुम्हारे लिए राहत का सबब बना दे, और ऐसा राहत का ज़रिया बना दे कि चाहे यह चीज़ मिक्दार (मात्रा) में थोड़ी हो लेकिन फ़ायदा इस चीज़ से ज़्यादा पहुंच जाए। इसी का नाम बर्कत है।

हिसाब किताब की दुनिया

आजकी दुनिया Statistics (गिन्ती, हिसाब) की दुनिया है। आज लोग पैसों को गिन्ते हैं कि इतनी आमदनी हुई, इतना पैसा और इतना रुपये और इतने डॉलर हासिल हुए। इतनी तन्ख़्वाह मिली। लेकिन उस गिन्ती के नतीजे में फ़ायदा कितना हासिल हुआ उसको कोई शुमार नहीं करता। एक अंग्रेज़ मुसलमान ने बड़ी अच्छी किताब लिखी है। जिसका नाम है The Reign of quantity "गिन्ती की हुकूमत" यानी इस वक़्त दुनिया पर जो चीज़ हुकूमत कर रही है वह "गिन्ती" और मिक़्दार (मात्रा) है, कि इतने ज़्यादा पैसे हासिल हो जायें। लेकिन इस गिन्ती के पीछे फ़ायदा कितना है, इसको कोई नहीं देखता।

बर्कत और बे बर्कती की मिसाल

जैसे एक शख़्स ने सौ रुपये कमाये। जब घर वापस जाने के लिए बस स्टॉप की तरफ़ चला तो रास्ते में एक दोस्त मिल गया। उसने कहा कि मैं तुम्हें अपनी गाड़ी में घर पहुंचा देता हूं। मुझे भी उसी तरफ़ से जाना है। चुनांचे वह आराम से घर पहुंच गया और किराए के पांच रुपये बच गए। पांच रुपये बचने का मतलब यह है कि उस सौ रुपये में अल्लाह तआला की तरफ़ से बर्कत हो गई। अगर वह दोस्त न मिलता तो उसके पांच रुपये किराए में ख़र्च हो जाते। जब बाज़ार में सौदा ख़रीदने गया तो अल्लाह तआला ने सस्ती चीज़ दिला दी, यह बर्कत हो गई। इसके उलट एक आदमी ने एक लाख रुपये कमाए, और ख़ुशी ख़ुशी एक लाख रुपये लेकर घर पहुंचा तो मालूम हुआ कि बेटे को फ़लां बीमारी लग गई है। इसलिये फ़ौरन अस्पताल ले जाना है। चुनांचे बच्चे को लेकर अस्पताल पहुंचे। डॉक्टर ने जांच करने के बाद मुख़्तलिफ़ क़िस्म के टेस्ट लिख दिए। अब सिर्फ़ टेस्ट कराने पर हज़ारों रुपये ख़र्च हो गये। फिर डॉक्टर ने कहा कि अब अस्पताल में दाख़िल करना पड़ेगा। चुनांचे अस्पताल में दाख़िल कर दिया और इस तरह वह एक लाख रुपया अस्पताल के बिल और डॉक्टरों की फ़ीस वग़ैरह में ख़र्च हो गया। इसका मतलब यह हुआ कि उस एक लाख रुपये में बे बर्कती हो गई, बर्कत न हुई।

रिश्वत और सूद में बे बर्कती

चुनांचे "रिश्वत" की जो आमदनी होती है, उसमें यही बे बर्कती होती है। अगर एक जगह से रिश्वत लेगा तो दस जगह पर रिश्वत देनी पड़ेगी। जैसे एक जगह से रिश्वत ली और अब उन पैसों को गिन गिन कर ख़ुश हो रहा है कि मेरे पास दस हज़ार के बीस हज़ार रुपये हो गए। बीस हज़ार के पचास हज़ार हो गए। पचास हज़ार से एक लाख हो गए। लेकिन उसको यह पता नहीं कि ये एक लाख रुपये जो रिश्वत लेकर जमा किए गये हैं, वे दस आदमियों को

जाकर देने पढ़ेंगे। दूसरी जगह जायेगा तो वहां देने पड़ेंगे। ये सारे पैसे इसी तरह तक़सीम हो जायेंगे। इसका नाम बे बर्कती है। 'बर्कत' अल्लाह तआला की अ़ता है। यह इन्सान के हाथ के ज़ोर से हासिल नहीं होती। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह दुआ किया करो कि ऐ अल्लाह! जो कुछ आपने मुझे अ़ता फ़रमाया है उस पर क़नाअ़त अ़ता फ़रमाइए और उसमें मुझे बर्कत अ़ता फ़रमा दीजिए।

दारुल उलूम की तन्ख़्वाहों में बर्कत

हमारे दारुल उलूम को देख लीजिए। वहां के उसतज़ों और कारकुनों की तन्ख़्वाहें गिन्ती के एतिबार से कम हैं, लेकिन आप उनमें से जिस से चाहें पूछ लें कि अल्लाह तआ़ला ने उनकी तन्ख़्वाह में इतनी बर्कत अ़ता फ़रमाई है, और उस से इतने काम निकल आते हैं कि बाहर रहने वालों की बड़ी तन्ख़्वाहों में वह काम नहीं होता। आंखों से नज़र आता है, यह है बर्कत, जो अल्लाह तआ़ला की अ़ता है। और यह बर्कत उस वक़्त हासिल होती है जब इन्सान क़नाअ़त इख़्तियार करता है, और अल्लाह तआ़ला से रुजू करता है।

दुआ का तीसरा जुम्ला

इस दुआ में तीसरा जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया किः

"وَاخْلُفْ عَلٰى كُلِّ غَائِبَةٍ لِّي مِنْكَ بِخَيْرٍ"

यानी ऐ अल्लाह! जिन चीज़ों के बारे में मेरा दिल चाहता था कि वे चीज़ें मुझे मिल जायें, मगर नहीं मिलीं। ऐ अल्लाह मुझे उनके बदले में और बेहतर चीज़ें अ़ता फ़रमा दीजिए जो आपके नज़दीक बेहतर हों। गोया कि इस दुआ में तीन जुम्ले इर्शाद फ़रमाए। पहले जुम्ले में फ़रमाया कि क़नाअ़त दे दीजिए, दूसरे में बर्कत दे दीजिए, और जिन चीज़ों के बारे में मेरा दिल चाहता था कि मुझे मिलें मगर नहीं मिलीं, आपने अपनी तक़दीर और फ़ैसले से मुझे अ़ता नहीं फ़रमाईं। तो ज़ाहिर है कि इसमें ज़रूर कोई हिक्मत होगी। ऐ

अल्लाह उनके बदले में वह चीज़ दे दीजिए जो आपके नज़दीक मेरे हक़ में बेहतर हो। जैसे दिल चाहता था कि मेरे पास कार हो, मगर नहीं मिली, तो ऐ अल्लाह! जब आपने मुझे ख़्वाहिश के बावजूद कार नहीं दी तो यक़ीनन इसमें कोई न कोई हिक्मत और मस्लिहत होगी। ऐ अल्लाह! उसके बदले में वह चीज़ दे दीजिए जो आपके नज़दीक बेहतर हो। अगर इन्सान के हक़ में ये तीन दुआएं क़बूल हो जायें कि क़नाअ़त मिल जाए, जो कुछ मिला है उसमें बर्कत हासिल हो जाए, और जो नहीं मिला उसकी जगह उस से अच्छी चीज़ मिल जाए तो फिर दुनिया के अन्दर और क्या चाहिए।

क़नाअ़त बड़ी दौलत है

यह क़नाअ़त बड़ी दौलत है। इस से बड़ी दौलत कोई और चीज़ नहीं। आज लोग रुपये पैसे को दौलत समझते हैं। कोठी, बंगले को और माल व अस्बाब को दौलत समझते हैं। याद रखिए इनमें से कोई चीज़ दौलत नहीं। असल दौलत "क़नाअ़त है। हदीस में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"لَيْسَ الْغِنٰى عَنْ كَثْرَةِ الْعَرْضِ وَلٰكِنَّ الْغِنٰى غِنَى النَّفْسِ" (بخاری شریف)

यानी सामान की कसरत और मालदारी का नाम ग़िना नहीं है बल्कि नफ़्स के ग़नी होने का नाम "मालदारी" है, कि इन्सान का दिल बे नियाज़ हो। किसी के सामने हाथ न फैलाए, किसी के सामने अपनी ज़रूरत ज़ाहिर न करे और ना जायज़ तरीक़ों से दौलत जमा करने की फ़िक्र न करे। बस जो कुछ मिला हुआ है उस पर मुत्मइन हो, और जो कुछ नहीं मिला उस पर यह इत्मीनान हो कि वह मेरे हक़ में बेहतर नहीं था। अगर मेरे हक़ में बेहतर होता तो मिलता। नहीं मिला तो अल्लाह तआ़ला के नज़दीक मेरे लिए इसी में बेहतरी होगी।

हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. और क़नाअ़त

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में एक

फ़रिश्ता आता है और अर्ज़ करता है कि आप हुक्म करें तो यह उहद पहाड़ आपके लिए सोने का बना दिया जाए, और यह सारा सोना आपकी मिल्कियत हो। सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन्कार फ़रमा दिया कि नहीं, ऐसा न करें। क्योंकि मैं तो इस तरह ज़िन्दगी गुज़ारना चाहता हूं कि खाना मिल जाए तो शुक्र करके खा लूं, और न मिले तो सब्र करूं, ताकि शुक्र की नेमत भी हासिल हो जाए और सब्र की नेमत भी हासिल हो जाए। और माल की ज़्यादती मुझे मतलूब नहीं, मुझे तो ऐसा "ग़िना" यानी मालदारी चाहिए जो अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू कराने वाला हो। चुनांचे यह दुआ भी फ़रमाई:

"اَللّٰهُمَّ اِنِّیْ اَعُوْذُبِكَ مِنْ كُلِّ غِنًى يُطْغِيْنِیْ"

यानी ऐ अल्लाह! मैं ऐसी मालदारी से पनाह मांगता हूं जो मुझे सर्कश बना दे"

खुलासा

खुलासा अर्ज़ करने का यह है कि ये हदीसें दो चीज़ों का सबक़ दे रही हैं, एक यह कि जो कुछ मिला हुआ है उस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करने की आदत डालो, छोटी से छोटी नेमत जो बज़ाहिर देखने में छोटी मालूम हो रही है, उस पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करो, और नाशुक्री से बचो। थोड़ी देर के लिए सोचा करो कि अल्लाह तआला की क्या क्या नेमतें इस वक़्त मेरे ऊपर बरस रही हैं। मेरा वजूद, मेरी ज़िन्दगी, मेरी सांसों की आना जाना, मेरी आंखें, मेरे कान, मेरे दांत, मेरा मुंह, मेरे हाथ, मेरे पांव। ये सब नेमतें अल्लाह तआला ने मुझे अता कर रखी हैं। ये ऐसी नेमतें हैं कि अगर इनमें से एक नेमत भी छिन जाए तो लाखों रुपये ख़र्च करने के बावजूद हासिल न हो। सेहत, आफ़ियत, घर, घर वाले, सुकून, आराम, रहात और इन सब नेमतों का तसव्वुर करके इन पर अल्लाह तआला का शुक्र अदा करो। दूसरा सबक़ यह मिला कि

दुनिया के मामले में अपने से ऊपर वाले को मत देखो, बल्कि नीचे वाले को देखो, और दीन के मामले में अपने से ऊपर वाले को देखो। और तीसरा सबक़ यह मिला कि जो कुछ मिला हुआ है, उस पर "क़नाअ़त" इख़्तियार कर लो। लेकिन क़नाअ़त का यह मतलब नहीं है कि जायज़ तदबीर भी इख़्तियार मत करो। इसलिये कि जायज़ तदबीर इख़्तियार करने से कोई मना नहीं करता। जैसे तिजारत कर रहा है, तो तिजारत करे। नौकरी कर रहा है तो नौकरी करे। खेती बाड़ी कर रहा है तो खेती बाड़ी करे, लेकिन उस जायज़ तदबीर के नतीजे में हलाल तरीक़े से जो कुछ मिल रहा है उस पर मुत्मइन हो जाए, और उस पर क़नाअ़त इख़्तियार कर ले, और यह न सोचे कि जो मैंने मन्सूबा बनाया है उसमें जायज़ तरीक़े से तो कम मिल रहा है, इसलिये ना जायज़ तरीक़े से ज़्यादा हासिल कर लूं। ऐसा न करे बल्कि क़नाअ़त इख़्तियार करे, कि ऐ अल्लाह! मुझे क़नाअ़त अ़ता फ़रमा दीजिए, और जो कुछ आपने नेमतें अ़ता फ़रमाई हैं, इनमें बर्कत अ़ता फ़रमाइये। अल्लाह तआ़ला मुझे और आप सब को अपने फ़ज़्ल व करम से यह दौलत अ़ता फ़रमा दे, और नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इन इर्शादात पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

दूसरों को तक्लीफ़ मत दीजिए

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

عن ابی موسی الاشعری رضی اللّٰہ عنہ قال: قال رسول اللّٰہ صلی اللّٰہ علیہ وسلم: المسلم من سلم المسلمون من لسانہ و یدہ۔ (ترمذی شریف)

वह हकीकी मुसलमान नहीं हैं

हज़रत अबू मूसा अश्अरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया: मुसलमान वह है जिसकी ज़बान और हाथ से दूसरे मुसलमान महफ़ूज़ रहें। यानी न उसकी ज़बान से किसी को तक्लीफ़ पहुंचे और न उसके हाथ से किसी को तक्लीफ़ पहुंचे। गोया कि इस हदीस में मुसलमान की पहचान बताई कि मुसलमान कहते ही उसको हैं जिसमें यह सिफ़त पाई जाये। लिहाज़ा जिस मुसलमान के हाथ और ज़बान से दूसरे लोग महफ़ूज़ न रहें हकीकत में वह शख़्स मुसलमान कहलाने का मुस्तहिक नहीं हैं। जैसे एक शख़्स नमाज़ नहीं पढ़ता तो उसके नमाज़ न पढ़ने की वजह से कोई मुफ़्ती उस पर कुफ़्र का फ़तवा तो नहीं लगायेगा कि यह शख़्स चूंकि नमाज़ नहीं पढ़ता इसलिये यह काफ़िर हो गया, लेकिन वह हकीकत में मुसलमान कहलाने का मुस्तहिक नहीं। इसलिये कि वह अल्लाह के बताये हुए सब से अहम फ़रीज़े को अन्जाम नहीं दे रहा है। इसी तरह से जिस शख़्स के हाथ और ज़बान से लोगों को तक्लीफ़ पहुंचे तो उस पर भी अगरचे मुफ़्ती कुफ़्र का फ़तवा नहीं लगायेगा लेकिन वह हकीकत

में मुसलमान कहलाने का मुस्तहिक़ नहीं है, इसलिये कि वह मुसलमानों वाला काम नहीं कर रहा है। यह इस हदीस का मतलब है।

मुआशरत का मतलब

इस्लाम के पांच शोबे हैं:— (१) अ़क़ायद (२) इबादात (३) मामलात (४) अख़्लाक़ (५) मुआ़शरत

यह हदीस हक़ीक़त में इस्लाम के इन पांच शोबों में से एक शोबे यानी "मुआ़शरत" की बुनियाद है। "मुआ़शरत" का मतलब यह है कि इस दुनिया में कोई भी इन्सान तन्हा नहीं रहता, और न ही तन्हा रहने का हुक्म दिया गया है, और जब वह दुनिया में रहता है तो उसको किसी न किसी से वास्ता पड़ता है, घर वालों से वास्ता, दोस्तों से वास्ता, पड़ौसियों से वास्ता, बाज़ार वालों से वास्ता और जिस जगह पर वह काम करता है वहां के लोगों से वास्ता पड़ता है। लेकिन सवाल यह है कि जब दूसरों से वास्ता पड़े तो उनके साथ किस तरह का मामला करना चाहिये? इसको मुआशरत के अहकाम कहा जाता है। यह भी दीन के पांच बड़े शोबों में से एक शोबा है। लेकिन हमारी नादानी और बे अ़मली की वजह से दीन का यह शोबा बिल्कुल नज़र अन्दाज़ होकर रह गया है, और इसको दीन का हिस्सा ही नहीं समझा जाता, और इसके बारे में अल्लाह और अल्लाह के रसूल ने जो अहकाम अ़ता फ़रमाये हैं उनकी तरफ़ तवज्जोह नहीं होती।

मुआ़शरत के अहकाम की अहमियत

अल्लाह तआ़ला ने भी "मुआ़शरत" के अहकाम बयान करने का बहुत एहतिमाम फ़रमाया है, जैसे मुआ़शरत का एक मसला यह है कि जब किसी दूसरे शख़्स के घर में जाओ तो अन्दर दाख़िल होने से पहले उस से इजाज़त लो, कि मैं अन्दर आ सकता हूं या नहीं? इस इजाज़त लेने को अ़रबी ज़बान में "इस्तीज़ान" कहा जाता है।

अल्लाह तआला ने "इस्तीज़ान" के अहकाम बयान करने के लिये कुरआने करीम में पूरे दो रुकू नाज़िल फ़रमाये, जब कि दूसरी तरफ़ कुरआने करीम में नमाज़ पढ़ने का हुक्म शायद बासठ जगह आया है। लेकिन नमाज़ किस तरह पढ़ी जाये? इसकी तफ़सील कुरआने करीम ने नहीं बतायी, बल्कि उसको हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बयान करने पर छोड़ दिया। लेकिन इजाज़त लेने की तफ़सील को कुरआने करीम ने ख़ुद बयान फ़रमाया। हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बयान करने पर नहीं छोड़ा, इसके अलावा कुरआने करीम में सूरः अल-हुजुरात का एक बहुत बड़ा हिस्सा मुआशरती अहकाम के ऊपर मुश्तमिल है। इसलिये एक तरफ़ तो मुआशरती अहकाम की इतनी अहमियत है, लेकिन दूसरी तरफ़ हमारी रोज़ मर्रा की ज़िन्दगी में हमने इन अहकाम पर अमल को छोड़ रखा है, और इन अहकाम का ख़्याल नहीं करते।

हज़रत थानवी रह. का मुआशरत के अहकाम को ज़िन्दा करना

अल्लाह तआला ने हकीमुल उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि से इस दौर में दीन की तजदीद का काम लिया, दीन के वे हिस्से जो लोगों ने पीठ पीछे डाल दिये थे और दीन से उनको ख़ारिज ही कर दिया था, आपने उनकी अहमियत बतायी, और इसके बारे में लोगों को अहकाम बताये और अपनी ख़ानक़ाह में इसकी अमली तर्बियत का एहतिमाम फ़रमाया। आम तौर पर लोग यह समझते थे कि ख़ानक़ाह उसको कहते हैं जिसमें हुजरों के अन्दर बैठ कर लोग अल्लाह अल्लाह कर रहे हों, और अपने ज़िक्र तस्बीह और इबादत में मश्गूल हों, इसके आगे कुछ न हो। लेकिन हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने अपनी ख़ानकाह में ज़िक्र तस्बीह और नवाफ़िल पर इतना ज़ोर नहीं दिया जितना आपने मुआशरत के इस मसले पर ज़ोर दिया कि अपनी ज़ात से किसी

दूसरे इन्सान को तक्लीफ़ न पहुंचे। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि जो तालिबीन अपनी इस्लाह के लिये आते हैं, अगर उनमें से किसी के बारे में मुझे यह इत्तिला मिलती है कि जो मामूलात उसको बताये गये थे वह उनमें कोताही करता है, जैसे दस तस्बीह के बजाए वह पांच तस्बीहात पढ़ता है, तो इस इत्तिला से रंज तो होता है कि उसको एक तरीक़ा बताया गया था, उसने उस पर क्यों अमल नहीं किया, लेकिन जब किसी के बारे में मुझे यह इत्तिला मिलती है कि उसने "मुआशरत" के अहकाम में से किसी हुक्म की ख़िलाफ़ वर्ज़ी की है और उसने अपनी ज़ात से दूसरे मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाई है तो मुझे उस शख़्स से नफ़रत हो जाती है।

पहले इन्सान तो बन जाओ

इसी तरह हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि का एक मशहूर जुम्ला है, वह यह है कि अगर तुम्हें सूफ़ी बनना है, या आबिद ज़ाहिद बनना है, तो इस मक़सद के लिये बहुत सारी ख़ानक़ाहें खुली हैं, वहां चले जाओ। अगर इन्सान बनना है तो यहां आ जाओ, इसलिये कि यहां तो इन्सान बनाया जाता है। मुसलमान बनना और आलिम बनना और सूफ़ी बनना तो बाद की बात है, ऊंचे दर्जे की बात है, अरे पहले इन्सान तो बन जाओ, और पहले जानवरों की सफ़ से तो निकल जाओ। और इन्सान उस वक़्त तक इन्सान नहीं बनता जब तक उसको इस्लामी मुआशरत के आदाब न आते हों, और उन पर अमल न करता हो।

जानवरों की तीन क़िस्में

इमाम ग़ज़ाली रहमतुल्लाहि अलैहि ने एहयाउल–उलूम में लिखा है कि अल्लाह तआला ने दुनिया में तीन क़िस्म के जानवर पैदा फ़रमाये हैं। जानवरों की एक क़िस्म वह है जो लोगों को फ़ायदा पहुंचाती है, शायद ही कभी उनसे नुक़सान पहुंचता हो, जैसे गाय,

बकरी वग़ैरह है, ये जानवर ऐसे हैं जो दूध के ज़रिये तुम्हें फ़ायदा पहुंचाते हैं, जब दूध देना बंद कर देगी तो तुम उसको काट कर उसका गोशत खा लोगे, और इस तरह तुम्हें फ़ायदा पहुंचाने के लिये अपनी जान दे देंगे, और ये जानवर नुक़सान नहीं पहुंचाते। जानवरों की दूसरी क़िस्म वह है जो तक्लीफ़ ही पहुंचाते हैं, और उनका फ़ायदा बज़ाहिर कुछ नहीं है, जैसे सांप, बिच्छू और दरिन्दे वग़ैरह, ये सब तक्लीफ़ देने वाले जानवर हैं, जब किसी इन्सान से मिलेंगे तो उसको तक्लीफ़ ही देंगे, डंक मारेंगे। जानवरों की तीसरी क़िस्म वह है जो न तक्लीफ़ देते हैं और न ही फ़ायदा पहुंचाते हैं, जैसे जंगल में रहने वाले जानवर लोमड़ी गीदड़ वग़ैरह, न उनसे इन्सान को कोई ख़ास फ़ायदा पहुंचता है और न कोई ख़ास नुक़सान पहुंचता है।

जानवरों की इन तीन क़िस्मों को बयान करने के बाद इमाम ग़ज़ाली रह्मतुल्लाहि अ़लैहि इन्सानों से मुख़ातिब होकर फ़रमाते हैं कि ऐ इन्सान! तू अशरफ़ुल-मख़्लूक़ात है, और सारे जानदारों पर तुझे फ़ज़ीलत दी गयी है, तू अगर इन्सान नहीं बनता बल्कि जानवर बनना चाहता है तो कम से कम पहली क़िस्म का जानवर बन जा, जो दूसरों को फ़ायदा तो पहुंचाते हैं और नुक़सान नहीं पहुंचाते। जैसे गाय बकरी वग़ैरह। और अगर तू इस से भी नीचे आना चाहता है तो तीसरी क़िस्म का जानवर बन जा, जो न नुक़सान पहुंचाते हैं और न फ़ायदा पहुंचाते हैं। और अगर तूने दूसरों को फ़ायदे के बजाये नुक़सान पहुंचाना शुरू कर दिया तो फिर सांप बिच्छू और दरिन्दों की क़िस्म में शामिल हो जायेगा।

हमने इन्सान देखे हैं

बहर हाल! मुसलमान ग़ैर मुस्लिम की बात बाद की है, आ़लिम ग़ैर आ़लिम और आ़बिद ग़ैर आ़बिद की बात तो बहुत बाद की है, पहला मसला यह है कि इन्सान इन्सान बन जाये, और इन्सान बनने के लिये ज़रूरी है कि वह इस्लामी मुआ़शरत को क़बूल करे और

उसकी ज़ात से किसी दूसरे को मामूली तक्लीफ़ भी न पहुंचे। उसके हाथ से न उसकी ज़बान से और न उसके किसी फ़ेल से कोई तक्लीफ़ पहुंचे। एक बार हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने हद दर्जे तवाज़ो से फ़रमाया कि पक्के और पूरे सौ फ़ीसद इन्सान तो हम भी नहीं बन सके, लेकिन अल्लाह का शुक्र है कि इन्सानों को देख लिया कि इन्सान कैसा होता है, और कोई बैल आकर हमें धोखा नहीं दे सकता, कि मैं इन्सान हूं। इसलिये अगर कभी इन्सान बनना चाहेंगे तो इन्शा अल्लाह इन्सान ही बनेंगे और इन्सान के धोखे में बैल नहीं बनेंगे।

दूसरों को तक्लीफ़ से बचाओ

देखिये नवाफ़िल, मुस्तहब और ज़िक्र व अज़कार और तस्बीहात का मामला तो यह है कि अगर करोगे तो इन्शा अल्लाह आख़िरत में उसका सवाब मिलेगा, और अगर नहीं करोगे तो आख़िरत में यह पकड़ नहीं होगी कि फ़लां नफ़िल क्यों नहीं पढ़ी? ज़िक्र व अज़कार क्यों नहीं किया? अलबत्ता ये सब फ़ज़ीलत वाले काम हैं, ज़रूर करने चाहियें और करने पर आख़िरत में सवाब मिलेगा। लेकिन न करने पर पकड़ नहीं होगी। दूसरी तरफ़ अगर तुम्हारी ज़ात से दूसरे को तक्लीफ़ पहुंच गयी तो यह बड़ा गुनाह हो गया, अब उसकी आख़िरत में पकड़ हो जायेगी कि ऐसा काम क्यों किया था। यही वजह है कि अगर किसी वक़्त नवाफ़िल में और इस्लाम के मुआशरती अहकाम में टकराव हो जाये कि या तो नवाफ़िल पढ़ लो या इस मुआशरती हुक्म पर अमल करते हुए दूसरे को तक्लीफ़ से बचा लो तो इस सूरत में शरीअत का हुक्म यह है कि नवाफ़िल को छोड़ दो और इस मुआशरती हुक्म पर अमल करो।

जमाअत के साथ नमाज़ की अहमियत

देखिये मर्दों को मस्जिद में जमाअत के साथ फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने की सख़्त ताकीद फ़रमायी गयी है, यहां तक कि एक हदीस में हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरा दिल चाहता है कि किसी दिन ऐसा करूं कि जब जमाअ़त का वक़्त आ जाये तो किसी को इमाम बना कर ख़ुद बाहर जाऊं और घरों में जाकर देखूं कि कौन कौन लोग मस्जिद में नहीं आये बल्कि घर में बैठे रहे, फिर उनके घरों को आग लगा दूं। इसलिये कि वे लोग अल्लाह के इस फ़रीज़े में कोताही कर रहे हैं। इस से पता चला कि जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने की कितनी ताकीद है। चुनांच बाज़ फ़ुक़हा ने जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने को सुन्नते मुअक्कदा फ़रमाया है, लेकिन दूसरे बाज़ फ़ुक़हा ने जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने को वाजिब क़रार दिया है, और जमाअ़त से नमाज़ अदा करना कामिल तौर पर अदा करना है, और तन्हा अदा करना नाक़िस अदा करना है। चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने अमल से इसकी ताकीद और अहमियत का इस तरह इज़हार फ़रमाया कि वफ़ात की बीमारी में जब आपके लिये चलना मुश्किल था, और जब सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को आपने इमाम बना दिया था, उस वक़्त भी आप दो आदमियों का सहारा लेकर जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने के लिये मस्जिद में तश्रीफ़ लाये। इस से जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने की सख़्त ताकीद मालूम होती है।

ऐसे शख़्स के लिये मस्जिद में आना जायज़ नहीं

लेकिन दूसरी तरफ़ तमाम फ़ुक़हा का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि अगर कोई शख़्स ऐसी बीमारी में मुब्तला है जो लोगों के लिये घिन का सबब होती है, जिसकी वजह से बदबू आती है, ऐसे शख़्स को मस्जिद में जाकर जमाअ़त से नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं, और सिर्फ़ यह नहीं कि जमाअ़त से नमाज़ पढ़ने का हुक्म साक़ित हो गया बल्कि जमाअ़त से नमाज़ पढ़ना जायज़ ही नहीं। अगर जमाअ़त से नमाज़ पढ़ेगा तो गुनाहगार होगा। इसलिये कि अगर वह मस्जिद में जमाअ़त से नमाज़ पढ़ेगा तो उसके पास खड़े होने वालों को तक्लीफ़ होगी। देखिये जमाअ़त जैसी अहम इबादत को सिर्फ़ लोगों को

तक्लीफ़ से बचाने के लिये छुड़ा दिया गया।

हज्रे अस्वद को बोसा देते वक़्त दूसरों को तक्लीफ़ देना

हज्रे अस्वद की फ़ज़ीलत और अहमियत कौन मुसलमान नहीं जानता, और फ़रमाया गया कि हज्रे अस्वद को बोसा देना ऐसा है जैसे अल्लाह जल्ल शानुहू से मुसाफ़ा करना, और हज्रे अस्वद को बोसा देना इन्सान के गुनाहों को झाड़ देता है, और खुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज्रे अस्वद को बोसा दिया, सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने दिया, यह उसकी फ़ज़ीलत की बात है, लेकिन दूसरी तरफ़ यह फ़रमाया गया कि अगर हज्रे अस्वद को बोसा देने के लिये अगर धक्का देना पड़े और उसके नतीजे में दूसरे को तक्लीफ़ पहुंच जाने का अन्देशा हो तो फिर उस वक़्त हज्रे अस्वद को बोसा देना जायज़ नहीं बल्कि गुनाह है। आप देखते जायें कि शरीअत इस बात का कितना एहतिमाम करती है कि दूसरों को अपनी ज़ात से अदना सी तक्लीफ़ पहुंचने से बचाया जाये, जब इतनी अहम चीज़ों को सिर्फ़ इसलिये छुड़ाया जा रहा है कि अपनी ज़ात से दूसरों को तक्लीफ़ न पहुंचे तो फिर नवाफ़िल और मुस्तहब चीज़ों के ज़रिये दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाना कहां जायज़ होगा?

बुलन्द आवाज़ से तिलावत करना

जैसे कुरआने करीम की तिलावत करना एक इबादत है, यह इतनी अहम इबादत है कि एक हर्फ़ पर दस नेकियां लिखी जाती हैं। गोया कि तिलावत के वक़्त नेकियों का ख़ज़ाना जमा हो जाता है। और फ़रमाया कि सारे अज़कार और तस्बीहों में सब से अफ़ज़ल कुरआने करीम की तिलावत है, और तिलावत में अफ़ज़ल यह है कि बुलन्द आवाज़ से की जाये, आहिस्ता आवाज़ के मुक़ाबले में बुलन्द आवाज़ से तिलावत करने पर ज़्यादा सवाब मिलता है, लेकिन अगर तुम्हारी तिलावत की वजह से किसी की नींद या आराम में ख़लल आ

रहा हो तो फिर बुलन्द आवाज़ से तिलावत करना जायज़ नहीं है।

तहज्जुद के वक़्त आप सल्ल. के उठने का अन्दाज़

हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तहज्जुद की नमाज़ के लिये उठते, सारी उम्र कभी तहज्जुद की नमाज़ नहीं छोड़ी, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हम पर आसानी फ़रमाते हुए तहज्जुद की नमाज़ वाजिब नहीं फ़रमायी, लेकिन हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर तहज्जुद की नमाज़ वाजिब थी, आपने कभी तहज्जुद की नमाज़ क़ज़ा नहीं फ़रमायी। लेकिन हदीस शरीफ़ में आता है कि जब आप तहज्जुद की नमाज़ के लिये उठते तो आहिस्ता से उठते और आहिस्ता से दरवाज़ा खोलते कि कहीं मेरे इस अ़मल की वजह से मेरी बीवी की आंख न खुल जाये और उनकी नींद ख़राब न हो जाये, सारा क़ुरआन और हदीस इस बात से भरा हुआ है कि अपनी ज़ात से दूसरों को तक्लीफ़ न पहुंचाओ और क़दम क़दम पर शरीअ़त ने इसका एहतिमाम किया है ।

लोगों के गुज़रने की जगह में नमाज़ पढ़ना

ऐसी जगह पर नमाज़ पढ़ने के लिये खड़ा होना जो लोगों के गुज़रने की जगह है, जायज़ नहीं है। बाज़ लोग इसका ख़्याल नहीं करते, पूरी मस्जिद ख़ाली पड़ी है मगर पिछली सफ़ में जाकर नमाज़ के लिये खड़े हो गये और नियत बांध ली, इसका नतीजा यह होता है कि गुज़रने वाला या तो उसके पीछे से लम्बा चक्कर काट कर गुज़रे या नमाज़ी के सामने से गुज़रने का जुर्म करे, इस तरीक़े से नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं बल्कि गुनाह है।

"मुस्लिम" में सलामती दाख़िल है

बहर हाल! हदीस शरीफ़ में फ़रमायाः

المسلم من سلم المسلمون من لسانه و يده۔

यानी मुसलमान वह है जिसके हाथ और ज़बान से मुसलमान

महफ़ूज़ और सालिम रहें। लफ़्ज़ 'अल–मुसलिमु' का माद्दा है 'स–ल–म' और लफ़्ज़ सलामती भी इसी माद्दे और इन्हीं अल्फ़ाज़ से मिलकर बना है, गोया इशारा इस बात की तरफ़ कर दिया कि मुसलमान लफ़्ज़ के अन्दर सलमाती लफ़्ज़ दाख़िल है।

अस्सलामु अ़लैकुम का मतलब

दूसरे मज़ाहिब के लोग जब आपस में मुलाक़ात करते हैं तो कोई 'हैलो' कहता है, कोई 'गुड नाईट' और कोई 'गुड मॉरनिंग' कहता है, और कोई 'नमस्ते' और कोई 'आदाब' कहता है। मुख़्तलिफ़ लोगों ने मुलाक़ात के वक़्त दूसरे को मुख़ातब करने के लिये मुख़्तलिफ़ लफ़्ज़ इख़्तियार कर रखे हैं, लेकिन हमें इस्लाम ने यह तालीम दी कि जब किसी दूसरे से मुलाक़ात करो तो यह कहो "अस्सलामु अ़लैकुम" जिसके मायने यह हैं कि तुम पर सलामती हो, एक तरफ़ तो इसमें सलामती की दुआ है जब कि दूसरे कलिमात कहने में कोई दुआ नहीं है। इस वास्ते सुनने वाले मुख़ातब को उन अल्फ़ाज़ के ज़रिये कोई फ़ायदा नहीं पहुंचता, लेकिन जब आपने "अस्सलामु अ़लैकुम व रहमतुल्लाहि व ब–रकातुहू" कहा तो आपने मुख़ातब को तीन दुआएं दीं, यानी तुम पर अल्लाह की सलामती नाज़िल हो, तुम पर अल्लाह की रहमत नाज़िल हो और उसकी बर्कत नाज़िल हो। अगर एक मर्तबा का सलाम भी दूसरे मुसलमान के हक़ में अल्लाह की बारगाह में क़बूल हो गया तो सारी ज़िन्दगी का बेड़ा पार हो जायेगा, और इस सलाम के ज़रिये दूसरा सबक़ यह सिखा दिया कि दो आदमियों के मिलने के वक़्त जो चीज़ सब से ज़्यादा मतलूब है, वह यह है कि उसकी तरफ़ से उसके ऊपर सलामती हो और उसकी ज़ात से उसको कोई तक्लीफ़ न पहुंचे, और मुसलमान मुलाक़ात के वक़्त सब से पहले यह पैग़ाम दे दे कि मैं तुम्हारे लिये सलामती बन कर आया हूं। मैं तुम्हारे लिये अ़ज़ाब और तक्लीफ़ बन कर नहीं आया हूं।

ज़बान से तक्लीफ़ न देने का मतलब

फिर इस हदीस में दो लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाये, एक "उसकी ज़बान से" और दूसरा "उसके हाथ से" यानी दूसरे मुसलमान दो चीज़ों से महफ़ूज़ रहें, एक उसकी ज़बान से और दूसरे उसके हाथ से। ज़बान से महफ़ूज़ रहने का मतलब यह है कि वह कोई ऐसा कलिमा न कहे जिस से सुनने वाले का दिल टूटे और उसको तक्लीफ़ पहुंचे, उसके दिल को तक्लीफ़ पहुंचे, अगर मान लीजिए किसी दूसरे मुसलमान की किसी बात पर तन्क़ीद करनी है तो भी ऐसे अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करे जिस से उसका दिल बिल्कुल न दुखे, या कम से कम दुखे, जैसे उस से कह दें कि मुझे आपकी फ़लां बात अच्छी नहीं लगी, आप फ़लां बात पर ग़ौर कर लें वह बात इस्लाह के लायक़ है, और शरीअ़त के मुताबिक़ नहीं है। लेकिन कोई ऐसा तरीक़ा इख़्तियार करना जिस से उसकी बदगोई हो, जैसे गाली गुफ़तार इख़्तियार करना या गाली गुफ़तार से बढ़ कर ताना देना, ताने का मतलब यह है कि बराहे रास्त तो कोई बात नहीं की लेकिन लपेट कर बात कह दी, और यह ताना ऐसी चीज़ है जो दिलों में ज़ख़्म डाल देता है। अ़रबी शायर का एक शेर है:

جراحات السنان لها التيام ولا يلتام ما جرح اللسان

यानी नेज़े का ज़ख़्म भर जाता है लेकिन ज़बान का ज़ख़्म नहीं भरता। इसलिये अगर आपको किसी की कोई बात नागवार है तो साफ़ साफ़ उस से कह दो कि फ़लां बात आपकी मुझको पसंद नहीं, क़ुरआन का इरशाद है:

يَآ اَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا (سورة الاحزاب)

ऐ ईमान वालो! अल्लाह से डरो और सीधी बात करो, लिपटी हुई बात मतलूब और पसन्दीदा नहीं है। आजकल फ़िक़रे बाज़ी एक फ़न बन गया है, फ़िक़रे बाज़ी का मतलब यह है कि ऐसी बात की जाये कि दूसरा शख़्स सुनकर तिलमिलाता ही रह जाये, बराहे रास्त उस

से वह बात नहीं कही, बल्कि लपेट कर कह दी, ऐसी बातें करने वालों की लोग ख़ूब तारीफ़ भी करते हैं कि यह शख़्स तो बड़ा ज़बरदस्त लिखने वाला है और बड़ा लतीफ़ मज़ाक़ करने वाला है।

तंज़ का एक बड़ा अजीब वाक़िआ

एक शख़्स ने शैख़ुल हिन्द हज़रत मौलाना महमूदुल हसन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की किसी किताब के जवाब में एक मक़ाला लिखा और उस मक़ाले में हज़रत शैख़ुल हिन्द रहमतुल्लाहि अलैहि पर कुफ़्र का फ़तवा लगा दिया, अल्लाह अपनी पनाह में रखे। हज़रते वाला के एक मुख़्लिस मोतक़िद थे, उन्होंने उसके जवाब में फ़ारसी में दो शेर कहे, वे शेर अदबी एतिबार से आजकल के तंज़ के मज़ाक़ के लिहाज़ से बहुत आला दर्जे के थे, वे शेर ये थे:

मुरा काफ़िर गर गुफ़्ती ग़मे नेस्त
चिराग़े किज़्ब न बुवद फ़रोग़े
मुसलमानत बख़्वानम दर जवाबश
दरोग़े रा जज़ा बाशद दरोग़े

यानी मुझे अगर तुमने काफ़िर कहा है तो मुझे कोई ग़म नहीं है क्योंकि झूठ का चिराग़ कभी जला नहीं करता, तुमने मुझे काफ़िर कहा मैं तुम्हें उसके जवाब में मुसलमान कहता हूं, इसलिये कि झूठ का बदला झूठ ही हो सकता है। यानी तुमने मूझे काफ़िर कह कर झूठ बोला, उसके जवाब में मैं तुम्हें मुसलमान कह कर झूठ बोल रहा हूं। मतलब यह है कि दर हक़ीक़त तुम मुसलमान नहीं हो, अगर यह जवाब किसी अदीब और ज़ोक़ रखने वाले को सुनाया जाये तो वह इस पर बहुत दाद देगा और इसको पसन्द करेगा, इसलिये कि चुभता हुआ जवाब है। इसलिये कि दूसरे शेर के पहले मिसरे में यह कह दिया कि मैं तुम्हें मुसलमान कहता हूं लेकिन दूसरे मिसरे ने इस बात को बिल्कुल उलट दिया, यानी झूठ का बदला तो झूठ ही होता है, तुमने मुझे काफ़िर कह कर झूठ बोला मैं तुम्हें मुसलमान कह कर

झूठ बोलता हूं। बहर हाल! ये शेर लिख कर हज़रत के जो मोतकिद थे वह हज़रते वाला की ख़िदमत में लाये, हज़रत शैख़ुल हिन्द रहमतुल्लाहि अलैहि ने जब ये शेर सुने तो फ़रमाया कि तुमने शेर तो बहुत ग़ज़ब के कहे और बड़ा चुभता हुआ जवाब दे दिया लेकिन मियां तुमने लपेट कर उसको काफ़िर कह तो दिया, और हमारा यह तरीक़ा नहीं है कि दूसरों को काफ़िर कहें, चुनांचे वे शेर नहीं भेजे।

फिर हज़रते वाला ने ख़ुद उन शेरों की इस्लाह फ़रमायी और एक शेर का इज़ाफ़ा फ़रमाया, चुनांचे फ़रमाया कि:

मुरा काफ़िर गर गुफ़्ती ग़मे नेस्त
चिराग़े किज़्ब न बुवद फ़रोग़े

मुसलमानत बख़्वानम दर जवाबश
दहम शकर बजाए तल्ख़ दूग़े

अगर तू मोमिनी फ़बिहा व इल्ला
दरोग़े रा जज़ा बाशद दरोग़े

यानी अगर तुमने मुझे काफ़िर कहा है तो मुझे इसका कोई ग़म नहीं है, इसलिये कि झूठ का चिराग़ जला नहीं करता। मैं इसके जवाब में तुम्हें मुसलमान कहता हूं और कड़वी दवा के मुक़ाबले में तुम्हें शक्कर खिलाता हूं। अगर तुम मोमिन हो तो बहुत अच्छा है और अगर नहीं तो फिर झूठ की जज़ा झूठ ही होती है। अब देखिये वह मुख़ालिफ़ जो आप पर कुफ़्र का फ़तवा लगा रहा है, जहन्नमी होने का फ़तवा लगा रहा है, लेकिन उसके ख़िलाफ़ भी तंज़ का ऐसा फ़िक़रा कहना पसन्द नहीं फ़रमाया जो हदों से निकला हुआ था। इसलिये कि यह तंज़ तो यहां दुनिया में रह जायेगा लेकिन जो लफ़्ज़ ज़बान से निकल रहा है वह अल्लाह तआला के यहां रिकॉर्ड हो रहा है, क़ियामत के दिन उसके बारे में जवाब देना होगा कि फ़लां के हक़ में यह लफ़्ज़ किस तरह इस्तेमाल किया था? लिहाज़ा तंज़ का यह तरीक़ा जो हदों से निकल जाये किसी तरह भी पसन्दीदा नहीं। इसलिये जब किसी से कोई बात कहनी हो तो साफ़ और सीधी बात

कह देनी चाहिये, लपेट कर बात कहनी नहीं चाहिये।

ज़बान के डंक का एक क़िस्सा

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि बाज़ लोगों की ज़बान में डंक होता है, चुनांचे ऐसे लोग जब भी किसी से बात करेंगे डंक मारेंगे और ताना और तंज़ की बात करेंगे, या किसी पर एतिराज़ की बात करेंगे। हालांकि इस तरह की बात करने से दिल में गिरह पड़ जाती है, फिर एक क़िस्सा सुनाया कि एक साहिब किसी अज़ीज़ के घर में गये तो देखा कि उनकी बहू बहुत ग़ुस्से में है और ज़बान से अपनी सास को बुरा भला कह रही थी, और सास भी पास बैठी हुई थी, उन साहिब ने उसकी सास से पूछा कि क्या बात हो गयी? इतना ग़ुस्सा उसको क्यों आ रहा है? जवाब में सास ने कहा बात कुछ भी नहीं थी, मैंने सिर्फ़ दो बोल बोले थे, उसकी ख़ता में पकड़ी गयी और उसके नतीजे में यह नाची नाची फिर रही है, और ग़ुस्सा कर रही है, उन साहिब ने पूछा कि वे दो बोल क्या थे? सास ने कहा मैंने तो सिर्फ़ यह कहा था कि बाप तेरा ग़ुलाम और मां तेरी बांदी, बस उसके बाद से यह नाची नाची फिर रही है। अब देखिये वे सिर्फ़ दो बोल थे, लेकिन दो बोल ऐसे थे कि जो इन्सान के अन्दर आग लगाने वाले थे। इसलिए ताने का अन्दाज़ घरों को बर्बाद करने वाला है, दिलों में बुग्ज़ और नफ़रतें पैदा करने वाला है, इस से बचना चाहिये और हमेशा साफ़ और सीधी बात कहनी चाहिये।

पहले सोचो फिर बोलो

ज़बान को इस्तेमाल करने से पहले ज़रा सोच लिया करो कि जो बात मैं कहने जा रहा हूं उसका नतीजा क्या होगा? और दूसरे पर उसका क्या असर पड़ेगा, और यह बात सोच लिया करो कि जो बात मैं दूसरे से कहने जा रहा हूं अगर दूसरा शख़्स मुझ से यह बात कहता तो मुझ पर इसका क्या असर होता, मुझे अच्छा लगता या बुरा

लगता। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें यह तालीम दी और यह उसूल बता दिया किः

احب للناس ما تحب لنفسك (ترمذی شریف)

यानी दूसरे के लिये वही बात पसन्द करो जो अपने लिये पसन्द करते हो। और यह जो हमने दो पैमाने बना रखे हैं कि अपने लिये अलग पैमाना और दूसरे के लिये अलग पैमाना, नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इसका ख़ात्मा फ़रमा दिया। अगर यह तराज़ू अल्लाह तआला हमारे दिलों में पैदा फ़रमा दे तो फिर ये सारे झगड़े और फ़साद ख़त्म हो जायें।

ज़बान एक बहुत बड़ी नेमत

यह ज़बान अल्लाह तआला की बहुत बड़ी नेमत है, जो अल्लाह तआला ने हमें मुफ़्त में दे रखी है, इसकी क़ीमत हमें अदा करनी नहीं पड़ी, और पैदाइश से लेकर मौत तक यह सरकारी मशीन चलती रहती है, लेकिन अगर ख़ुदा न करे यह नेमत छिन जाये तब इस नेमत की क़द्र मालूम होगी, कि यह कितनी बड़ी नेमत है। अगर फ़ालिज हो जाये और ज़बान बंद हो जाये तो उस वक़्त यह हाल होता है कि बोलना चाहते हैं और अपने दिल की बात दूसरों से कहना चाहते हैं लेकिन ज़बान नहीं चलती, उस वक़्त पता चलता है कि यह बोलने की ताक़त कितनी बड़ी नेमत है। लेकिन हम लोग सुबह से लेकर शाम तक इस ज़बान को कैंची की तरह चला रहे हैं और यह नहीं सोचते की ज़बान से क्या लफ़्ज़ निकल रहा है, यह तरीक़ा ठीक नहीं, बल्कि सही तरीक़ा यह है कि पहले तौलो फिर बोलो। अगर इस तरीक़े पर हमने अमल कर लिया तो फिर यह ज़बान जो हमारे लिये जहन्नम में जाने के अस्बाब पैदा कर रही है, इन्शा अल्लाह जन्नत में जाने वाले अस्बाब पैदा करने वाली और आख़िरत का ज़ख़ीरा जमा करने वाली बन जायेगी।

सोच कर बोलने की आदत डालें

एक हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इन्सान को सब से ज़्यादा जहन्नम में औंधे मुंह डालने वाली चीज़ ज़बान है। यानी जहन्नम में औंधे मुंह गिराये जाने का सब से बड़ा सबब ज़बान है। इसलिये जब भी इस ज़बान को इस्तेमाल करो इस्तेमाल करने से पहले ज़रा सा सोच लिया करो। किसी के ज़ेहन में सवाल पैदा हो सकता है कि इसका मतलब यह है कि आदमी को जब कोई एक जुम्ला बोलना हो तो पहले पांच मिन्ट तक सोचे फिर ज़बान से वह जुम्ला निकाले, तो इस सूरत में बहुत वक़्त ख़र्च हो जायेगा? बात दर असल यह है कि अगर शुरू में इन्सान बात ज़रा सोच सोच कर करने की आदत डाले तो फिर आहिस्ता आहिस्ता इसका आदी हो जाता है, और फिर सोचने में देर नहीं लगती। एक लम्हे में इन्सान फ़ैसला कर लेता है कि यह बात ज़बान से निकालूं या न निकालूं। फिर अल्लाह तआला ज़बान के अन्दर ही तराज़ू पैदा फ़रमा देते हैं, जिसके नतीजे में फिर ज़बान से सिर्फ़ हक़ बात ही निकलती है, ग़लत और ऐसी बात नहीं निकलती जो अल्लाह तआला को नाराज़ करने वाली हो, और दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाने वाली हो, बशर्ते कि यह एहसास पैदा हो जाये कि इस सरकारी मशीन को आदाब के साथ इस्तेमाल करना है।

हज़रत थानवी रह. का एक वाक़िआ

हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि के एक ख़ादिम थे जिनको भाई नियाज़ कहा करते थे। बड़े नाज़ों में पले हुए ख़ादिम थे, इसलिये आने वाले लोग भी उनसे मुहब्बत करते थे। और चूंकि ख़ानक़ाह के अन्दर हर चीज़ का एक निज़ाम और वक़्त होता था, इसलिये आने वालों पर रोक टोक भी किया करते थे, कि यह काम मत करो, यह काम इस तरह करो वग़ैरह। किसी शख़्स ने हज़रते वाला के पास उनकी शिकायत

की कि आपके यह ख़ादिम भाई नियाज़ साहिब बहुत सर चढ़ गये हैं, और बहुत से लोगों पर गुस्सा और डांट डपट शुरू कर देते हैं। हज़रते वाला को यह सुनकर गुस्सा आया कि यह ऐसा करते हैं, और उनको बुलवाया और उनको डांटा कि क्यों भाई नियाज़ यह तुम्हारी क्या हर्कत है? हर एक को तुम डांटते रहते हो, तुम्हें डांटने का हक़ किसने दिया है? जवाब में भाई नियाज़ ने कहा कि हज़रत! अल्लाह से डरो, झूठ न बोलो, उनका मक़सद हज़रते वाला को कहना नहीं था, बल्कि मक़सद यह था कि जो लोग आप से शिकायत कर रहे हैं उनको चाहिये कि वे अल्लाह से डरें और झूठ न बोलें। जिस वक़्त हज़रते वाला ने भाई नियाज़ की ज़बान से यह जुम्ला सुना उसी वक़्त गर्दन झुकाई और "अस्तग़फ़िरुल्लाह अस्तग़फ़िरुल्लाह" कहते हुए वहां से चले गये। देखने वाले हैरान रह गये कि यह क्या हुआ, एक मामूली ख़ादिम ने हज़रते वाला से ऐसी बात कह दी, लेकिन हज़रते वाला ने बजाये उनको कुछ कहने के अस्तगफ़िरुल्लाह कहते हुए चले गये। बाद में खुद हज़रते वाला ने फ़रमाया कि दर असल मुझसे ग़लती हो गयी थी कि मैंने एक तरफ़ की बात सुनकर फ़ौरन डांटना शुरू कर दिया था, मुझे चाहिये था कि मैं पहले उनसे पूछता कि लोग आपके बारे में यह शिकायत कर रहे हैं, आप क्या कहते हैं? कि शिकायत दुरुस्त है या ग़लत है, और दूसरे फ़रीक़ की बात सुने बग़ैर डांटना शरीअ़त के ख़िलाफ़ है। क्योंकि यह बात शरीअ़त के ख़िलाफ़ थी इसलिये मैं इस पर इस्तिग़फ़ार करते हुए वहां से चला गया। हक़ीक़त यह है कि जिस शख़्स के दिल में अल्लाह तआ़ला हक़ व बातिल को जांचने की तराज़ू पैदा फ़रमा देते हैं उसका यह हाल होता है कि उसका कोई कलिमा हद से निकला हुआ नहीं होता। अल्लाह तआ़ला हम सब को इसकी समझ अ़ता फ़रमा दे, आमीन।

ग़ैर मुस्लिमों को भी तक्लीफ़ पहुंचाना जायज़ नहीं

इस हदीस में फ़रमाया कि मुसलमान वह है जिसके हाथ और

ज़बान से दूसरे मुसलमान महफूज़ रहें। इस से बाज़ वक़्त लोग यह समझते हैं कि इस हदीस में सिर्फ़ मुसलमानों को तक्लीफ़ से महफूज़ रखने का हुक्म दिया गया है, लिहाज़ा गैर मुस्लिमों को तक्लीफ पहुंचाने की मुमानअ़त इस हदीस में मौजूद नहीं, यह बात दुरुस्त नहीं, क्योंकि हदीस में मुसलमान का ज़िक्र इसलिये किया गया है कि मुसलमान जिस माहौल में रहते हैं वहां पर आ़म तौर पर मुसलमानों ही से उनको वास्ता पड़ता है, इसलिये ख़ास तौर पर हदीस में मुसलमानों का ज़िक्र कर दिया है, वर्ना यह हुक्म मुसलमान और गै़र मुस्लिम सब के लिये बराबर है, कि अपनी ज़ात से गै़र मुस्लिम को भी अमन की हालत में तक्लीफ़ पहुंचाना जायज़ नहीं, अलबत्ता अगर काफ़िरों के साथ जिहाद हो रहा हो, और जंग की हालत हो तो चूंकि वह तो काफ़िरों की शान व शौकत तोड़ने का एक ज़रिया है, उसमें तक्लीफ़ पहुंचाना जायज़ है। लेकिन जिन काफ़िरों के साथ जंग की हालत नहीं है उन काफ़िरों को तक्लीफ़ पहुंचाना भी इसी हुक्म में दाखि़ल है।

ना जायज़ होने की दलील

इसकी दलील यह है कि हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम फ़िरऔ़न की हुकूमत में मिस्र में रहते थे, और हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के अ़लावा पूरी क़ौम कुफ़्र और गुमराही में मुब्तला थी, उस वक़्त यह वाक़िआ़ पेश आया कि एक इस्राईली और क़िबती में झगड़ा हो गया, हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने क़िबती को एक मुक्का मार दिया, जिसके नतीजे में उसकी मौत वाक़े हो गयी, वह क़िबती अगरचे काफ़िर था लेकिन हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम ने उसकी मौत अपने लिये गुनाह क़रार देते हुए फ़रमायाः

لَهُمْ عَلَيَّ ذَنْبٌ فَاَخَافُ اَنْ يَّقْتُلُوْنِ۔ (سورۃالشعرآء)

यानी मुझ से उनका एक गुनाह हो गया है, जिसकी वजह से मुझे अन्देशा हो गया है कि अगर मैं उनके पास जाऊंगा तो वे मुझे

क़त्ल कर देंगे। हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम ने उस काफ़िर के क़त्ल को गुनाह से ताबीर किया। अब सवाल पैदा होता है कि वह तो काफ़िर था, और काफ़िर को क़त्ल करना तो जिहाद का एक हिस्सा है, फिर आपने उसको गुनाह क्यों क़रार दिया, और उस पर इस्तिग़फ़ार क्यों किया? जवाब यह है कि वह क़िबती अगरचे काफ़िर था और अमन की हालत थी, और अगर मुसलमान और काफ़िर एक साथ रहते हों और अमन की हालत हो तो उस हालत में काफ़िर का भी दुनिया के एतिबार से वही हक़ है जो मुसलमान का हक़ है। यानी जिस तरह मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना जायज़ नहीं, इसी तरह काफ़िर को भी तक्लीफ़ पहुंचाना जायज़ नहीं। क्योंकि यह इन्सानियत का हक़ है, और इन्सान का पहला फ़र्ज़ यह है कि वह आदमी बने, मुसलमान बनना और सूफ़ी बनना तो बाद की बात है। पहला काम यह है कि इन्सान आदमी बन जाये और आदमियत का हक़ यह है कि अपनी ज़ात से किसी को तक्लीफ़ न दे। इसमें मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम सब बराबर हैं।

वायदा ख़िलाफ़ी करना ज़बान से तक्लीफ़ देना है

बाज़ काम ऐसे हैं जिनको लोग ज़बान से तक्लीफ़ देने के अन्दर शुमार नहीं करते, हालांकि वे काम ज़बान से तक्लीफ़ देने के हुक्म में दाख़िल हैं। जैसे वायदा ख़िलाफ़ी करना, आपने किसी से यह वायदा कर लिया कि फ़लां वक़्त आपके पास आऊंगा, या फ़लां वक़्त मैं आपका काम कर दूंगा, लेकिन वक़्त पर वायदा पूरा नहीं किया, जिसके नतीजे में उसको तक्लीफ़ पहुंची, इसमें एक तरफ़ तो वायदा ख़िलाफ़ी का गुनाह हुआ, दूसरी तरफ़ दूसरे शख़्स को तक्लीफ़ पहुंचाने का गुनाह भी हुआ। यह ज़बान से तक्लीफ़ पहुंचाने के हुक्म में दाख़िल है।

कुरआन की तिलावत के वक़्त सलाम करना

कई बार इन्सान को पता भी नहीं चलता कि मैं ज़बान से

तक्लीफ़ पहुंचा रहा हूं बल्कि वह समझता है कि मैं तो सवाब का काम कर रहा हूं। लेकिन हक़ीक़त में वह गुनाह का काम कर रहा होता है, और उसके ज़रिये दूसरे को तक्लीफ़ पहुंचाता है। जैसे सलाम करना कितनी बड़ी फ़ज़ीलत और सवाब का काम है, लेकिन शरीअ़त ने दूसरे की तक्लीफ़ का इतना ख़्याल किया है कि सलाम करने के अहकाम भी मुक़र्रर फ़रमा दिये, कि हर वक़्त सलाम करना जायज़ नहीं, बल्कि बाज़ मौक़ों पर सलाम करने पर सवाब के बजाए गुनाह होगा, क्योंकि सलाम के ज़रिये तुमने दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाई है। जैसे एक शख़्स क़ुरआने करीम की तिलावत में मश्गूल है, उसको सलाम करना जायज़ नहीं। इसलिये कि एक तरफ़ तो तुम्हारे सलाम की वजह से उसकी तिलावत में ख़लल पड़ेगा और दूसरी तरफ़ उसको तिलावत छोड़कर तुम्हारी तरफ़ मश्गूल होने में तक्लीफ़ होगी। अब ऐसे वक़्त के अन्दर सलाम करना ज़बान से तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल है। इसी तरह अगर लोग मस्जिद में बैठ कर ज़िक्र में मश्गूल हों, उनको मस्जिद में दाख़िल होते वक़्त सलाम करना जायज़ नहीं, क्योंकि वे अल्लाह तआ़ला की याद में मश्गूल हैं। अल्लाह तआ़ला के साथ उनका रिश्ता जुड़ा हुआ है, उनकी ज़बान पर ज़िक्र जारी है, तुम्हारे सलाम की वजह से उनके ज़िक्र में ख़लल वाक़े होगा, और उनको तवज्जोह हटाने में तक्लीफ़ भी होगी।

मज्लिस के दौरान सलाम करना

फ़ुक़हा-ए-किराम ने लिखा है कि एक शख़्स दूसरे लोगों से कोई लम्बी बात कर रहा है, और दूसरे लोग तवज्जोह से उसकी बात सुन रहे हैं, अगरचे वे दुनियावी बातें हों, इस हालत में भी उस मज्लिस में जाकर सलाम करना जायज़ नहीं है। इसलिये कि वे लोग बातें सुनने में मसरूफ़ थे, आपने सलाम के ज़रिये उनकी बातों में ख़लल डाल दिया, और जिसकी वजह से बातों के दरमियान में बद मज़गी पैदा हो गयी, इसलिये उस मौक़े पर सलाम करना जायज़

नहीं। इसलिये हुक्म है कि जब तुम किसी मज्लिस में शिर्कत के लिये जाओ और वहां पर बात शुरू हो चुकी हो तो वहां पर बिना सलाम के बैठ जाओ, उस वक़्त सलाम करना ज़बान से तक्लीफ़ पहुंचाने के अन्दर दाख़िल होगा। इस से अन्दाज़ा लगायें कि शरीअ़त इस बारे में कितनी हस्सास है कि दूसरे शख़्स को हमारी ज़ात से मामूली सी तक्लीफ़ भी न पहुंचे।

खाना खाने वाले को सलाम करना

एक शख़्स खाना खाने में मश्ग़ूल है, उस वक़्त उसको सलाम करना हराम तो नहीं अलबत्ता मक्रूह ज़रूर है, जब कि यह अन्देशा हो कि तुम्हारे सलाम के नतीजे में उसको तश्वीश होगी। अब देखिये कि वह तो खाना खाने में मश्ग़ूल है, न तो वह इबादत कर रहा है, न ज़िक्र करने में मश्ग़ूल है, अगर तुम सलाम कर लोगे तो उस पर पहाड़ नहीं टूट पड़ेगा, लेकिन सलाम के नतीजे में उसको तश्वीश होने और उसको नागवार होने का अन्देशा है, इसलिये उस वक़्त सलाम न करें। इसी तरह एक शख़्स अपने किसी काम के लिये तेज़ी से जा रहा है, आपको अन्दाज़ा हुआ कि यह शख़्स बहुत जल्दी में है, आपने आगे बढ़ कर उसको सलाम कर लिया और मुसाफ़े के लिये हाथ बढ़ा दिया, यह आपने अच्छा नहीं किया, इसलिये कि आपको उसकी तेज़ी से अन्दाज़ा लगाना चाहिये था कि यह शख़्स जल्दी में है, यह सलाम करने और मुसाफ़ा करने का मुनासिब वक़्त नहीं है। ऐसे वक़्त में उसको सलाम न करो, बल्कि उसको जाने दो। ये सब बातें ज़बान के ज़रिये तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल हैं।

टेलीफ़ोन पर लम्बी बात करना

मेरे वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि अब तक्लीफ़ पहुंचाने का एक आला भी ईजाद हो चुका है, वह है टेलीफ़ोन, यह एक ऐसा आला है कि इसके ज़रिये जितना चाहो दूसरे को तक्लीफ़ पहुंचा दो। चुनांचे आपने किसी को टेलीफ़ोन

किया, और उस से लम्बी गुफ़्तगू शुरू कर दी, और इसका ख़्याल नहीं किया कि वह शख़्स इस वक़्त किसी काम में मसरूफ़ है, उसके पास वक़्त है या नहीं? मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने "मआ़रिफ़ुल क़ुरआन" में यह बात लिखी है कि टेलीफ़ोन करने के आदाब में यह बात दाख़िल है कि अगर किसी से लम्बी बात करनी हो तो पहले उस से पूछ लो कि मुझे ज़रा लम्बी बात करनी है, चार पांच मिनट लगेंगे, अगर आप इस वक़्त फ़ारिग़ हों तो इसी वक़्त बात कर लूं, और अगर फ़ारिग़ न हों तो कोई मुनासिब वक़्त बता दें, उस वक़्त बात कर लूंगा। सूरः नूर की तफ़सीर में यह आदाब लिखे हैं, देख लिया जाये, और ख़ुद हज़रत वालिद साहिब भी इन पर अ़मल फ़रमाया करते थे।

बाहर के लॉउडिस्पीकर पर तक़रीर करना

या जैसे आपको मस्जिद के अन्दर कुछ अफ़राद से बात करनी है, और उन तक बात पहुंचाने के लिये मस्जिद के अन्दर का लाउडिस्पीकर भी काफ़ी हो सकता है, लेकिन आपने बाहर का लॉउडिस्पीकर भी खोल दिया, जिसके नतीजे में पूरे इलाक़े और पूरे मौहल्ले के लोगों तक आवाज़ पहुंच रही है, अब मौहल्ले में कोई शख़्स अपने घर के अन्दर तिलावत करना चाहता है, या ज़िक्र करना चाहता है, या सोना चाहता है, या कोई शख़्स बीमार है, वह आराम करना चाहता है, लेकिन आपने ज़बरदस्ती अपना वाज़ पूरे मौहल्ले पर मुसल्लत कर दिया, यह अ़मल भी ज़बान के ज़रिये तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि. के ज़माने का एक वाक़िआ

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के ज़माने में एक साहिब मस्जिदे नबवी में आकर वाज़ किया करते थे। हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा का हुजरा मस्जिदे नबवी से बिल्कुल क़रीब था। अगरचे उस ज़माने में लॉउडिस्पीकर नहीं था, मगर वह साहिब बुलन्द

आवाज़ से वाज़ करते थे, उनकी आवाज़ हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा के हुजरे तक पहुंचती, आप अपनी इबादत, तिलावत, ज़िक्र व अज़कार या दूसरे कामों में मश्गूल होतीं और उन साहिब की आवाज़ से आपको तक्लीफ़ पहुंचती। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को पैग़ाम भिजवाया कि यह एक साहिब इस तरह मेरे हुजरे के पास आकर वाज़ करते हैं, मुझे इस से तक्लीफ़ होती है, आप उनसे कह दें कि वाज़ किसी और जगह पर जाकर करें, या आहिस्ता आवाज़ से करें। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने उन साहिब को बुलाया और उनको समझाया कि आपकी आवाज़ से उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा को तक्लीफ़ होती है, आप अपना वाज़ इस जगह पर बंद कर दें। चुनांचे वह साहिब रुक गये, मगर वह साहिब वाज़ के शौक़ीन थे, चंद दिन के बाद दोबारा वाज़ कहना शुरू कर दिया। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को इत्तिला मिली कि उन्होंने दोबारा वाज़ कहना शुरू कर दिया, आपने दोबारा उनको बुलाया और फ़रमाया कि अब मैं तुमको आख़री बार मना कर रहा हूं, अब अगर आइन्दा मुझे इत्तिला मिली कि तुमने यहां आकर वाज़ कहा है तो यह लकड़ी की छड़ी तुम्हारे ऊपर तोड़ दूंगा। यानी इतना मारूंगा कि तुम्हारे ऊपर यह लकड़ी टूट जायेगी।

आज हमारी हालत

आज हम लोग इसका बिल्कुल ख़्याल नहीं करते। मस्जिद में वाज़ हो रहा है और सारे मौहल्ले वालों को गुनाह में मुब्तला कर रखा है। लॉउडिस्पीकर पूरी आवाज़ में खुला हुआ है, मौहल्ले में कोई शख़्स सो नहीं सकता। अगर कोई शख़्स जाकर मना करे तो उसके ऊपर तान तशने शुरू हो जाते हैं, कि यह दीन के काम में रुकावट डालने वाला है, हालांकि उस वाज़ के ज़रिये शरीअत के हुक्म को ज़ाया किया जा रहा है। दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाई जा रही है, यहां

तक कि आलिम के आदाब में यह लिखा है कि:

ينبغى للعالم ان لا بعد صوته مجلسه

यानी आलिम की आवाज़ उसकी मज्लिस से दूर न जाये। ये सब बातें ज़बान से तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल हैं। यह ज़बान अल्लाह तआला ने इसलिये दी है कि यह अल्लाह का ज़िक्र करे, यह ज़बान सच्चाई की बातें करे, यह ज़बान इसलिये दी गयी है कि इसके ज़रिये तुम लोगों के दिल पर मर्हम रखो। यह ज़बान इसलिये नहीं दी गयी है कि इसके ज़रिये तुम लोगों को तक्लीफ़ पहुंचाओ।

वह औरत दोज़ख़ी है

हदीस शरीफ़ में है कि एक बार एक ख़ातून के बारे में सवाल किया गया कि वह ख़ातून सारे दिन रोज़ा रखती है, और सारी रात इबादत करती है, लेकिन वह ख़ातून अपने पड़ौसियों को तक्लीफ़ पहुंचाती है, वह ख़ातून कैसी है? आपने जवाब दिया कि वह औरत दोज़ख़ी है, जहन्नम में जायेगी। इस हदीस को नक़्ल करने के बाद इसकी तश्रीह में हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि इस हदीस में इसकी बुराई है कि लोगों को नाहक़ तक्लीफ़ दी जाए, और इसमें मामलात का इबादत पर मुक़द्दम होना भी ज़िक्र किया गया है। यानी लोगों के साथ बतार्व में अच्छा तरीक़ा इख़्तियार करना इबादत के मुक़ाबले में ज़्यादा अहम है। फिर फ़रमाते हैं कि मामलात का बाब अ़मली तौर पर इतना छोड़ दिया गया है कि आज कोई शख़्स दूसरे को यह नहीं समझाता है कि यह भी दीन का एक हिस्सा है।

हाथ से तक्लीफ़ मत दीजिये

दूसरी चीज़ जिसका ज़िक्र इस हदीस में फ़रमाया वह है "हाथ" यानी तुम्हारे हाथ से किसी को तक्लीफ़ न पहुंचे। अब हाथ से तक्लीफ़ पहुंचने की बाज़ सूरतें तो ज़ाहिर हैं, जैसे किसी को मार दिया, हर शख़्स देख कर यह कहेगा कि इसने हाथ के ज़रिये

तक्लीफ़ पहुंचाई, लेकिन हाथ से तक्लीफ़ पहुंचाने की बहुत सी सूरतें ऐसी हैं कि लोग उनको तक्लीफ़ देने के अन्दर शुमार नहीं करते, हालांकि हाथ से तक्लीफ़ देने की भी बेशुमार सूरतें हैं। और हदीस शरीफ़ में "हाथ" का ज़िक्र करके हाथ से निकलने और अन्जाम पाने वाले कामों की तरफ़ इशारा किया है। क्योंकि ज़्यादा तर काम इन्सान अपने हाथ से अन्जाम देता है, इसी वजह से उलमा ने हाथ के ज़िक्र में तमाम काम और फ़ेल दाख़िल किए हैं। चाहे उस फ़ेल में बराहे रास्त हाथ मुलव्वस नज़र न आ रहा हो।

किसी चीज़ को बेजगह रखना

जैसे एक मुश्तरका रिहाइश में आप दूसरे लोगों के साथ रहते हैं, उस मकान में किसी मुश्तरका इस्तेमाल की चीज़ की एक जगह मुक़र्रर है। जैसे तौलिया रखने की एक जगह मुक़र्रर है, आपने तौलिया इस्तेमाल करने के बाद बेजगह डाल दिया, उसका नतीजा यह हुआ कि जब दूसरा शख़्स वुज़ू करके आया और तौलिये को उसकी जगह पर तलाश किया और उसको न मिला, अब वह तौलिया ढूंढ रहा है, उसको तक्लीफ़ हो रही है। यह जो तक्लीफ़ उसको पहुंची, यह आपके हाथ की करतूत का नतीजा है, कि आपने वह तौलिया उसकी सही जगह से उठा कर बेजगह डाल दिया, यह तक्लीफ़ पहुंचाना हुआ जो कि इस हदीस के तहत हराम है। यह तौलिये कि एक मिसाल दी, वर्ना चाहे मुश्तरका लौटा हो या साबुन हो या गिलास हो या झाड़ू वग़ैरह हो, उनको उनकी मुक़र्रर जगह से उठा कर बेजगह रखना तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल है।

यह बड़ा गुनाह है

मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि हमें ये छोटी छोटी बातें सिखा गये। जब हम छोटे थे तब हम भी यह हर्कत करते थे कि एक चीज़ उसकी जगह से उठा कर इस्तेमाल की और दूसरी जगह लेजा कर डाल दी, जब उनको ज़रूरत होती तो वह घर के अन्दर तलाश

करते रहते। एक दिन हम लोगों से फ़रमाया कि तुम लोग जो हर्कत करते हो कि एक चीज़ उठा कर दूसरी जगह डाल दी, यह बद अख़्लाक़ी तो है ही, इसके साथ साथ यह बड़ा गुनाह भी है। इसलिये कि इस अमल के ज़रिये मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना है। और मुसलमान को तक्लीफ़ पहुंचाना गुनाहे कबीरा है। वर्ना इस से पहले हमें इसका एहसास भी नहीं था। ये सब बातें हाथ से तक्लीफ़ पहुंचाने में दाख़िल हैं।

अपने अज़ीज़ और बीवी बच्चों को तक्लीफ़ देना

एक बात यह भी समझ लें कि मुश्तरका रिहाइश में यह ज़रूरी नहीं है कि जिन लोगों के साथ रहते हैं वे अजनबी हों, बल्कि अपने क़रीबी रिश्तेदार, बीवी बच्चे, बहन भाई सब इसमें दाख़िल हैं। आज हम लोग अपने इन क़रीबी रिश्तेदारों को तक्लीफ़ पहुंचने का एहसास नहीं करते, बल्कि यह सोचते हैं कि अगर हमारे अमल से बीवी को तक्लीफ़ पहुंच रही है, तो पहुंचा करे, यह हमारी बीवी ही तो है, या औलाद को या बहन भाई को तक्लीफ़ पहुंच रही है, तो पहुंचा करे, हमारी औलाद ही तो है, हमारे बहन भाई तो हैं। अरे अगर वह तुम्हारी बहन या भाई बन गया है तो उसने आख़िर क्या ख़ता कर ली है? या कोई ख़ातून तुम्हारी बीवी बन गयी है या ये बच्चे तुम्हारी औलाद बन गये हैं तो इन्होंने क्या ख़ता कर ली है? कि अब तुम उनको तक्लीफ़ पहुंचा रहे हो, हालांकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह हाल था कि जहज्जुद के वक़्त सिर्फ़ इस ख़्याल से हर काम बहुत आहिस्ता आहिस्ता करते कि कहीं हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की आंख न खुल जाये। इसलिये जिस तरह ग़ैरों को तक्लीफ़ पहुंचाना हराम है इसी तरह अपने घर वालों को, अपने बहन भाईयों को, अपने बीवी बच्चों को भी तक्लीफ़ पहुंचाना हराम है।

इत्तिला किये बग़ैर खाने के वक़्त ग़ायब रहना

जैसे आप घर वालों को बता कर चले गये कि फ़लां वक़्त आकर

खाना खाऊंगा, लेकिन उसके बाद बग़ैर इत्तिला करे कहीं और चले गये, और खाना भी वहीं खा लिया, और वहां पर घन्टों गुज़ार दिये, और वक़्त पर घर वापस नहीं पहुंचे, और घर पर आपकी बीवी आपका इन्तिज़ार कर रही है और परेशान हो रही है कि क्या वजह पेश आ गयी की वापस नहीं आये? खाना लिये बैठी है, आपका यह अ़मल गुनाहे कबीरा है। इसलिये कि आपने इस अ़मल के ज़रिये एक ऐसी ज़ात को तक्लीफ़ पहुंचायी जिसको अल्लाह तआ़ला ने आपकी ज़ात से वाबस्ता कर दिया था। आपको अगर खाना किसी और जगह खाना था तो आप उसको इत्तिला करके, उसके ज़ेहन को फ़ारिग़ कर देते, उसको इन्तिज़ार और परेशानी में मुब्तला न करते। लेकिन आज हम लोग इस बात का ख़्याल नहीं करते, और यह सोचते हैं कि वह तो हमारी बीवी ही है, हमारी मातहत है, अगर इन्तिज़ार कर रही है तो करे, हालांकि यह अ़मल गुनाहे कबीरा और हराम है, और मुसलमान को तक्लीफ़ देना है।

रास्ते को गन्दा करना हराम है

या जैसे आपने सड़क पर चलते हुए छिलका या गन्दगी फेंक दी, अब उसकी वजह से किसी का पांव फिसल जाये या किसी को तक्लीफ़ पहुंच जाये तो क़ियामत के दिन आपकी पकड़ हो जायेगी। और अगर उस से तक्लीफ़ न भी पहुंची लेकिन आपने कम से कम गन्दगी तो फैला दी। उस गन्दगी फैलाने का गुनाह आपको होगा। हदीस शरीफ़ में आता है कि जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सफ़र में होते और सफ़र के दौरान आपको रास्ते में कहीं पेशाब करने की ज़रूरत पेश आती तो आप पेशाब करने के लिये मुनासिब जगह की तलाश के लिये आप इतनी ही जुस्तजू फ़रमाते जितनी एक आदमी मकान बनाने के लिये मुनासिब जगह तलाश करता है। ऐसा क्यों करते? इसलिये कि ऐसा न हो कि यह लोगों के गुज़रने की जगह हो, और वहां गन्दगी की वजह से लोगों को

तक्लीफ़ पहुंचे। एक और हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ईमान के सत्तर से ज़्यादा शोबे हैं, जिनमें से ईमान का सब से आला शोबा कलिमा:

"ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह"

कहना है। और सब से कम दर्जे का ईमान का शोबा यह है कि रास्ते से गन्दगी को और तक्लीफ़ देने वाली चीज़ को दूर कर देना है। जैसे रास्ते में कोई कांटा या छिलका पड़ा हुआ है, आपने उठा कर उसको दूर कर दिया, ताकि गुज़रने वाले को तक्लीफ़ न हो, यह ईमान का कम दर्जे का शोबा है। लिहाज़ा जब रास्ते से तक्लीफ़ देने वाली चीज़ को दूर कर देना ईमान का शोबा हो तो फिर रास्ते में तक्लीफ़ देने वाली चीज़ डालना कुफ़्र का शोबा होगा, ईमान का शोबा न होगा। ये सब बातें इस हदीस के तहत दाख़िल हैं।

ज़ेहनी तक्लीफ़ में मुब्तला करना हराम है

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि इस हदीस में ज़बान और हाथ के ज़रिये ज़ाहिरी कामों की तरफ़ इशारा फ़रमाया है, लेकिन अगर आपने अपनी ज़बान या हाथ से कोई ऐसा काम किया जिस से दूसरे को ज़ेहनी तक्लीफ़ हुई तो वह भी इस हदीस में दाख़िल है। जैसे आपने किसी से कर्ज़ लिया, और उस से यह वायदा कर लिया कि इतने दिनों के अन्दर अदा कर दूंगा। अब अगर आप वक़्त पर अदायेगी नहीं कर सकते तो उसको बता दें कि मैं फ़िल्हाल अदायेगी नहीं कर सकता, इतने दिन के बाद अदा करूंगा। फिर भी अदा न कर सको तो फिर बता दो। लेकिन यह ठीक नहीं है कि आप उसको लटका दें और उसका ज़ेहन उलझा दें। वह बेचारा इन्तिज़ार में है कि आप आज कर्ज़ अदा कर देंगे, या कल दे देंगे, लेकिन आप न तो उसको इत्तिला देते हैं, और न कर्ज़ वापस करते हैं, इस तरह आपने उसको ज़ेहनी तक्लीफ़ में मुब्तला कर दिया। अब वह न तो कोई प्लान बना सकता है, न वह कोई मन्सूबा बन्दी कर

सकता है, इसलिये कि उसको पता ही नहीं है कि उसको क़र्ज़ वापस मिलेगा या नहीं? अगर मिलेगा तो कब तक मिलेगा, आपका यह तर्ज़े अमल भी ना जायज़ और हराम है ।

मुलाज़िम पर ज़ेहनी बोझ डालना

यहां तक कि हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने तो यहां तक फ़रमाया है कि आपका एक नौकर और मुलाज़िम है, अब आपने चार काम एक साथ बता दिये, कि पहले यह काम करो, फिर यह काम, फिर यह काम करना, फिर यह काम करना। इस तरह आपने चार कामों को याद रखने का बोझ उसके ज़ेहन पर डाल दिया। अगर ऐसा करना बहुत ज़रूरी नहीं है तो एक साथ चार कामों का बोझ उसके ज़ेहन पर नहीं डालना चाहिये। बल्कि पहले उसको एक काम बता दो, जब वह पहला काम कर चुके तो अब दूसरा काम बताया जाए, वह उसको कर चुके तो अब तीसरा काम बताया जाए। चुनांचे ख़ुद अपना तरीक़ा बताया कि मैं अपने नौकर को एक वक़्त में एक काम बताता हूं। और दूसरे काम जो उस से कराने हैं उनको याद रखने का बोझ अपने सर पर रखता हूं, नौकर के सर पर नहीं रखता। ताकि वह ज़ेहनी बोझ में मुब्तला न हो जाए, जब वह एक काम करके फ़ारिग़ हो जाता है तो फिर दूसरा काम बताता हूं। इस से अन्दाज़ा लगायें कि हज़रते वाला की निगाह कितनी दूर तक पहुंचने वाली थी।

नमाज़ पढ़ने वाले का इन्तिज़ार किस जगह किया जाय?

या जैसे एक शख़्स नमाज़ पढ़ रहा है, आपको उस से कुछ काम है, अब आप उसके बिल्कुल क़रीब जाकर बैठ गये और उसके ज़ेहन पर यह फ़िक्र सवार कर दी कि मैं तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहा हूं तुम जल्दी से अपनी नमाज़ पूरी करो ताकि मैं तुम से मुलाक़ात करूं, और काम कराऊं। चुनांचे आपके क़रीब बैठने की वजह से उसकी नमाज़ में ख़लल आ गया और उसके दिमाग़ में यह बोझ बैठ गया

कि यह शख़्स मेरे इन्तिज़ार में है, इसका इन्तिज़ार ख़त्म करना चाहिये, और जल्दी से नमाज़ ख़त्म करके उस से मिलना चाहिये, हालांकि यह बात आदाब में दाख़िल है कि अगर आपको किसी ऐसे शख़्स से मुलाक़ात करनी हैं जो उस वक़्त नमाज़ में मसरूफ़ है तो तुम दूर बैठ कर उसके फ़ारिग़ होने का इन्तिज़ार करो। जब वह ख़ुद से फ़ारिग़ हो जाये तो फिर मुलाक़ात करो। लेकिन उसके बिल्कुल क़रीब बैठ कर यह ज़ाहिर करना कि मैं तुम्हारा इन्तिज़ार कर रहा हूं, इसलिये तुम जल्दी नमाज़ पूरी करो, ऐसा असर डालना अदब के ख़िलाफ़ है। ये सब बातें दूसरे को ज़ेहनी तक्लीफ़ में मुब्तला करने में दाख़िल हैं। अल्लाह का शुक्र है कि जिन बुज़ुर्गों को हमने देखा है, और जिन से अल्लाह तआला ने हमें दीन सीखने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई अल्लाह तआला ने उन पर दीन के तमाम शोबे बराबर रखे थे। यह नहीं था कि दीन के एक या दो शोबों पर तो अमल है और बाक़ी शोबे नज़रों से ओझल हैं, और उनकी तरफ़ से ग़फ़लत है। कुरआने करीम में अल्लाह तआला ने फ़रमाया:

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا ادْخُلُوا فِي السِّلْمِ كَافَّةً۔ (سورة البقرة ۲۰۸)

यानी ऐ ईमान वालो! इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ। यह न हो कि इबादत नमाज़ रोज़ा वग़ैरह तो कर लिये लेकिन मुआशरत, मामलात और अख़्लाक़ में दीन के अहकाम की परवाह न की, हालांकि यह सब दीन का हिस्सा है।

'आदाबुल मुआशरत' पढ़िये

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की एक मुख़्तसर किताब है, "आदाबुल मुआशरत" उसमें मुआशरत के आदाब तहरीर फ़रमाये हैं। यह किताब हर मुसलमान को ज़रूर पढ़नी चाहिये। इस किताब के शुरू में हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने लिखा है कि मैं इस किताब में मुआशरत के तमाम आदाब तो नहीं लिख सका बल्कि मुतफ़र्रिक़ तौर पर जो आदाब ज़ेहन में आए वे इसमें जमा कर दिये

हैं, ताकि जब तुम इन आदाब को पढ़ोगे तो अपने आप तुम्हारा ज़ेहन इस तरफ़ मुन्तक़िल होगा कि जब यह बात अदब में दाख़िल है तो फ़लां जगह पर भी हमें इस तरह करना चाहिये। आहिस्ता आहिस्ता ख़ुद तुम्हारे ज़ेहन में वे आदाब आते चले जायेंगे और अल्लाह तआला तुम्हारे ज़ेहन को खोल देंगे। चुनांचे मुआशरत ही का एक अदब यह है कि गाड़ी ऐसी जगह खड़ी करो कि उसकी वजह से दूसरों का रास्ता बन्द न हो, और दूसरे को तक्लीफ़ न हो। यह भी दीन का एक हिस्सा है। आज हमने इन चीज़ों को भुला दिया है, इसकी वजह से न सिर्फ़ हम गुनाहगार हो रहे हैं बल्कि दीन की ग़लत नुमाइन्दगी कर रहे हैं। चुनांचे हमें देख कर बाहर से आने वाला शख़्स यह कहेगा कि ये लोग नमाज़ तो पढ़ते हैं लेकिन गन्दगी बहुत फैलाते हैं, और दूसरों को तक्लीफ़ पहुंचाते हैं, इस से इस्लाम का क्या रुख़ सामने आयेगा? और वह इन चीज़ों से इस्लाम की तरफ़ कशिश महसूस करेगा या इस्लाम से दूर भागेगा? अल्लाह बचाये। हम लोग दीन का एक अच्छा नमूना पेश करके लोगों के लिये कशिश का सबब बनने के बजाए हम दीन से रुकावट का सबब बन रहे हैं। मुआशरत के इस बाब को हमने ख़ास तौर पर छोड़ दिया है। अल्लाह तआला मुझे और आप सब को इस कोताही से जल्द से जल्द नजात अता फ़रमाये, और हमारी समझ को दुरुस्त फ़रमाये और हमें दीन के तमाम शोबों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये, आमीन।

و آخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

गुनाहों का इलाज

ख़ुदा का ख़ौफ़

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ جَنَّتٰنِ" (سورة رحمٰن:٤٦)

दो जन्नतों का वायदा

जो शख़्स अपने परवर्दिगार के सामने खड़े होने के मन्ज़र से डरे और इस बात का ख़ौफ़ रखे कि एक दिन मुझे अपने परवर्दिगार के समाने खड़ा होना है और अपने एक एक अ़मल का जवाब देना है, उसके लिए दो जन्नतें हैं। इस आयत की तफ़सीर करते हुए मश्हूर ताबिई बुज़ुर्ग हज़रत मुजाहिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि इस आयत में वह शख़्स मुराद है जिसके दिल में किसी बुराई के करने का ख़्याल आया कि फ़लां गुनाह कर लूं लेकिन उसके साथ ही उसने अल्लाह तआ़ला का ध्यान कर लिया, और यह बात याद आई कि मुझे एक दिन अल्लाह तआ़ला के सामने खड़ा होना है, इस याद दिहानी के बाद उसने उस गुनाह के करने का इरादा छोड़ दिया, और उस गुनाह को छोड़ दिया, तो ऐसे शख़्स के लिए दो जन्नतों का वायदा है।

इसका नाम "तक़्वा" है

फिर इसी की और तफ़सीर करते हुए फ़रमाया कि एक शख़्स तन्हाई में है, और वहां उसको कोई देखने वाला नहीं है। अगर वहां कोई गुनाह करना चाहे तो बज़ाहिर गुनाह करने में कोई रुकावट भी नहीं है। उस तन्हाई में उसके दिल में गुनाह करने का जज़्बा और तक़ाज़ा पैदा हुआ, लेकिन उस तन्हाई में उसने यह सोचा कि अगरचे कोई इन्सान तो मुझे नहीं देख रहा है, लेकिन मेरा अल्लाह मुझे देख रहा है। और एक दिन मुझे उसके सामने जाकर खड़ा होना है। इस ख़्याल के बाद वह शख़्स उस गुनाह को छोड़ दे, तो यह वह शख़्स है जिसके लिए इस आयत में दो जन्नतों का वायदा है। और इसी का नाम "तक़्वा" है, कि इन्सान अल्लाह तआला के सामने खड़े होने का ध्यान करके अपने नफ़्स की इच्छा के ताक़तवर से ताक़तवर और मज़बूत से मज़बूत तक़ाज़े को छोड़ दे। और यह सोचे कि अगरचे दुनिया नहीं देख रही है लेकिन कोई देखने वाला देख रहा है। और सारी तरीक़त और सारी शरीअत का हासिल भी यही है कि यह ख़ौफ़ दिल में पैदा हो जाए कि मुझे अल्लाह के सामने खाड़ा होना है।

अल्लाह तआला की बड़ाई

इस आयत में अल्लाह तआला ने यह नहीं फ़रमाया कि जो शख़्स जहन्नम से डरे, या अ़ज़ाब से डरे, या आग से डरे, बल्कि फ़रमाया कि जो शख़्स अपने परवर्दिगार के सामने खड़ा होने से डरे। जिसका मतलब यह है कि उसके दिल में अल्लाह तआला की बड़ाई हो, वह यह सोचे कि चाहे अल्लाह तआला इस गुनाह पर अ़ज़ाब दें या न दें लेकिन मैं इस अ़मल को लेकर अल्लाह तआला के सामने कैसे जाऊंगा? जिस शख़्स के दिल में दूसरे की बड़ाई होती है, उसको चाहे यह अन्देशा न हो कि वह मुझे मारेगा, और सज़ा देगा, लेकिन उसकी बड़ाई की वजह से उसको यह ख़ौफ़ होता है कि मैं उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई काम करके उसके सामने जाकर क्या

मुंह दिखाऊंगा? इस ख़ौफ़ का नाम "तक़्वा" है।

मेरे वालिद माजिद रह. की मेरे दिल में अज़्मत

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि ने सारी उम्र में एक दो मर्तबा के अलावा कभी नहीं मारा। एक दो मर्तबा उनका तमांचा खाना याद है। लेकिन उनकी शख़्सियत और अज़्मत का हाल यह था कि उनके कमरे के क़रीब से गुज़रते हुए क़दम डगमगा जाते थे, कि हम किस के पास से गुज़र रहे हैं। ऐसा क्यों होता था? इसलिये कि दिल में यह ख़्याल था कि कहीं उनकी आंखों के सामने हमारा कोई ऐसा अमल न आ जाए जो उनकी शान, उनकी अज़्मत और उनके अदब के ख़िलाफ़ हो। जब एक मख़्लूक़ के लिए दिल में यह अज़्मत और बड़ाई हो सकती है तो ख़ालिक़े कायनात जो सब का ख़ालिक़ और सब का मालिक है, उसके लिए दिल में यह अज़्मत ज़रूर होनी चाहिए कि आदमी इस बात से डरे कि मैं उसके सामने यह करतूत और ये गुनाह करके कैसे खड़ा हूंगा? और उसको क्या मुंह दिखाऊंगा? इसी के बारे में इस आयत में फ़रमाया:

"وَاَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى" (النازعات)

डरने की चीज़ अल्लाह की नाराज़गी है

देखिए! जहन्नम और अज़ाब इसलिए डरने की चीज़ है कि वह अल्लाह तआला की नाराज़गी और ग़ज़ब का प्रतीक है, वर्ना असल डर और ख़ौफ़ तो अल्लाह तआला की अज़्मत का होना चाहिए। अरबी का एक शायर कहता है:

لا تسقنى ماء الحياة بذلة   بل فاسقنى بالعز كاس الحنظل

मुझे 'आबे हयात' (यानी ऐसा पानी जिसके पीने के बाद मौत न आए) भी ज़लील करके मत पिला, यानी मैं ज़िल्लत उठा कर 'आबे हयात' भी पीने के लिए तैयार नहीं। बल्कि मुझे हन्ज़ल (इन्द्रायन के फल) का कड़वा घूंट पिला दे, मगर इज़्ज़त के साथ पिला। बहर

हाल! जो लोग अल्लाह तआला की मारफ़त रखते हैं, वे यह चाहते हैं कि अल्लाह तआला की रज़ामन्दी हासिल हो जाए। और अल्लाह तआला की नाराज़गी से बच जायें। और चूंकि जहन्नम और अज़ाब अल्लाह तआला की नाराज़गी का प्रतीक है, इसलिये उस से भी डर रहे हैं। वर्ना असल में डरने की चीज़ अल्लाह तआला की नाराज़गी है।

दूध में पानी मिलाने का वाक़िआ

क़िस्सा लिखा है कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु अपने ख़िलाफ़त के ज़माने में लोगों के हालात मालूम करने के लिए रात के वक़्त गश्त किया करते थे। अगर किसी के बारे में पता चलता कि फ़लां शख़्स तंगी और फ़ाक़े की हालत में है तो उसकी मदद फ़रमाते। अगर यह पता चलता कि फ़लां शख़्स किसी मुसीबत का शिकार है तो उस से उसकी मुसीबत दूर फ़रमाते। और अगर कोई ग़लत काम करता हुआ नज़र आता तो उसकी इस्लाह फ़रमाते। एक दिन इसी तरह आप तहज्जुद के वक़्त मदीना की गलियों में गश्त फ़रमा रहे थे कि एक घर से दो औरतों की बातें करने की आवाज़ आई, आवाज़ से अन्दाज़ा हुआ कि एक औरत बूढ़ी है और एक जवान है, वह बूढ़ी औरत जवान औरत से जो उसकी बेटी थी, यह कह रही थी कि बेटी! यह जो दूध तुमने निकाला है, इसमें पानी मिला दो, ताकि यह ज़्यादा हो जाए, और फिर इसको फ़रोख़्त कर देना। बेटी ने जवाब दियाः अमीरुल मोमिनीन ने यह हुक्म जारी किया है कि कोई दूध बेचने वाला दूध में पानी न मिलाए। इसलिये हमें नहीं मिलाना चाहिए। जवाब में मां ने कहाः बेटी! अमीरुल मोमिनीन यहां बैठे हुए तो नहीं हैं। अगर तुमने पानी मिला दिया तो वह कौन सा तुम्हें देख लेंगे। वह तो अपने घर में होंगे। इस वक़्त रात का अन्धेरा है, कोई देखने वाला तो है नहीं, इसलिये उनको कैसे पता चलेगा कि तुमने पानी मिलाया है। जवाब में बेटी ने कहाः अम्मां जान! अमीरुल मोमिनीन तो नहीं देख रहे हैं, लेकिन अमीरुल

मोमिनीन का हाकिम यानी अल्लाह तआला देख रहा है। इसलिये मैं यह काम नहीं करूंगी।

दरवाज़े के बाहर हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु यह सारी गुफ़्तगू सुन रहे थे। जब सुबह हुई तो हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने मालूमात कराई कि यह कौन औरत हैं, और यह बेटी कौन है? मालूमात करने के बाद उस लड़की के साथ अपने बेटे की शादी करवाई। इसका नतीजा यह हुआ कि उस औरत के ख़ानदान में उनके नवासे हज़रत उमर बिन अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ रहमतुल्लाहि अलैहि पैदा हुए, जो मुसलमानों के पांचवे ख़लीफ़ा–ए–राशिद कहलाते हैं। बहर हाल! यह बात उस लड़की के दिल में पैदा हुई कि अगरचे अमीरुल मोमिनीन तो नहीं देख रहे हैं, लेकिन अल्लाह देख रहा है, जब कि तन्हाई और ऐकान्त है, और रात का अन्धेरा है, कोई और देखने वाला नहीं है। लेकिन अल्लाह तआला देख रहा है। बस इसी का नाम तक़्वा है।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

एक मर्तबा हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु सफ़र पर थे, रास्ते का जो खाना साथ था वह ख़त्म हो गया, आपने देखा कि जंगल में बकरियों का रेवड़ चर रहा है, और अ़रब वालों के अन्दर यह रिवाज थ कि मुसाफ़िरों को रास्ते में मेहमान नवाज़ी के तौर पर मुफ़्त दूध पेश कर दिया करते थे। चुनांचे आप चरवाहे के पास गए और उस से जाकर फ़रमाया कि मैं मुसाफ़िर हूं, और खाने पीने का सामान ख़त्म हो गया है, तुम एक बकरी का दूध निकाल कर मुझे दे दो, ताकि मैं पी लूं। चरवाहे ने कहा कि आप मुसाफ़िर हैं, मैं आपको दूध ज़रूर दे देता। लेकिन मुश्किल यह है कि ये बकरियां मेरी नहीं हैं, इनका मालिक दूसरा शख़्स है, और इनके चराने की ख़िदमत मेरे सुपुर्द है। इसलिये ये बकरियां मेरे पास अमानत हैं, और इनका दूध भी अमानत है। इसलिये शरई एतिबार से मेरे लिए इनका दूध आपको

देना जायज़ नहीं है।

उसके बाद हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने उसका इम्तिहान लेना चाहा, और उस से फ़रमाया कि देखो भाई! मैं तुम्हें एक फ़ायदे की बात बताता हूं, जिसमें तुम्हारा भी फ़ायदा है और मेरा भी फ़ायदा है। वह यह कि तुम ऐसा करो कि इनमें से एक बकरी मुझे बेच दो, और उसकी क़ीमत मुझ से ले लो। इसमें तुम्हारा फ़ायदा यह है कि तुम्हें पैसे मिल जायेंगे, और मेरा फ़ायदा यह होगा कि मुझे बकरी मिल जायेगी। रास्ते में उसका दूध इस्तेमाल करता रहूंगा। रहा मालिक! तो मालिक से कह देना कि एक बकरी भेड़िया खा गया। और उसको तुम्हारी बात पर यक़ीन भी आ जायेगा, क्योंकि जंगल में भेड़िए बकरियां खाते रहते हैं। इस तरह हम दोनों का काम बन जायेगा। जब चरवाहे ने यह तदबीर सुनी तो फ़ौरन उसने जवाब में कहाः "या हाज़ा! फ़–ऐनल्लाह?" ऐ भाई! अगर मैं यह काम कर लूंगा तो अल्लाह तआला कहां गया? यानी यह काम मैं यहां कर तो लूंगा, और मालिक को भी जवाब दे दूंगा, वह भी शायद मुत्मइन हो जायेगा, लेकिन मालिक का भी एक और मालिक है, उसके पास जाकर क्या जवाब दूंगा? इसलिये मैं यह काम करने के लिए तैयार नहीं। ज़ाहिर है कि हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु उसका इम्तिहान लेना चाहते थे। जब उस चरवाहे का जवाब सुना तो आपने फ़रमाया कि जब तक तुझ जैसे इन्सान इस रूए ज़मीन पर मौजूद हैं, उस वक़्त तक कोई ज़ालिम दूसरे शख़्स पर ज़ुल्म करने पर आमादा नहीं होगा। इसलिये कि जब तक दिल में अल्लाह का ख़ौफ़, आख़िरत की फ़िक्र और अल्लाह के सामने खड़े होने का एहसास मौजूद रहेगा, उस वक़्त तक जराइम और मज़ालिम चल नहीं सकेंगे, इसी का नाम "तक़वा" है।

जराइम ख़त्म करने का बेहतरीन तरीक़ा

याद रखिए! जब तक दिलों में यह एहसास पैदा नहीं होगा, उस वक़्त तक दुनिया से जराइम नहीं मिट सकते, और बुराइयां ख़त्म

नहीं हो सकतीं। चाहे जराइम को ख़त्म करने के लिए पुलिस के पहरे बिठा लो, चाहे कितने ही महकमे बना लो। इसलिये कि यह पुलिस और महकमे ज़्यादा से ज़्यादा रोशनी में और शहर की आबादी में लोगों को जुर्म करने से रोक देंगे। लेकिन रात के अन्धेरे में और जंगल की तन्हाई में जराइम को रोकने वाली सिर्फ़ एक चीज़ है, वह है अल्लाह का ख़ौफ़। इसके अलावा कोई चीज़ रोक नहीं सकती। और जब यह ख़ौफ़ दिलों से रुख़्सत हो जाता है तो फिर समाज का अन्जाम बहुत बुरा हो जाता है। चुनांचे आज देख लीजिए कि जराइम के लिए पुलिस के ऊपर दूसरी पुलिस और एक महकमे के ऊपर दूसरा महकमा बनाया जा रहा है, और क़ानून पर क़ानून बनाये जा रहे हैं, लेकिन वह कानून आज बाज़ार में दो दो पैसे में बिक रहा है। हालांकि अदालतें अपनी जगह काम कर रही हैं, पुलिस अपनी जगह काम कर रही है, और "रिश्वत को रोकने के लिये महकमा" क़ायम है, जिस पर लाखों रुपये ख़र्च हो रहा है। लेकिन दूसरी तरफ़ यह हाल है कि रिश्वत के रेट में इज़ाफ़ा हो रहा है। और जो महकमा रिश्वत लेने को बन्द करने के लिए क़ायम हुआ था, वह ख़ुद रिश्वत लेने में मुब्तला है। कहां तक ये महकमे और इदारे क़ायम करते जाओगे? इसलिये कि हर क़ानून और हर तदबीर का तोड़ मौजूद है। आज तक दुनिया में कोई ऐसा फ़ारमूला ईजाद नहीं हुआ जो जराइम का ख़ात्मा कर दे। हां अल्लाह तआ़ला का ख़ौफ़ और आख़िरत की फ़िक्र एक ऐसी चीज़ है जिसके ज़रिये जराइम ख़त्म हो सकते हैं, और ज़ुल्म को रोका जा सकता है।

सहाबा-ए-किराम रज़ि. और तक़्वा

यही ख़ौफ़ और एहसास हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के दिलों में पैदा फ़रमाया था। जिसका नतीजा यह था कि जब किसी शख़्स से कोई जुर्म हो जाता तो वह बेचैन हो जाता, कि यह मुझ से क्या हो गया।

और जब तक अपने ऊपर शरई सज़ा जारी न कर लेता और जब तक अल्लाह तआ़ला के हुज़ूर में हाज़िर होकर गिड़गिड़ा कर माफ़ी और तौबा न कर लेता, उस वक़्त तक उसको चैन नहीं आता था। चुनांचे मुजरिम ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपने ऊपर सज़ा जारी कराता, और यह कहता कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! मुझे किसी तरीक़े से पाक कर दीजिए। इसलिये जब तक दिल में यह ख़ौफ़ और आख़िरत की फ़िक्र न हो, और अल्लाह तआ़ला के सामने खड़े होने का एहसास न हो, उस वक़्त तक जराइम दुनिया से ख़त्म नहीं हो सकते। उनको ख़त्म करने के लिए जो चाहो तबदीर कर लो।

हमारी अ़दालतें और मुक़द्दमे

कई साल से मेरा अ़दालत से भी ताल्लुक़ रहा है। क़ायदे की रू से चोरी और डाके के जितने मुक़द्दमे होते हैं, उनकी आख़री अपील हमारे पास अ़दालत में आनी चाहिए, लेकिन शुरू के तीन साल इस तरह गुज़रे कि उस मुद्दत में चोरी और डाके का कोई मुक़दमा ही नहीं आया। मैं हैरान हो गया। आख़िर मैंने मालूम कराया कि हमारे यहां चोरी और डाके के कितने मुक़द्दमे इस मुद्दत में आए। तो पता चला कि सिर्फ़ तीन या चार मुक़द्दमे आए। मैंने कहा कि अगर कोई शख़्स यह आदाद व शुमार देखे कि इस मुल्क में तीन साल की मुद्दत में सुप्रीम कोर्ट के अन्दर चोरी और डाके के सिर्फ़ तीन चार मुक़द्दमे आये हैं, तो वह यह समझेगा कि यह तो फ़रिश्तों की बस्ती है, और यहां अमन व अमान का दौर दौरा है। और दूसरी तरफ़ अगर अख़्बार पढ़ा जाए तो पता चलता है कि चोरी और डाके के पचासों कैस रोज़ाना हो रहे हैं। तहक़ीक़ करने पर पता चला कि चोरी और डाके के ये सारे कैस नीचे ही नीचे तय हो जाते हैं, और मुक़द्दमे के ऊपर आने की नौबत ही नहीं आती।

एक इब्रतनाक वाकिआ

तीन साल के बाद एक डाके का जो मुक़द्दमा मेरे पास आया, वह यह था कि एक शख़्स "कुवैत" में नौकरी करता था। छुट्टियों में जब वह कराची आया तो एयर पोर्ट पर उसने एक टैक्सी किराए पर की, और उसमें अपना सामान रख कर अपने घर जा रहा था। रास्ते में बहादुर आबाद की चौरंगी पर घुड़ सवार पुलिस का एक दस्ता जा रहा था। रात के तीन बजे का वक़्त था, उस पुलिस के दस्ते ने उस टैक्सी को रोक लिया, और उस से पूछा कि कहां से आ रहे हो, और कहां जा रहे हो? उसने जवाब दिया कि कुवैत से आ रहा हूं और अब एयर पोर्ट से अपने घर जा रहा हूं। फिर पूछा कि तुम वहां से क्या सामान लाए हो? उसने जवाब दिया कि जो सामान लाया हूं उसकी तफ़्तीश और तहकीक़ कस्टम वालों ने कर ली है। तुम्हारा इस से क्या ताल्लुक़? आख़िरकार एक पुलिस वाले ने बन्दूक़ तान ली, कि जो कुछ तुम्हारे पास है वह निकाल दो, और हमारे हवाले कर दो। यह मुक़द्दमा मेरे पास आया, जिसमें वे पुलिस वाले जो चोरी और डाके से हिफ़ाज़त के लिए गश्त कर रहे थे, वही बन्दूक़ तान कर दूसरों का माल छीन रहे हैं। जो लोग क़ानून के मुहाफ़िज़ और अमन व अमान के मुहाफ़िज़ थे, वे ख़ुद अमन व अमान को ग़ारत करने के मुज्रिम हो रहे हैं। इसकी वजह सिर्फ़ और सिर्फ़ यह है कि दिल से ख़ुदा का ख़ौफ़ मिट चुका है। अल्लाह तआला के सामने पेश होने का एहसास मिट गया है। आदमी यह भूल गया है कि मुझे एक दिन मरना है, और मरने के बाद एक दूसरी ज़िन्दगी आने वाली है। जिसके नतीजे में आज क़त्ल व ग़ारत गरी, बद अम्नी और बेचैनी हमारे ऊपर मुसल्लत है।

शैतान किस तरह रास्ता मारता है

याद रखिए! यह एहसास एक दम से फ़ौरन नहीं मिटा करता, बल्कि आहिस्ता आहिस्ता यह एहसास मिटता है। और इसकी सूरत

यह होती है कि शैतान इन्सान को गलत रास्ते पर लाने के लिए एक दम से किसी बड़े गुनाह पर आमादा नहीं करता। जैसे शैतान पहली मर्तबा किसी इन्सान से यह नहीं कहता कि तू जाकर डाका डाल। इसलिये कि वह इन्सान फ़ौरन इन्कार कर देगा, कि डाका डालना तो बहुत बुरी चीज़ है, मैं नहीं डालता। बल्कि वह शैतान इन्सान को पहले छोटे छोटे गुनाहों में मुब्तला करता है। जैसे उस से कहता है कि निगाह ग़लत जगह पर डाल लो, इसमें मज़ा आयेगा। जब रफ़्ता रफ़्ता उस छोटे गुनाह का आ़दी बन जाता है तो शैतान उस से कहता है कि जब तूने फ़लां गुनाह किया था, तो उस वक़्त तुझे यह ख़्याल नहीं आया था कि अल्लाह तआ़ला के पास जाना है, और मरना है, जब उस वक़्त ख़्याल नहीं आया तो अब यह दूसरा गुनाह भी कर ले, उसके बाद तीसरे और चौथे गुनाह पर तैयार करता है। जब छोटे छोटे गुनाहों का इन्सान आ़दी हो जाता है तो आख़िर में शैतान उस से कहता है कि जब ये इतने सारे गुनाह कर लिए तो एक बड़ा गुनाह करने में क्या हर्ज है। इस तरह रफ़्ता रफ़्ता वह इन्सान को बड़े गुनाह और बड़े जराइम पर उभारता और तैयार करता चला जाता है।

नौजवानों को टी. वी. ने ख़राब कर दिया

आज आप देख रहे हैं कि नौजवान लड़के हाथ में पिस्तौल लिए फिर रहे हैं। और पिस्तौल दिखा कर किसी का माल छीन लिया, किसी की जान ले ली और किसी की आबरू लूट ली। ये सारे काम पहले करते थे? नहीं, इनकी शुरूआ़त इस तरह हुई कि पहले लड़कों से कहा गया कि टी. वी. सारी दुनिया देख रही है, तुम भी देखो, फ़िल्में देखो। और उसके ज़रिये रफ़्ता रफ़्ता उनको गुनाह की तरफ़ तैयार किया। और उसके असरात उनके ज़ेहनों पर मुरत्तब हो गए। और जब एक मर्तबा यह हौसला खुल गया कि अल्लाह तआ़ला को भूल कर और अल्लाह तआ़ला के सामने खड़े होने का एहसास दिल

से मिटा कर मैं ये गुनाह के काम कर रहा हूं और ये फ़िल्में देख रहा हूं तो ज़रा सा और आगे बढ़ जाऊं। और शैतान दिल में यह बात डालता है कि तुमने फ़लां फ़िल्म के अन्दर फ़लां तमाशा देखा था। अब उसको ज़रा खुद भी तजुर्बा करके देखो। इस तरह आहिस्ता आहिस्ता उसको बड़े बड़े गुनाहों में मुब्तला कर देता है।

छोटे गुनाहों का आदी बड़े गुनाह करता है

याद रखिए! बड़ा गुनाह हमेशा छोटे गुनाहों के बाद पैदा होता है। शैतान की तरफ़ से पहले छोटे गुनाह के करने की जुर्रत पैदा की जाती है। फिर रफ़्ता रफ़्ता उसको बड़े गुनाहों पर आमादा और तैयार किया जाता है। आजके इन नौजवानों के दिलों में यह ख़्याल पैदा हो गया है कि हमेशा इस दुनिया में रहना है। कभी इस दुनिया से नहीं जाना। क्योंकि गुनाहों का आदी बन जाने के नतीजे में अल्लाह तआला के सामने जवाब देने का एहसास दिलों से मिट गया, तो अब बड़े बड़े गुनाह के लिए रास्ता हमवार हो गया। दरवाज़ा चौपट खुल गया। अब जो गुनाह चाहो करवा लो। अरबी ज़बान का एक शेर है:

الشر يبدأه فى الاصل أصغره

यानी बड़ी बुराई की शुरूआत हमेशा छोटी बुराई से होती है। और ज़रा सी चिंगारी से आग भड़क उठती है। इसलिये कभी किसी गुनाह को छोटा समझ कर इख़्तियार मत करो, कि चलो यह छोटा सा गुनाह है, कर लो। इसलिये कि यह तो शैतान का दाना है, जो उसने तुमको अपने जाल में फांसने के लिए और अपना कन्ट्रोल तुम्हारे ऊपर हासिल करने के लिए और तुम्हारे दिल से अल्लाह तआला का ख़ौफ़ और आख़िरत की फ़िक्र मिटाने के लिए डाल दिया है। इसलिये गुनाह छोटा हो या बड़ा हो, उसको अल्लाह तआला के ख़ौफ़ से छोड़ दो।

यह गुनाह छोटा है या बड़ा है?

हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि लोग बहुत शौक़ से पूछते हैं कि फ़लां गुनाह छोटा है या बड़ा है? और पूछने का मक़सद यह होता है कि अगर छोटा है तो कर लेंगे। और अगर बड़ा है तो उसके करने में थोड़ा डर और ख़ौफ़ महसूस होगा। हज़रत फ़रमाया करते थे कि छोटे और बड़े गुनाहों की मिसाल ऐसी है जैसे एक चिंगारी और एक बड़ा अंगारा। कभी आपने किसी को देखा कि एक छोटी सी चिंगारी को सन्दूक़ में रख ले? और यह सोचे कि यह तो एक छोटी सी चिंगारी है, कोई अ़क़ल मन्द इन्सान ऐसा नहीं करेगा। क्योंकि सन्दूक़ में रखने के बाद वह आग बन जायेगी और सन्दूक़ को भी जला देगी। और हो सकता है कि वह पूरे घर को जला दे। यही हाल गुनाह का है, गुनाह छोटा हो या बड़ा हो, वह आग की चिंगारी है। अगर तुम अपने इख़्तियार से एक गुनाह करोगे तो हो सकता है कि वह एक गुनाह तुम्हारी पूरी ज़िन्दगी की पूंजी जला कर राख कर दे। इसलिये इस फ़िक्र में मत पड़ो कि छोटा है या बड़ा। बल्कि यह देखो कि गुनाह है या नहीं। यह काम ना जायज़ है या नहीं? अल्लाह तआ़ला ने इस से मना फ़रमाया है या नहीं? जब यह मालूम हो जाए कि अल्लाह तआ़ला ने इस से मना फ़रमाया है तो फिर अल्लाह तआ़ला के सामने जवाब देही का एहसास पैदा करके यह सोचो कि यह गुनाह करके मैं अल्लाह तआ़ला को क्या मुंह दिखाऊंगा। बहर हाल! इस आयत का मिस्दाक़ बनने का तरीक़ा यह है कि जब भी इन्सान के दिल में गुनाह का जज़्बा और तक़ाज़ा पैदा हो तो उस वक़्त अल्लाह तआ़ला के सामने मौजूद होने का दिल में ध्यान करे, और इसके ज़रिये गुनाह छोड़ दे।

गुनाह के तक़ाज़े के वक़्त यह तसव्वुर कर लो

हमारे हज़रत डॉ० अ़ब्दुल हई रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते

थे कि इन्सान अगर अल्लाह तआला का तसव्वुर करना चाहे तो बहुत सी मर्तबा अल्लाह तआला का ध्यान और तसव्वुर नहीं बनता। इसलिये कि अल्लाह तआला को कभी देखा तो है नहीं, और तसव्वुर तो उस चीज़ का हो सकता है जिसको इन्सान ने देखा हो। इसलिये अल्लाह तआला का तसव्वुर और ध्यान करने में दुश्वारी होती है। लेकिन जब गुनाह का जज़्बा पैदा हो तो एक चीज़ का तसव्वुर और ध्यान कर लिया करो। और वह यह कि मैं जिस गुनाह के करने का इरादा कर रहा हूं, अगर उस गुनाह के करने के वक़्त मेरा बाप मुझे देख ले, या मेरी औलाद मुझे देख ले, या मेरे उस्ताद मुझे देख लें, या मेरे शागिर्द मुझे देख लें, या मेरे दोस्त अहबाब मुझे देख लें तो क्या उस वक़्त भी मैं यह गुनाह का काम करूंगा?

जैसे निगाह को ग़लत जगह पर डालने का जज़्बा दिल में पैदा हो, उस वक़्त ज़रा यह सोचो कि अगर उस वक़्त तुम्हारा शैख़ तुम्हें देख रहा हो, या तुम्हारा बाप तुम्हें देख रहा हो, या तुम्हारी औलाद तुम्हें देख रही हो, तो क्या उस वक़्त भी आंख ग़लत जगह की तरफ़ उठाओगे? ज़ाहिर है कि नहीं उठाओगे। इसलिये कि यह ख़ौफ़ है कि अगर उन लोगों में से किसी ने मुझे इस हालत में देख लिया तो ये लोग मुझे बुरा समझेंगे। इसलिये जब इन मामूली दर्जे की मख़्लूक़ के सामने शर्मिन्दा होने के डर से अपने जज़्बे पर क़ाबू पा लेते हो और निगाह को रोक लेते हो, तो हर गुनाह के वक़्त यह तसव्वुर कर लिया करो कि अल्लाह तआला जो मालिकुल मुल्क है, और उन सब का ख़ालिक़ और मालिक है, वह मुझे देख रहा है। इस तसव्वुर से इन्शा अल्लाह दिल में एक रुकावट पैदा होगी।

गुनाहों की लज़्ज़त आरज़ी है

जब इन्सान गुनाह का आदी होता है तो उसको शुरू में गुनाह से बचने में दिक़्क़त और मशक़्क़त होती है, और गुनाह से बचना आसान नहीं होता, लेकिन गुनाह से बचने का इलाज ही यह है कि

ज़बरदस्ती अपने आपको गुनाह से रोके, और गुनाह की ख़्वाहिश को अल्लाह के लिए कुचले। और जिस वक़्त वह अपनी उस ख़्वाहिश को अल्लाह के लिए कुचलेगा तो अल्लाह तआला उसको ईमान की ऐसी मिठास अता फ़रमायेंगे कि उसके आगे गुनाहों की लज़्ज़त कुछ नहीं है। अल्लाह तआला हम सब को गुनाहों से बचने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

हज़रत हकीमुल उम्मत रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि गुनाहों की लज़्ज़त की मिसाल ऐसी है जैसे खुजली वाले को खुजली करने में लज़्ज़त आती है। और खुजाने में उसको बहुत मज़ा आता है। लेकिन वह लज़्ज़त सेहत की लज़्ज़त नहीं है, वह बीमारी की लज़्ज़त है। इसलिये कि ज़्यादा खुजाने का नतीजा यह होगा कि उस जगह पर ज़ख़्म हो जायेगा। और ज़ख़्म की और जलन की जो तक्लीफ़ होगी, उसके आगे खुजलाने की लज़्ज़त की कोई हक़ीक़त नहीं है। लेकिन अगर खुजली करने से रुक गया, और यह सोचा कि खुजली करने के बाद ज़्यादा तक्लीफ़ होगी, इसलिये खुजाने के बजाए उस पर मर्हम लगाता हूं और खुजली की कड़वी दवा खाता हूं। तो उस दवा के खाने में तक्लीफ तो होगी लेकिन आख़िरकार उस खुजली से नजात हो जायेगी। और उसके बाद सेहत की लज़्ज़त हासिल हो जायेगी। और वह सेहत की लज़्ज़त उस खुजली की लज़्ज़त से हज़ार दर्जे बेहतर होगी। बिल्कुल इसी तरह गुनाह की लज़्ज़त बिल्कुल बे हक़ीक़त है, और धोखे वाली लज़्ज़त है। इस लज़्ज़त को अल्लाह के लिए छोड़ो, और इसके बजाए तक़्वे की लज़्ज़त हासिल करो, फिर देखो कि अल्लाह तआला कहां से कहां पहुंचाते हैं। अरे यह नफ़्सानी ख़्वाहिशें तो पैदा ही इसलिये की गई हैं कि इनको कुचला जाए, और इसके ज़रिये अल्लाह तआला की रिज़ा हासिल की जाए। अल्लाह तआला अपनी रहमत से और अपने फ़ज़्ल व करम से यह हक़ीक़त हमारे दिलों में बिठा दें आमीन।

जवानी में ख़ौफ़ और बुढ़ापे में उम्मीद

बहर हाल! एक मोमिन का काम यह है कि वह अल्लाह जल्ल शानुहू से ख़ौफ़ भी रखे और साथ साथ अल्लाह तआला से उम्मीद भी रखे। लेकिन बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि जवानी के दौर में अगर ख़ौफ़ का ग़ल्बा हो तो ज़्यादा बेहतर है, क्योंकि जवानी के दौर में जब आदमी के हाथ पांव अच्छी तरह चल रहे हों, और मज़्बूत हों, और आदमी हर किस्म के काम कर सकता हो, तो उस वक़्त गुनाहों के जज़्बे भी दिल में बहुत पैदा होते हैं, और गुनाहों के अस्बाब भी बहुत होते हैं, और गुनाहों का तक़ाज़ा भी ज़्यादा होता है। उस ज़माने में उसके दिल में अल्लाह के ख़ौफ़ का ग़ल्बा होना ज़्यादा फ़ायदेमन्द है, ताकि वह ख़ौफ़ इन्सान को गुनाह से बाज़ रखे। लेकिन जब आदमी बूढ़ा हो जाए और आख़री उम्र में पहुंच जाए तो उस वक़्त अल्लाह तबारक व तआला की रहमत की उम्मीद उस पर ग़ालिब होनी चाहिए ताकि वह मायूसी का शिकार न हो।

दुनिया का निज़ाम ख़ौफ़ पर क़ायम है

आजकल लोग यह समझते हैं कि यह ख़ौफ़े ख़ुदा कोई हासिल करने की चीज़ नहीं, चुनांचे बाज़ लोग कहते हैं कि अल्लाह मियां तो हमारे हैं, उनसे कैसा ख़ौफ़, और कैसा डर? वह तो हमारे पैदा करने वाले हैं। और कुरआने करीम में बार बार फ़रमा रहे हैं कि वह माफ़ करने वाले और रहम करने वाले हैं। तो फिर उनसे डर और ख़ौफ़ कैसा? ज़ाहिर है कि जब यह सोच होगी तो फिर ख़ौफ़े ख़ुदा को हासिल करने की ज़रूरत का एहसास कैसे होगा? इसी का नतीजा है कि आजकल लोग ग़फ़लत में गुनाहों के अन्दर मशग़ूल होकर ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। याद रखिए! यह ख़ौफ़ ऐसी चीज़ है कि अगर यह न हो तो दुनिया का कोई काम, कोई कारोबार नहीं चल सकता। अगर तालिब इल्म को इम्तिहान में फ़ेल होने का अन्देशा और ख़ौफ़ न हो तो वह कभी मेहनत नहीं करेगा। यह ख़ौफ़ ही उस से मेहनत

करवा रहा है, और उसको पढ़वा रहा है। अगर किसी शख़्स को नौकरी से निकाल दिए जाने का ख़ौफ़ न हो तो वह शख़्स अपनी ज़िम्मेदारियां अन्जाम नहीं देगा, बल्कि ख़ाली बैठ कर वक़्त ज़ाया करेगा और काम करने की मुसीबत और तक्लीफ़ नहीं उठायेगा। अगर बेटे को बाप का ख़ौफ़ न हो, मातहत को अफ़सर का ख़ौफ़ न हो, आम आदमी को क़ानून का ख़ौफ़ न हो तो इसका नतीजा अराजकता, बद अम्नी और शोरिश पसन्दी होगा, जिसमें किसी भी इन्सान का हक़ महफ़ूज़ नहीं रह सकेगा। आज आप यह जो बद अम्नी और बेचैनी का तूफ़ान देख रहे हैं, कि न किसी की जान महफ़ूज़ है, और न किसी का माल महफ़ूज़ है, न किसी की आबरू महफ़ूज़ है। डाके पड़ रहे हैं, चोरियां हो रही हैं, और आज इन्सान मक्खी और मच्छर से भी ज़्यादा बेहक़ीक़त हो गया है, इसकी वजह यह है कि एक तो ख़ौफ़े ख़ुदा दिलों से निकल गया, और क़ानून का ख़ौफ़ भी उठ गया। आज क़ानून दो दो पैसे में बिक रहा है, बस पैसे ख़र्च करो और क़ानून से बच जाओ। इसी का यह नतीजा है कि पूरे समाज में ख़राबियां फैली हुई हैं।

आज़ादी की तहरीक

जब बर्रे सग़ीर में अंग्रेज़ की हुकूमत थी, उस वक़्त मुसलमानों और हिन्दुओं ने मिलकर अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ तहरीक चलाई थी, अंग्रज़ों के ख़िलाफ़ प्रदर्शन और हड़तालें हो रही थीं। चूंकि मुसलमान और हिन्दू दोनों इस तहरीक में शामिल थे इसलिये बाज़ मामलात में इस्लाम और हिन्दूमत का फ़र्क़ ख़त्म होता जा रहा था। जैसे जब जुलूस निकालते तो मुसलमान भी अपने माथे पर क़श्क़ा लगा लेते और उनके मन्दिरों में जाकर उनकी रस्मों में शरीक हो जाते, इस क़िस्म की बुराइयां उस तहरीक में हो रही थीं, और तहरीक चलाने का जो तरीक़ा इख़्तियार किया था, वह हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि को पसन्द नहीं था, इसलिये हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी

रह्मतुल्लाहि अलैहि उस तहरीक से अलग थलग रहे, और अपने मिलने वालों और अपने मुरीदों को बताते रहे कि मेरे नज़दीक इस तहरीक में शामिल होना ठीक नहीं है।

लाल टोपी का ख़ौफ़

एक मर्तबा उस तहरीक के लीडर वफ़्द बना कर हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि की ख़िदमत में आए और अर्ज़ किया कि हज़रत! अगर आप इस तहरीक में शामिल हो जाएं तो अंग्रेज़ों को बहुत जल्द यहां से भगाया जा सकता है। आप चूंकि इस तहरीक से अलग हैं इसलिये अंग्रेज़ों की हुकूमत बाक़ी है, इसलिये आप हमारे साथ इस तहरीक में शामिल हो जाएं। जवाब में हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि आपने जो तरीक़ा इख़्तियार किया है मुझे तो उस तरीक़े से इत्तिफ़ाक़ नहीं, इसलिये मैं उसमें कैसे शामिल हूं। और आप मुझे यह बताइये कि आप कई सालों से यह तहरीक चला रहे हैं, प्रदर्शन कर रहे हैं, हड़तालें कर रहे हैं, जलसे जुलूस निकाल रहे हैं, इस से अब तक आपने क्या फ़ायदा हासिल किया। उस वफ़्द में से एक साहिब ने कहा कि हज़रत! अब तक आज़ादी तो हासिल नहीं हुई, लेकिन एक बहुत बड़ा फ़ायदा हासिल हो गया है। वह फ़ायदा यह है कि हमने लोगों के दिलों से लाल टोपी का ख़ौफ़ निकाल दिया है। उस ज़माने में पुलिस की लाल टोपी हुआ करती थी, इसलिये "लाल टोपी" बोल कर पुलिस मुराद होती थी, अब किसी आदमी के दिल में पुलिस का ख़ौफ़ नहीं रहा। वर्ना पहले यह हाल था कि अगर पुलिस आ जाती थी तो सारा मौहल्ला थर्रा जाता था। अब हमने प्रदर्शन करके और हड़तालें करके इस लाल टोपी का ख़ौफ़ दिलों से निकाल दिया। यह बहुत बड़ी कामयाबी हमें हासिल हो गई है। और रफ़्ता रफ़्ता जब हम आगे बढ़ेंगे तो अंग्रेज़ से भी नजात मिल जायेगी।

उस वक़्त हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने बड़ी हकीमाना बात इर्शाद फ़रमाई। फ़रमाया कि आपने लोगों के दिलों से लाल

टोपी का ख़ौफ़ निकाल दिया है, आपने बड़ा ख़राब काम किया, इसलिये कि लाल टोपी का ख़ौफ़ दिलों से निकाल देने के मायने यह हैं कि अब चोरों और डाकुओं के मज़े आ गए, अब चोर चोरी करेगा और उसको लाल टोपी का ख़ौफ़ नहीं होगा। डाकू डाका डालेगा और उसको लाल टोपी का ख़ौफ़ नहीं होगा। कम से कम आप लाल टोपी का ख़ौफ़ दिलों से निकाल कर अपनी हरी टोपी का ख़ौफ़ उनके दिलों में दाख़िल कर देते तो बेशक बड़ी कामयाबी की बात थी। लेकिन आपने लाल टोपी का ख़ौफ़ तो दिलों से निकाल दिया और दूसरा ख़ौफ़ दाख़िल नहीं किया, तो अब इसका नतीजा यह होगा कि समाज में बद अम्नी और बेचैनी पैदा होगी, और लोगों के जान व माल, इज़्ज़त और आबरू ख़तरे में पड़ जायेंगे। इसलिये आपने यह कोई अच्छा काम नहीं किया, इस काम पर मैं आपकी तारीफ़ नहीं कर सकता।

ख़ौफ़ दिलों से निकल गया

यह वह बात है जो हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने साठ साल पहले फ़रमाई थी। लेकिन आज इस बात का खुली आंखों मुशाहदा कर लीजिए, कि आज वह ख़ौफ़ जब दिल से निकल गया तो अब बद अम्नी और बेचैनी का एक तूफ़ान समाज पर मुसल्लत है। वर्ना उस ज़माने का यह हाल था कि अगर कभी किसी बस्ती में किसी एक आदमी का भी कत्ल हो जाता तो पूरा मुल्क हिल जाता था, कि यह कत्ल कैसे हुआ? और उसकी तहक़ीक़ व तफ़्तीश शुरू हो जाती थी। आज इन्सान की जान मक्खी और मच्छर से ज़्यादा बेहक़ीक़त हो गई है, इसलिये कि ख़ौफ़ दिल से निकल गया।

ख़ौफ़े ख़ुदा पैदा करें

बहर हाल! यह ख़ौफ़ ऐसी चीज़ है कि इस पर सारे आलम का निज़ाम कायम है। अगर यह ख़ौफ़ न हो तो बद अम्नी, बेचैनी और अराजकता का दौर दौरा हो जाए। इसलिये कुरआने करीम में बार

बार फ़रमायाः

"اتقوا الله ، اتقوا الله"

तक़्वा (यानी परहेज़गारी) इख़्तियार करो। और तक़्वे के मायने यह हैं कि अल्लाह के ख़ौफ़ से उसकी ना फ़रमानियों से बचना। जिस तरह दुनिया का निज़ाम ख़ौफ़ के बग़ैर नहीं चल सकता, इसी तरह दीन का मदार भी अल्लाह के ख़ौफ़ पर है। ख़ुदा न करे अगर यह ख़ौफ़ दिल से मिट जाए या इसमें कमी आ जाए तो फिर गुनाहों का दौर दौरा हो जाए। जैसा कि आज हम अपनी आंखों से देख रहे हैं। कुरआने करीम में कहीं जन्नत का ज़िक्र है, कहीं जहन्नम और उसके अज़ाब का ज़िक्र है, कहीं अल्लाह तआ़ला की बड़ाई और उसकी कुदरत का ज़िक्र है, ताकि हर मुसलामन इन बातों को बार बार सोचे और इनका ध्यान करे, और इनके ज़रिये अपने दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़ पैदा करे।

तन्हाई में अल्लाह का ख़ौफ़

पुलिस का ख़ौफ़, क़ानून का ख़ौफ़ या सज़ा का ख़ौफ़ या जेल का ख़ौफ़ ऐसी चीज़ है कि जो सिर्फ़ दूसरों के सामने जराइम करने से रोक सकती है, लेकिन जब ख़ुदा का ख़ौफ़ दिल में उतर जाता है तो फिर जंगल की तन्हाई में भी और रात के अन्धेरे में भी वह ख़ौफ़ इन्सान को गुनाह से रोक देता है। जब कि कोई और देखने वाला भी मौजूद नहीं है। फ़र्ज़ कीजिए कि रात की अन्धेरी है, और जंगल की तन्हाई है, और कोई देखने वाला मौजूद नहीं है, उस वक़्त अगर कोई मोमिन गुनाह से बच रहा है तो अल्लाह के ख़ौफ़ के अ़लावा कोई चीज़ नहीं है जो उसको गुनाह से रोक रही है, अल्लाह का ख़ौफ़ उसको गुनाह से बाज़ रखे हुए है।

रोज़े की हालत में ख़ौफ़े ख़ुदा

इस ख़ौफ़े ख़ुदा का तर्जुबा करके देख लें कि इस दौर में भी आदमी कितना ही गुनाहगार और बुरा हो, और रमज़ान के महीने में

रोज़ा रख ले। अब सख़्त गर्मी पड़ रही है, सख़्त प्यास लगी हुई है, ज़बान बाहर को आ रही है, कमरा बन्द है और कमरे में अकेला है, कोई दूसरा शख़्स पास मौजूद नहीं, और कमरे में फ़्रिज मौजूद है। फ़्रिज में ठन्डा पानी रखा हुआ है, उस वक़्त इन्सान का नफ़्स यह तक़ाज़ा कर रहा है कि इस सख़्त प्यास के आलम में ठन्डा पानी पी लूं, लेकिन क्या आजके इस गए गुज़रे दौर में भी कोई मुसलमान ऐसा है जो उस वक़्त फ़्रिज में से पानी निकाल कर गिलास में डाल कर पी ले? वह हरगिज़ नहीं पियेगा। हालांकि वह पानी पी ले तो किसी भी इन्सान को कानों कान ख़बर न होगी, और कोई उसको लानत मलामत भी नहीं करेगा, और दुनिया वालों के सामने वह रोज़ेदार ही रहेगा, और शाम को बाहर निकल कर लोगों के साथ इफ़्तारी खा ले तो किसी शख़्स को भी पता नहीं चलेगा कि उसने रोज़ा तोड़ दिया है, लेकिन इसके बावजूद वह पानी नहीं पियेगा।

अब बताइये! वह कौन सी चीज़ है जो उसको बन्द कमरे में पानी पीने से रोक रही है? अल्लाह तआला के ख़ौफ़ के अलावा और कोई चीज़ नहीं जो उसको रोक रही है। चूंकि हमें रोज़ा रखने की आदत पड़ गई है इसलिये इस आदत के नतीजे में वह ख़ौफ़ कारामद हो गया।

हर मौक़े पर यह ख़ौफ़े ख़ुदा पैदा करें

अब शरीअत का मुतालबा यह है कि जिस तरह रोज़े की हालत में बन्द कमरे में अल्लाह तआला का ख़ौफ़ तुम्हें पानी पीने से रोक रहा था, बिल्कुल इसी तरह अगर निगाह का सख़्त तक़ाज़ा हो रहा है कि वह ग़लत जगह पर पड़ जाए, तो उस सख़्त तक़ाज़े को भी अल्लाह के ख़ौफ़ से दबा कर उस निगाह को रोक लो। इसी तरह ग़ीबत करने या झूठ बोलने का सख़्त तक़ाज़ा हो रहा है, तो जिस तरह रोज़े की हालत में अल्लाह के ख़ौफ़ से पानी पीने से रुक गए थे, इसी तरह यहां भी ग़ीबत और झूठ से रुक जाओ। यह है अल्लाह

का ख़ौफ़। यह जब दिलों में पैदा हो जाता है तो फिर इन्सान किसी भी हालत में अल्लाह की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम नहीं करता, यह ख़ौफ़े ख़ुदा शरीअत में मतलूब है।

जन्नत किसके लिए है?

क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने फ़रमायाः

"وَاَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى، فَاِنَّ الْجَنَّةَ هِيَ الْمَاْوٰى"

क्या अजीब अल्फ़ाज़ इर्शाद फ़रमाये हैं। फ़रमाया कि वह शख़्स जो अपने परवर्दिगार के सामने खड़ा होने से डरा, कि मैं किसी दिन अपने परवर्दिगार के सामने खड़ा हूंगा तो किस मुंह से अपने परवर्दिगार के सामने जाऊंगा। और यह ख़ौफ़ इतना ज़्यादा पैदा हुआ कि उस ख़ौफ़ के नतीजे में उसने अपने नफ़्स को ना जायज़ ख़्वाहिशों पर अमल करने से रोक लिया तो ऐसे इन्सान का ठिकाना जन्नत है। और ऐसे ही इन्सान के लिए जन्नत तैयार की गई है।

जन्नत के चारों तरफ़ मशक़्क़त

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया किः

"ان الجنة حفّت بالمكاره"

कि जन्नत को अल्लाह तआला ने उन चीज़ों से घेर रखा है जो इन्सान की तबीयत को नागवार मालूम होती हैं। यानी मशक़्क़त और मेहनत वाले काम, जो तबीयत पर बार मालूम होते हैं, उनसे जन्नत को घेरा हुआ है। गोया कि अगर तुम उन नागवार कामों को कर लोगे तो जन्नत में पहुंच जाओगे। इसलिये यह कहा जा रहा है कि अपने दिलों में अल्लाह का ख़ौफ़ पैदा करो, उसके नतीजे में ना जायज़ ख़्वाहिशों पर अमल करने में रुकावट पैदा हो जायेगी और जन्नत हासिल हो जायेगी। और यह ख़ौफ़ इस दर्जे का हो कि अपने हर फ़ेल और हर क़ौल के अन्दर यह धड़का लगा हो कि यह कहीं मेरे मालिक की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ न हो। चुनांचे सहाबा-ए-किराम

रज़ियल्लाहु अन्हुम के ख़ौफ़ का यह आलम था कि उनको उस वक़्त तक चैन नहीं आता था, जब तक हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर अपने ऊपर सज़ा जारी न करा लेते।

इबादत से इस्तिग़फ़ार करना

फिर जब इस ख़ौफ़ में तरक़्क़ी होती है तो फिर यह ख़ौफ़ सिर्फ़ इस बात का नहीं होता कि हम से गुनाह न हो जाए, बल्कि फिर इस बात का भी ख़ौफ़ पैदा हो जाता है कि हम जो इबादत कर रहे हैं वह अल्लाह जल्ल शानुहू की शान के मुताबिक़ है या नहीं? वह इबादत अल्लाह तआला के हुज़ूर पेश करने के लायक़ है या नहीं? गोया कि वह शख़्स ऐसे आमाल भी कर रहा है जो अल्लाह तआला की रिज़ा वाले आमाल हैं। लेकिन डर रहा है कि कहीं यह अमल अल्लाह तआला की बारगाह के शायाने शान न हो, और इस अमल में कोई गुस्ताख़ी और बे अदबी न हो गई हो। इसलिये बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि एक मोमिन का काम यह है कि अमल करता रहे और डरता रहे। कुरआने करीम ने फ़रमायाः

تَتَجَافٰى جُنُوْبُهُمْ عَنِ الْمَضَاجِعِ يَدْعُوْنَ رَبَّهُمْ خَوْفًا وَّطَمَعًا۔

उनके पहलू रात के वक़्त बिस्तरों से अलग रहते हैं, और अल्लाह तआला के सामने खड़े होकर इबादत करते रहते हैं। लेकिन उस वक़्त भी दिल ख़ौफ़ से ख़ाली नहीं होता, बल्कि अपने परवर्दिगार को ख़ौफ़ के साथ पुकारते रहते हैं, कि मालूम नहीं कि मेरा यह अमल अल्लाह की बारगाह में पेश करने के क़ाबिल है या नहीं?

नेक बन्दों का हाल

एक दूसरी जगह पर नेक बन्दों का ज़िक्र करते हुए अल्लाह तआला फ़रमाते हैं किः

"كَانُوْا قَلِيْلًا مِّنَ الَّيْلِ مَا يَهْجَعُوْنَ، وَبِالْاَسْحَارِهُمْ يَسْتَغْفِرُوْنَ"

यानी अल्लाह के नेक बन्दे रात के वक़्त बहुत कम सोते हैं,

बल्कि अल्लाह के सामने खड़े होकर इबादत करते रहते हैं, तहज्जुद अदा करते हैं। लेकिन जब सेहरी का वक़्त आता है तो उस वक़्त इस्तिग़फ़ार करते हैं। हदीस में आता है कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से पूछा कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! सेहरी के वक़्त इस्तिग़फ़ार करने का तो मौक़ा नहीं है, इसलिये कि इस्तिग़फ़ार तो किसी गुनाह के बाद होता है, ये तो सारी रात अल्लाह तआला के सामने खड़े होकर इबादत करते रहे, कोई गुनाह तो नहीं किया। जवाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वे लोग अपनी इबादत से इस्तिग़फ़ार करते हैं, कि जैसी इबादत करनी चाहिए थी वैसी इबादत हम नहीं कर सके। इबादत का जैसा हक़ अदा करना चाहिए था वैसा हक़ हम से अदा न हो सका। बहर हाल अल्लाह के उन नेक बन्दों को सिर्फ़ गुनाह का ख़ौफ़ नहीं होता बल्कि इबादत के ग़लत होने का भी ख़ौफ़ होता है, कि कहीं यह इबादत अल्लाह तआला की नाराज़गी का सबब न बन जाए।

अल्लाह का ख़ौफ़ उसको पहचानने के ब-क़द्र

ख़ौफ़ के बारे में उसूल यह है कि जिस शख़्स को अल्लाह तआला की जितनी मारफ़त (यानी पहचाना) ज़्यादा होगी, उतना ही उसको अल्लाह तआला का ख़ौफ़ ज़्यादा होगा, और जितना नादान होगा उतना ही ख़ौफ़ कम होगा। देखिए एक छोटा सा बच्चा है, जो अभी नादान है, उसके सामने बादशाह आ जाए या वज़ीर आ जाए, या शेर आ जाए तो उसको कोई ख़ौफ़ नहीं होता। लेकिन जो शख़्स बादशाह का मर्तबा जानता है, वह बादशाह के पास जाते हुए लरज़ता है और कांपता है। हज़रात सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को अल्लाह तआला की मारफ़त अंबिया अलैहिमुस्सलाम के बाद सब से ज़्यादा थी, इसलिये उनके अन्दर अल्लाह तआला का ख़ौफ़ भी ज़्यादा था।

हज़रत हन्ज़ला रज़ि. और ख़ौफ़

हज़रत हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु एक मर्तबा परेशान और दौड़ते हुए, कांपते हुए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए, और अर्ज़ किया किया या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! "न–फ़–क़ हन्ज़ला" यानी हन्ज़ला तो मुनाफ़िक़ हो गया। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछा कि कैसे मुनाफ़िक़ हो गए? हज़रत हन्ज़ला रज़ियल्लाहु अन्हु ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! जब हम आपकी मज्लिस में बैठते हैं और जन्नत और दोज़ख़ का ज़िक्र सुनते हैं, और आख़िरत का ज़िक्र सुनते हैं तो उसके नतीजे में दिल में रिक़्क़त और नर्मी पैदा होती है, और दुनिया से नफ़रत पैदा हो जाती है, और आख़िरत की फ़िक्र पैदा हो जाती है। लेकिन जब हम घर जाते हैं, बीवी बच्चों से मिलते हैं, ज़िन्दगी के कारोबार में लग जाते हैं तो दिल की वह कैफ़ियत बाक़ी नहीं रहती, बल्कि दुनिया की मुहब्बत हमारे दिलों पर छा जाती है। इसलिये यहां आकर एक हालत और बाहर जाकर दूसरी हालत हो जाती है, यह तो मुनाफ़िक़ होने की निशानी है। जवाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः "ऐ हन्ज़ला घबराने की बात नहीं, यह तो वक़्त वक़्त की बात है।" किसी वक़्त दिल में नर्मी ज़्यादा हो गई और किसी वक़्त कम हो गई। अल्लाह तआला के यहां इस पर मदार नहीं है, बल्कि असल मदार आमाल पर है कि इन्सान का कोई अमल शरीअत के ख़िलाफ़ न हो।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि. और ख़ौफ़

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु अपने कानों से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का यह इर्शाद सुन चुके कि "उमर जन्नत में जायेंगे"। और यह वाक़िआ भी सुन चुके कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब मैं मेराज

पर गया और वहां जन्नत की सैर की तो जन्नत में मैंने एक बहुत शानदार महल देखा, और उस महल के किनारे एक औरत बैठी वुज़ू कर रही थीं, मैंने पूछा कि यह महल किसका है? मुझे बताया गया कि यह उमर का महल है। वह महल इतना शानदार था कि मेरा दिल चाहा कि अन्दर जाकर उस महल को देखूं। लेकिन ऐ उमर! तुम्हारी ग़ैरत याद आ गई, कि तुम बहुत ग़ैरत वाले इन्सान हो। इसलिये मैं उस महल के अन्दर दाख़िल नहीं हुआ और वापस आ गया। जब हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह सुना तो रो पड़े, और अर्ज़ किया कि:

"او عليك يا رسول الله اغار؟"

या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! क्या मैं आप पर ग़ैरत करूंगा?

देखिए! हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बान से अपने लिए जन्नत की ख़ुशख़बरी सुन चुके, इसके बावजूद आपका यह हाल था कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद हज़रत हुज़ैफ़ा बिन यमान रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में तशरीफ़ लाए, जिनको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुनाफ़िक़ीन की फ़ेहरिस्त बता दी थी, कि मदीने में फ़लां फ़लां शख़्स मुनाफ़िक़ है। आप उनसे पूछ रहे हैं कि ऐ हुज़ैफ़ा! ख़ुदा के लिए मुझे यह बता दो कि कहीं उस फ़ेहरिस्त में मेरा नाम तो नहीं है? ख़्याल यह आ रहा था कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तो जन्नत की ख़ुशख़बरी दे दी थी, लेकिन कहीं ऐसा न हो कि मेरे बाद के आमाल की वजह से उन बशारतों (ख़ुशख़बरी) पर पानी फिर जाए। देखिए! हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु को यह ख़तरा लगा हुआ है। बहर हाल! जिस शख़्स को जितनी ज़्यादा मारफ़त होती है, उतना ही उसको ख़ौफ़ भी ज़्यादा होता है। यह ख़ौफ़ जब तक दिल में किसी न किसी दर्जे में हासिल न हो, याद रखिए! उस वक़्त तक तक़वा

हासिल नहीं हो सकता।

ख़ौफ़ पैदा करने का तरीक़ा

इस ख़ौफ़ को पैदा करने का तरीक़ा यह है कि चौबीस घन्टों में से कुछ वक़्त फ़जर के बाद या रात को सोते वक़्त मुक़र्रर करे, फिर उस वक़्त इस बात का तसव्वुर करे कि मैं मर रहा हूं, मौत के बिस्तर पर लेटा हुआ हूं, रिश्तेदार और क़रीबी लोग जमा हैं, मेरी रूह निकल रही है, उसके बाद मुझे कफ़न पहनाने के बाद दफ़न किया जा रहा है। फिर फ़रिश्ते सवाल जवाब के लिए आ रहे हैं, अल्लाह तआला की बारगाह में पेश हूं। इन सब बातों का ध्यान करके सोचे, जब रोज़ाना इन्सान ये सब बातें सोचेगा तो इन्शा अल्लाह दिल से रफ़्ता रफ़्ता ग़फ़लत के पर्दे उठने शुरू हो जायेंगे। हम पर ग़फ़लत इसलिये छाई हुई है कि हम और आप मौत से ग़ाफ़िल हैं। अपने हाथों से अपने प्यारों को मिट्टी देकर आते हैं, अपने कांधों पर जनाज़ा उठाते हैं, और अपनी आंखों से देखते हैं कि फ़लां आदमी बैठे बैठे दुनिया से रुख़्सत हो गया, और अपनी आंखों से देखते हैं कि जिस दुनिया को जमा करने और उसको हासिल करने के लिए सुबह शाम दौड़ धूप कर रहा था, मेहनत और मशक़्क़त बर्दाश्त कर रहा था, लेकिन जब दुनिया से गया तो उनकी तरफ़ मुंह मोड़ कर भी नहीं देखा। इन तमाम चीज़ों को देखने के बावजूद हम यह समझते हैं कि यह मौत का वाक़िआ उसके साथ पेश आया है, अपनी तरफ़ ध्यान नहीं जाता कि मुझे भी एक दिन इस तरह दुनिया से रुख़्सत होना है। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"اكثروا ذكرها ذم اللذات الموت"

उस चीज़ को कसरत से याद करो जो इन सारी लज़्ज़तों को ख़त्म करने वाली है यानी मौत। उसको भुलाओ नहीं, बल्कि उसको कसरत से याद करो। बहर हाल! रोज़ाना सुबह या शाम के वक़्त इन चीज़ों का थोड़ा सा मुराक़बा यानी ध्यान कर ले तो इस से मतलूबा

ख़ौफ़ का कुछ न कुछ हिस्सा ज़रूर पैदा हो जाता है।

तक़दीर ग़ालिब आ जाती है

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम में से एक शख़्स जन्नत वालों के अमल करता रहता है, यहां तक कि उसके और जन्नत के दरमियान एक हाथ का फ़ासला रह जाता है, उस वक़्त उसके ऊपर लिखी हुई तक़दीर ग़ालिब आ जाती है और वह शख़्स फिर जहन्नम वालों के आमाल शुरू कर देता है, यहां तक कि आख़िरकार वह जहन्नम में दाख़िल हो जाता है। इसके उलट एक शख़्स सारी उम्र जहन्नम वालों के अमल करता रहता है, यहां तक कि उसके और जहन्नम के दरमियान एक हाथ का फ़ासला रह जाता है, उस वक़्त उसके ऊपर लिखी हुई तक़दीर ग़ालिब आ जाती है, और उसके बाद वह जन्नत के अमल शुरू कर देता है, यहां तक कि आख़िरकार वह जन्नत में दाख़िल हो जाता है।

अपने अमल पर नाज़ न करें

इस हदीस से यह सबक़ मिला कि कोई शख़्स अपने अमल पर नाज़ और गुरूर न करे, कि मैं फ़लां अमल कर रहा हूं और फ़लां अमल कर रहा हूं। इसलिये कि इन आमाल का कोई एतिबार नहीं, एतिबार ज़िन्दगी के आख़री आमाल का है। जैसा कि एक हदीस में फ़रमायाः

"انما العبرة بالخواتيم"

यानी ख़ात्मे का एतिबार है, कि ख़ात्मे के वक़्त वह कैसे आमाल कर रहा था। कहीं ऐसा न हो कि किसी अमल की नहूसत इन्सान को जहन्नमियों के आमाल की तरफ़ ले जाए। इसलिये नेक अमल करते हुए भी डरना चाहिए।

बुरे अमल की नहूसत

लेकिन एक बात ख़ूब समझ लेनी चाहिए कि उस इन्सान से

जहन्नमियों वाले आमाल जबरी तौर पर नहीं कराए जायेंगे, ताकि उसकी वजह से वह जहन्नम में चला जाए। ऐसा नहीं होगा, बल्कि वह ये सारे आमाल अपने इख़्तियार से करता है, मजबूर नहीं होता। लेकिन उन आमाल की नहूसत ऐसी होती है कि वह पिछले सारे नेक आमाल के अज्र व सवाब को ख़त्म कर देती है, और बुरे आमाल की तरफ़ इन्सान को घसीट कर लेजाती है। बाज़ गुनाहों की नहूसत ऐसी होती है कि उस नहूसत की वजह से वह फिर दूसरे गुनाह में भी मुब्तला हो जाता है, और आहिस्ता आहिस्ता वह गुनाहों के अन्दर इतना मश्गूल हो जाता है कि उसके नतीजे में उसकी सारी पिछली ज़िन्दगी पर पानी फिर जाता है। इसलिये बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि किसी भी छोटे गुनाह को मामूली समझ कर मत करो, इसलिये कि क्या पता यह छोटा गुनाह तुम्हारी उम्र भर की नेकियों को ख़त्म कर दे। और फिर किसी गुनाह को छोटा समझ कर कर लेना ही उसको बड़ा बना देता है। और उसका नकद वबाल यह होता है कि वह गुनाह दूसरे गुनाह को खींचता है, रफ़्ता रफ़्ता फिर वह गुनाहों के अन्दर मुब्तला होता चला जाता है।

छोटे और बड़े गुनाहों की मिसाल

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि छोटे गुनाह की मिसाल ऐसी है जैसे छोटी सी चिंगारी, और बड़े गुनाह की मिसाल ऐसी है जैसे बड़ी आग और बड़ा अंगारा। अब कोई शख़्स यह सोच कर कि यह तो छोटी सी चिंगारी है, और बड़ी आग तो है नहीं, लाओ मैं इसको अपने सन्दूक़ में रख लेता हूं, तो इसका नतीजा यह होगा कि वह छोटी सी चिंगारी सारे सन्दूक़ और कपड़ों को जला कर राख कर देगी।

बुज़ुर्गों के साथ गुस्ताख़ी का वबाल

इसी तरह अल्लाह वालों की बे अदबी करना, उनकी शान में गुस्ताख़ी करना या उनका दिल दुखाना, यह ऐसी चीज़ है कि कभी

कभी इसकी वजह से इन्सान की मत उल्टी हो जाती है। इसलिये अगर किसी अल्लाह वाले से तुम्हें इख़्तिलाफ़ (मतभेद) हो गया तो उस इख़्तिलाफ़ को इख़्तिलाफ़ की हद तक रखो, लेकिन अगर तुम ने उसकी शान में गुस्ताख़ी और बे अदबी शुरू कर दी तो उसका वबाल यह होता है कि कभी कभी इन्सान गुनाहों में फंसता चला जाता है। मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि का एक रिसाला है, जिसका नाम है "दर्से इब्रत" उसमें एक बहुत बड़े बुज़ुर्ग का इब्रतनाक वाक़िआ लिखा है, जो सारी उम्र शैख़, बुज़ुर्ग और अल्लाह वाले रहे, और फिर अचानक मत उल्टी हुई और बुरे कामों के अन्दर मुब्तला हो गए। तो कभी कभी यह छोटे से गुनाह का वबाल होता है। इसी लिए कहा जाता है कि किसी भी गुनाह को छोटा समझ कर मत करो, कहीं ऐसा न हो कि वह गुनाह बुरे ख़ात्मे का सबब न हो जाए। इसलिये तमाम बुज़ुर्ग हमेशा ख़ैर पर ख़ात्मे की दुआएं कराते हैं।

नेक अमल की बर्कत

इसके उलट कभी कभी ऐसा होता है कि एक शख़्स के आमाल ख़राब हैं, गुनाहों के अन्दर मुब्तला है। अचानक अल्लाह तआला ने नेक आमाल की तौफ़ीक़ दे दी, और यह तौफ़ीक़ भी किसी नेक अमल के नतीजे में मिलती है। जैसे पहले किसी छोटे नेक अमल की तौफ़ीक़ हो गई और फिर उसकी बर्कत से अल्लाह तआला ने और नेक आमाल की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी, और उसके नतीजे में उसके लिए जन्नत का दरवाज़ा खुल गया। इसी वजह से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"لا يحقرن احدمن المعروف شيئا"

तुम में से कोई शख़्स किसी भी नेकी को हक़ीर मत समझे, क्या पता वही नेकी तुम्हारी ज़िन्दगी के अन्दर इन्क़िलाब पैदा कर दे, और उसकी वजह से बेड़ा पार हो जाए, और अल्लाह तआला तुम्हारी

मग़फ़िरत फ़रमा दे। अल्लाह वालों के ऐसे बेशुमार वाकिआत हैं कि छोटी सी नेकी की और उसकी बदौलत अल्लाह तआला ने ज़िन्दगी में इन्क़िलाब पैदा फ़रमा दिया। इसलिये छोटी सी नेकी को भी हक़ीर मत समझो। और मैंने एक रिसाला "आसान नेकियां" के नाम से लिख दिया है। जिसमें छोटे छोटे आमाल लिख दिए हैं, जिनकी हदीसों में बड़ी फ़ज़ीलत बयान फ़रमाई गई है। अगर इन्सान उन नेक कामों को कर ले तो इसके नतीजे में उसके नेक आमाल में बहुत ज़्यादा इज़ाफ़ा हो सकता है। हर मुसलमान को यह रिसाला ज़रूर पढ़ना चाहिए और उन नेकियों को अपनी ज़िन्दगी में अपनाने की कोशिश करनी चाहिए।

तक़दीर की हक़ीक़त

बाज़ लोग इस हदीस की बुनियाद पर यह कहते हैं कि जब तक़दीर में लिख दिया गया है कि कौन शख़्स जन्नती है और कौन शख़्स जहन्नमी है तो अब अमल करने से क्या फ़ायदा? होगा तो वही जो तक़दीर में लिखा है। ख़ूब समझ लीजिए कि इसका यह मतलब नहीं है कि तुम वही अमल करोगे जो तक़दीर में लिखा है। बल्कि इस हदीस का मतलब यह है कि तक़दीर में वही बात लिखी है जो तुम लोग अपने इख़्तियार से करोगे। इसलिये कि तक़दीर तो अल्लाह के इल्म का नाम है, और अल्लाह तआला को पहले से पता था कि तुम अपने इख़्तियार से क्या कुछ करने वाले हो। इसलिये वह सब अल्लाह तआला ने लौहे महफ़ूज़ में लिख दिया। लेकिन तुम्हारा जन्नत में जाना या जहन्नम में जाना हक़ीक़त में तुम्हारे आमाल ही की बुनियाद पर होगा। यह बात नहीं है कि इन्सान अमल वही करेगा तो तक़दीर में लिखा है, बल्कि तक़दीर में वही लिख दिया गया है जो इन्सान अपने इख़्तियार से अमल करेगा। अल्लाह तआला ने इन्सान को इख़्तियार दिया है और उस इख़्तियार के मुताबिक़ इन्सान अमल करता रहता है। अब यह सोचना कि तक़दीर में तो सब कुछ लिख दिया गया है, इसलिये हाथ पर हाथ रख कर बैठ जाओ, यह

दुरुस्त नहीं है। चुनांचे जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह हदीस बयान फ़रमाई तो सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने पूछा किः

"ففيما العمل يا رسول الله صلى الله عليه وسلم؟"

जब यह फ़ैसला हो चुका कि फ़लां शख़्स जन्नती और फ़लां शख़्स जहन्नमी, तो फिर अमल करने से क्या फ़ायदा? सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"اعملوا فكل ميسر لما خلق له"

अमल करते रहो, इसलिये कि हर इन्सान को वही काम करना आसान होगा जिसके लिए वह पैदा किया गया था। इसलिये तुम अपने इख़्तियार को काम में लाकर अमल करते रहो।

बेफ़िक्र न हो जाएं

इस हदीस को यहां लाने को मन्शा यह है कि आदमी यह न सोचे कि मैं बड़े बड़े वज़ीफ़े और तस्बीहात पढ़ रहा हूं, और नवाफ़िल पढ़ रहा हूं, और अपनी तरफ़ से पूरी शरीअत पर चल रहा हूं। इसलिये अब मैं मुत्मइन हो जाऊं। अरे आख़री दम तक इन्सान को मुत्मइन नहीं होना चाहिए। बल्कि यह धड़का और यह ख़ौफ़ इन्सान को लगा रहना चाहिए कि कहीं ऐसा न हो कि मेरी हालत बदल जाए। मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं:

अन्दरीं राह मी तराश व मी ख़राश
ता दमे आख़िर दमे फ़ारिग़ मबाश

इस रास्ते में तो हर वक़्त तराश ख़राश चलती रहती है, हर वक़्त अपने नफ़्स की निगरानी करनी पड़ती है, कि कहीं यह ग़लत रास्ते पर तो नहीं जा रहा है। बड़े बड़े लोग बेफ़िक्री की वजह से फिसल गए, इसलिये आख़री दम तक इन्सान को बेफ़िक्र न होना चाहिए।

जहन्नम का सब से हल्का अज़ाब

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः क़ियामत के दिन सब से हल्का अज़ाब जिस शख़्स को होगा, वह हल्का अज़ाब यह होगा कि उसके पांव के तलवों के नीचे दो चिंगारियां रख दी जायेंगी, मगर उनकी सख़्ती इतनी ज़्यादा होगी कि उसकी वजह से उसका दिमाग़ खौल रहा होगा, और वह शख़्स यह समझ रहा होगा कि शायद सब से ज़्यादा सख़्त अज़ाब मुझको हो रहा है। हालांकि उसको सब से हल्का अज़ाब हो रहा होगा। कुछ रिवायतों में आता है कि यह अज़ाब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा अबू तालिब को होगा, क्योंकि उन्होंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मदद और हिमायत बहुत की थी, लेकिन आख़री वक़्त तक ईमान नहीं लाए। इसलिये उनको यह अज़ाब होगा। और अल्लाह पाक ही ज़्यादा जानते हैं।

बहर हाल! इस हदीस से यह बताना मक़सद है कि जब सब से हल्के अज़ाब की वजह से यह हाल होगा कि उस चिंगारी के नतीजे में उस शख़्स का दिमाग़ खौल रहा होगा, तो जिनके लिए सख़्त अज़ाब की वईद आई है, उनका क्या हाल होगा? जहन्नम के इस अज़ाब का इन्सान कभी कभी तसव्वुर कर लिया करे तो उसके नतीजे में इन्सान के अन्दर ख़ौफ़ पैदा होता है, और उसके दिल में तक़वा जड़ पकड़ता है।

जहन्नमियों के दर्जे

एक हदीस में मुख़्तलिफ़ जहन्नमियों का हाल बयान फ़रमाते हुए सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि बाज़ जहन्नमी ऐसे होंगे कि जहन्नम की आग उनके टख़्ने तक पहुंची होगी। जिसके सिर्फ़ तलवों में चिंगारी रखी जायेगी उसका हाल तो आपने ऊपर की हदीस में सुन लिया। अगर वह आग टख़्नों तक पहुंच जाए तो उसका क्या हाल होगा। और बाज़ जहन्नमी ऐसे

होंगे कि जहन्नम की आग उनके घुटनों तक पहुंची हुई होगी। और बाज़ जहन्नमी ऐसे होंगे कि आग उनकी कमर तक पहुंची हुई होगी, और बाज़ जहन्नमी ऐसे होंगे कि उनकी हंसली की हड्डी तक आग पहुंची हुई होगी। ये जहन्नमियों के मुख़्तलिफ़ दर्जे हैं। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब की हिफ़ाज़त फ़रमाए, आमीन।

हश्र के मैदान में इन्सानों का हाल

यह तो जहन्नम का हाल था, लेकिन जहन्नम में जाने से पहले जब मैदाने हश्र में पेशी होगी, उस वक़्त लोगों का क्या हाल होगा? इसके बारे में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि लोग रब्बुल आ़लमीन के सामने खड़े होंगे, यहां तक कि एक शख़्स अपने पसीने में आधे कानों तक डूबा हुआ होगा, गोया कि गर्मी की शिद्दत की वजह से पसीना निकलते निकलते इतना ज़्यादा हो गया कि वह आधे कानों तक पहुंच गया। एक और हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि क़ियामत के दिन लोगों का इतना पसीना बहेगा कि वह सत्तर हाथ ज़मीन के अन्दर बह कर चला जायेगा। और वह पसीना लोगों को ढांपता रहेगा, यहां तक कि उनके कानों तक पहुंच जायेगा।

जहन्नम की लम्बाई चौड़ाई

एक और रिवायत में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि एक मर्तबा हम लोग हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में बैठे हुए थे कि इतने में आपने किसी चीज़ के गिरने की आवाज़ सुनी, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा—ए—किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम से पूछा कि तुम जानते हो कि यह किस चीज़ के गिरने की आवाज़ है? हमने अ़र्ज़ किया कि अल्लाह और उसके रसूल ही बेहतर जानते हैं। फिर आपने इर्शाद

फ़रमाया कि आज से सत्तर साल पहले एक पत्थर जहन्नम के अन्दर फेंका गया था, आज वह पत्थर उसकी तह में पहुंचा है, यह उस पत्थर के गिरने की आवाज़ है। पहले लोग इसको बहुत मुबालग़ा समझते थे कि वह पत्थर सत्तर साल सफ़र करने बाद तह में पहुंचा, लेकिन अब तो साइन्स ने तरक़्क़ी कर ली है। चुनांचे साइन्स का कहना है कि बहुत से सितारे ऐसे हैं कि जब से वे पैदा हुए हैं उनकी रोशनी ज़मीन की तरफ़ सफ़र कर रही है, लेकिन आज तक वह रोशनी ज़मीन तक नहीं पहुंची। जब अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ात इस क़द्र वसी (बड़ी और लम्बी चौड़ी) हैं तो फिर इसमें क्या बईद है कि एक पत्थर जहन्नम के अन्दर सत्तर साल सफ़र करने के बाद उसकी तह में पहुंचा हो। बहर हाल! इस हदीस के ज़रिये जहन्नम की वुस्अ़त बतलाना मक़सद है। अल्लाह तआ़ला हम सब को इस जहन्नम से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

इन तमाम हदीसों का हासिल यह है कि इन्सान कभी कभी अपनी मौत का और जन्नत और जहन्नम की इन बातों का तसव्वुर किया करे। इस से रफ़्ता रफ़्ता दिलों में नर्मी और ख़ौफ़ पैदा होगा। उसके ज़रिये फिर नेक आमाल का करना आसान हो जायेगा, और गुनाहों को छोड़ना भी आसान हो जायेगा। अल्लाह तआ़ला हम सब के दिलों में यह ख़ौफ़ पैदा फ़रमा दे, और गुनाहों से बचने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

واخردعوانا ان الحمد لله رب العالمين

रिश्तेदारों के साथ

अच्छा सुलूक कीजिए

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۔

"عن ابی هريرة رضی الله عنه قال: قال رسول الله صلی الله عليه وسلم: ان الله تعالى خلق الخلق، حتى اذا فرغ منه قامت الرحم فقالت: هذا مقام العائذبك من القطيعة قال: نعم اما ترضين ان اصل من وصلك واقطع من قطعك، قالت : بلى قال: بذلك لك۔

ثم قال رسول الله صلى الله عليه وسلم: اقرء وا ان شئتم: فَهَلْ عَسَيْتُمْ اِنْ تَوَلَّيْتُمْ اَنْ تُفْسِدُوْا فِی الْاَرْضِ وَتُقَطِّعُوْٓا اَرْحَامَكُمْ، اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ فَاَصَمَّهُمْ وَاَعْمٰى اَبْصَارَهُمْ" (مسلم شريف)

सिला रहमी की ताकीद

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि नबी करीम सरवरे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः जब अल्लाह तबारक व तआला ने मख़्लूक़ को पैदा फ़रमाया तो उस से फ़रागत के बाद क़राबत दारी और रिश्तेदारी खड़ी हो गयी। दूसरी रिवायत में आता है कि अल्लाह तआला के अर्श का पाया पकड़ कर खड़ी हो गयी। अब सवाल यह है कि क़राबत दारी और रिश्तेदारी किस तरह खड़ी हो गयी? यह वह बात है जिसको अल्लाह

और अल्लाह के रसूल ही जान सकते हैं। हम इसकी कैफ़ियत नहीं बतला सकते, इसलिये कि क़राबत दारी कोई ऐसी चीज़ नहीं है जिसका जिस्म हो। लेकिन कभी कभी अल्लाह तआ़ला ऐसी चीज़ों को जो जिस्म नहीं रखती हैं, आख़िरत और मला-ए-आला में जिस्म अ़ता फ़रमा देते हैं। बहर हाल! वह रिश्तेदारी खड़ी हो गयी, और अ़र्ज़ किया कि या अल्लाह! यह ऐसी जगह है जहां पर मैं अपने हक़ के ज़ाया (बर्बाद) होने की पनाह मांगती हूं। यानी दुनिया में लोग मेरे हुकूक़ को पामाल और ज़ाया करेंगे। इस से मैं पनाह चाहती हूं कि कोई मेरे हक़ को पामाल न करे। जवाब में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः क्या तुम इस बात पर राज़ी नहीं हो कि मैं यह ऐलान करूं कि जो शख़्स तुम्हारे हुकूक़ को ज़ाया करेगा, तो मैं उसको सज़ा दूंगा, और उसके हुकूक़ को अदा नहीं करूंगा। जवाब में रिश्तेदारी ने कहाः या अल्लाह! मैं इस पर राज़ी हूं। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः मैं तुम्हें यह मक़ाम और दर्जा देता हूं और यह ऐलान करता हूं कि जो शख़्स रिश्तेदारी के हुकूक़ का ख़्याल रखेगा और रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करेगा तो मैं भी उसके साथ अच्छा सुलूक करूंगा। और जो शख़्स रिश्तेदारों के हुकूक़ को पामाल (ख़राब) करेगा मैं भी उसके हुकूक़ का ख़्याल नहीं रखूंगा।

यह वाक़िआ़ और हदीस बयान करने के बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः अगर चाहो तो कुरआने करीम की यह आयत पढ़ लो, जिसमें अल्लाह तआ़ला ने इन्सानों से ख़िताब करते हुए फ़रमायाः

"فَهَلْ عَسَيْتُمْ اِنْ تَوَلَّيْتُمْ اَنْ تُفْسِدُوْا فِى الْاَرْضِ وَتُقَطِّعُوْآ اَرْحَامَكُمْ، اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ فَاَصَمَّهُمْ وَاَعْمٰٓى اَبْصَارَهُمْ" (سورة محمد:٢٣-٢٤)

"क्या ऐसा है कि तुम ज़मीन के अन्दर फ़साद मचाओ, और रिश्तेदारियों के हुकूक़ को ज़ाया करो। ये वे लोग हैं जिनके ऊपर अल्लाह तआ़ला ने लानत फ़रमायी है। और उनको बेहरा और अन्धा

बना दिया है।"

कता रहमी करने वाले के लिये अल्लाह तआ़ला ने इतनी सख़्त वईद इरशाद फ़रमायी।

एक और आयत

यह हदीस दर हक़ीक़त उन तमाम क़ुरआनी आयतों की तफ़सीर है जिनमें बार बार अल्लाह तआ़ला ने रिश्तेदारों के हुक़ूक़ का ख़्याल रखने का हुक्म दिया है, कि क़राबत दारों के साथ अच्छा सुलूक करो। चुनांचे निकाह के ख़ुतबे के मौक़े पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम क़ुरआने करीम की यह आयत तिलावत किया करते थे:

"وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِیْ تَسَآءَلُوْنَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ" (سورة نسآء: ١)

यानी "उस अल्लाह से डरो जिसके नाम का वास्ता देकर तुम दूसरों से अपने हुक़ूक़ मांगते हो, और रिश्तेदारियों के हुक़ूक़ ज़ाया करने से डरो।"

चुनांचे जब कोई शख़्स दूसरे से अपना हक़ मांगता है तो अल्लाह तआ़ला का वास्ता देकर मांगता है, कि अल्लाह के लिये मेरा यह हक़ दे दो। और इस बात से डरो कि कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारी तरफ़ से किसी रिश्तेदार की हक़ तल्फ़ी हो जाये, और उसके नतीजे में अल्लाह तआ़ला तुम्हें आख़िरत में अ़ज़ाब दें। क़ुरआने करीम और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीसें रिश्तेदारियों के हुक़ूक़ सही तौर पर अदा करने के बयान से और इसकी ताकीद से भरी हुई हैं।

"शरीअ़त" हुक़ूक़ के अदा करने का नाम है

बात दर असल यह है कि "शरीअ़त" हुक़ूक़ के अदा करने का दूसरा नाम है, शरीअ़त में अल्लाह का हक़ अदा करना है, या अल्लाह के बन्दों का हक़ अदा करना है। फिर अल्लाह के बन्दों में भी मुख़्तलिफ़ लोगों के मुख़्तलिफ़ हुक़ूक़ हैं। जैसे मां बाप के हुक़ूक़ हैं,

औलाद के हुकूक़ हैं, बीवी के हुकूक़, शौहर के हुकूक़, रिश्तेदारों के हुकूक़ हैं, पड़ौसियों के हुकूक़ हैं, जो सफ़र में साथ हैं उनके हुकूक़ हैं। इस तरह पूरी शरीअ़त हुकूक़ का नाम है। इन हुकूक़ में से किसी एक का भी हक़ अदा करने से रह जाये तो शरीअ़त पर अ़मल नाक़िस है, और उसका दीन नाक़िस है। अगर किसी ने अल्लाह तआ़ला का हक़ तो अदा कर दिया, लेकिन अल्लाह के बन्दों का हक़ अदा न किया तो दीन कामिल न हुआ, और दीन पर अ़मल अधूरा रह गया। इनमें से अल्लाह तआ़ला ने ख़ास तौर पर रिश्तेदारों के हुकूक़ भी रखे हैं।

तमाम इन्सान आपस में रिश्तेदार हैं

यूं अगर देखा जाये तो सारे आदमी और सारे इन्सान आपस में रिश्तेदार हैं, जैसा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हदीस में भी इसका ज़िक्र फ़रमाया है। क्योंकि तमाम इन्सानों के बाप एक हैं, यानी हज़रत आदम अ़लैहिस्सलाम, जिनसे हम सब पैदा हुए। बाद में आगे चल कर शाख़ें होती चली गयीं, ख़ानदान और क़बीले तक़्सीम होते चले गये। कोई कहीं जाकर आबाद हुआ, और कोई कहीं और, दूर की रिश्तेदारियां हो गयीं। जिसकी वजह से आपस में एक दूसरे को रिश्तेदार नहीं समझते। वर्ना हक़ीक़त में तो सारे इन्सान एक दूसरे के क़राबत दार और रिश्तेदार हैं। अलबत्ता किसी की रिश्तेदारी क़रीब की है, किसी की दूर की है, लेकिन रिश्तेदारी ज़रूर है।

हुकूक़ का अदा करना सुकून का ज़रिया है

जो ज़्यादा क़रीबी रिश्तेदार होते हैं। जिनको असल में रिश्तेदार समझा जाता है, जैसे भाई, बहन, चचा, ताया, बीवी, शौहर, ख़ाला, मामूं, बाप और माँ। इन रिश्तेदारों के कुछ ख़ास हुकूक़ अल्लाह तआ़ला ने मुक़र्रर फ़रमा दिये हैं। और उन हुकूक़ की बड़ी वजह यह भी है कि अगर इन रिश्तेदारों के हुकूक़ सही तौर पर अदा किये

जायें तो इसके नतीजे में ज़िन्दगी अमन वाली और पुर सुकून हो जाती है। यह लड़ाई और ये झगड़े और ये नफ़रतें और दुश्मनियां, ये मुक़दमे बाज़ियां, ये सब इन हुकूक़ को ज़ाया करने का नतीजा होता है। अगर हर शख़्स अपने अपने रिश्तेदारों के हुकूक़ अदा करे तो फिर कभी कोई झगड़ा और कोई लड़ाई न हो, कभी मुक़दमे बाज़ी की नौबत न आये। इसलिये अल्लाह तआला ने ख़ास तौर पर यह हुक्म दिया कि अगर तुम इन हुकूक़ को अदा करोगे तो तुम्हारी ज़िन्दगी पुर सुकून होगी। "ख़ानदान" किसी भी समाज की बुनियाद होती है, अगर "ख़ानदान" संगठित नहीं है और ख़ानदान वालों के दरमियान आपस में मुहब्बतें नहीं हैं, आपस के ताल्लुक़ात दुरुस्त नहीं हैं, तो यह चीज़ पूरे समाज को ख़राब करती है। और पूरे समाज के अन्दर इसका फ़साद फैलता है, इसके नतीजे में पूरी क़ौम ख़राब होती है। इस वजह से अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रिश्तेदारों के हुकूक़ अदा करने और उनके साथ अच्छा सुलूक करने का ख़ास तौर पर हुक्म दिया।

अल्लाह के लिये अच्छा सुलूक करो

वैसे तो हर मज़हब में और हर अख़्लाक़ी निज़ाम में रिश्तेदारों के हुकूक़ की रियायत का सबक़ दिया गया है, और हर मज़हब वाले यह कहते हैं कि रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करो। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन हुकूक़ के बारे में एक ऐसा उसूल बयान फ़रमाया है जो तमाम दूसरे मज़ाहिब और अख़्लाक़ी निज़ामों से बिल्कुल मुमताज़ और अलग है। अगर वह उसूल हमारे दिलों में बैठ जाये तो फिर कभी भी रिश्तेदारों के हुकूक़ की ख़िलाफ़ वर्ज़ी न हो, और उनके साथ कभी भी बद सुलूकी न करें। वह उसूल यह है कि जब भी उनके साथ अच्छा बर्ताव या अच्छा सुलूक करो तो यह काम उनको ख़ुश करने से ज़्यादा अल्लाह तआला को ख़ुश करने के लिये करो, यानी रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करते वक़्त यह नियत होनी चाहिये कि यह अल्लाह तआला

का हुक्म है, और इस काम से अल्लाह तआला को राज़ी करना मक़सद है, अल्लाह तआला की ख़ुशनूदी की वजह से यह सुलूक कर रहा हूं। जब इन्सान अल्लाह तआला की ख़ुशी की ख़ातिर अच्छा सुलूक करेगा तो इसका लाज़मी नतीजा यह होगा कि वह अपने रिश्तेदारों से किसी "बदले" की उम्मीद नहीं रखेगा। बल्कि उसके ज़ेहन में यह होगा कि मैं तो अल्लाह तआला को राज़ी करने के लिये उनके साथ अच्छा सुलूक कर रहा हूं। मेरे अच्छे सुलूक के नतीजे में ये रिश्तेदार ख़ुश हो जायें और मेरा शुक्रिया अदा करें, और कोई बदला दें तो वह एक नेमत है, लेकिन अगर वे ख़ुश न हों, और बदला न दें तो भी मुझे उनके साथ अच्छा सुलूक करना है। मुझे अपना वह फ़रीज़ा अन्जाम देना है जो मेरे अल्लाह ने मेरे सुपुर्द किया है।

शुक्रिये और बदले का इन्तिज़ार मत करो

रिश्तेदारों के हुक़ूक़ अदा करने के बारे में हर शख़्स यह कहता है कि ये हुक़ूक़ अदा करना अच्छी बात है। ये हुक़ूक़ अदा करने चाहियें। लेकिन सारे झगड़े और सारे फ़साद यहां से पैदा होते हैं कि जब रिश्तेदार के साथ अच्छा सुलूक कर लिया तो अब आप इस उम्मीद और इन्तिज़ार में बैठे हैं कि उसकी तरफ़ से शुक्रिया अदा किया जायेगा। उसकी तरफ़ से इस हुस्ने सुलूक (अच्छे सुलूक) का बदला मिलेगा। और इस इन्तिज़ार में हैं कि वह मेरे हुस्ने सुलूक (अच्छे सुलूक) के बारे में ख़ानदान में चर्चा करेगा, और मेरे गुन गायेगा। लेकिन आपकी यह उम्मीद पूरी नहीं हुई, उसने न तो शुक्रिया अदा किया और न ही बदला दिया, तो अब आपके दिल में उसकी तरफ़ से बुराई आ गयी, कि हमने उसके साथ ऐसा सुलूक किया लेकिन उसने तो पलट कर पूछा भी नहीं, उसकी ज़बान पर तो कभी शुक्रिये का भी लफ़्ज़ नहीं आया, उसने तो कभी बदला ही नहीं दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि आपने उसके साथ जो हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) किया था उसके सवाब को मलियामेट कर

दिया। आप अपने दिल में उसकी तरफ़ से बुराई लेकर बैठ गये, और आइन्दा जब कभी हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) करने का मौक़ा आयेगा तो आप यह सोचेंगे कि उसके साथ हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) करने से क्या फ़ायदा? उसकी ज़बान पर तो कभी "शुक्रिया" का लफ़्ज़ भी नहीं आता। मैं उसके साथ क्या अच्छाई करूं। चुनांचे आइन्दा के लिये उसके साथ हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) करना छोड़ दिया, और अब तक जो उसके साथ अच्छा सुलूक किया था उसका सवाब भी बेकार गया। इसलिये कि अब तक जो भी उसके साथ अच्छा सुलूक किया था वह अल्लाह के लिये नहीं किया था, बल्कि वह तो शुक्रिये और बदला लेने के लिये किया था। इसलिये हुज़ूर नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब किसी के साथ अच्छा सुलूक करो तो सिर्फ़ अल्लाह को राज़ी करने के लिये करो, इस ख़्याल से मत करो कि यह मेरे साथ भी बदले में अच्छा सुलूक करेगा, या मेरा शुक्रिया अदा करेगा।

सिला रहमी करने वाला कौन है?

एक हदीस जो हमेशा याद रखनी चाहिये। वह यह कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

"ليس الواصل بالمكافى لكن الواصل من اذا قطعت رحمه وصلها" (بخارى شريف)

यानी वह शख़्स सिला रहमी करने वाला नहीं है जो अपने किसी रश्तिेदार की सिला रहमी का बदला दे, कि दूसरा रिश्तेदार मेरे साथ जितनी सिला रहमी करेगा मैं भी उसके साथ उतनी ही सिला रहमी करूंगा। और अगर वह सिला रहमी करेगा तो मैं भी करूंगा, और अगर नहीं करेगा तो मैं भी नहीं करूंगा। ऐसा शख़्स सिला रहमी करने वाला नहीं है, उसको सिला रहमी का अज्र व सवाब नहीं मिलेगा, बल्कि सिला रहमी करने वाला हक़ीक़त में वह शख़्स है कि दूसरा तो उसका हक़ ज़ाया कर रहा है, और उसके साथ क़ता ताल्लुक़ कर रहा है, लेकिन यह शख़्स फिर भी अल्लाह तआला की

रिज़ा पाने की ख़ातिर उसके साथ अच्छा मामला कर रहा है। यह शख़्स हकीक़त में सिला रहमी करने वाला है, और सिला रहमी के अज्र व सवाब का हक़दार है।

हमें रस्मों ने जकड़ लिया है

आज जब किसी शख़्स से पूछा जाये कि रिश्तेदारों का भी कुछ हक़ है? हर एक हम में से यही जवाब देगा कि रिश्तेदारों के बहुत से हक़ हैं। लेकिन कौन शख़्स उन हुक़ूक़ को किस दर्जे में अदा कर रहा है? अगर इसका जायज़ा लेकर देखें तो यह नज़र आयेगा कि हमारे सारे समाज को रस्मों ने जकड़ लिया है, और रिश्तेदारों से जो ताल्लुक़ है वह सिर्फ़ रस्मों की अदायेगी की हद तक है, उसके आगे कोई ताल्लुक़ नहीं। जैसे किसी के घर कोई शादी विवाह है, तो उस मौके पर उसको कोई तोहफ़ा देने का दिल नहीं चाह रहा है, या देने की ताक़त नहीं है, तो अब यह सोच रहे हैं कि अगर तक़रीब में ख़ाली हाथ चले गये तो बुरा मालूम होगा। चुनांचे अब इस ख़्याल से तोहफ़ा दिया जा रहा है कि अगर न दिया तो नाक कट जायेगी, और ख़ानदान वाले क्या कहेंगे, और जिस के यहां शादी हो रही है वह क्या कहेगा कि हमने तो उसकी शादी में यह तोहफ़ा दिया था और उसने हमें कुछ भी नहीं दिया, चुनांचे यह तोहफ़ा दिल की मुहब्बत से नहीं दिया जा रहा है, बल्कि रस्म पूरी करने के लिये नाम और दिखाने के लिये दिया जा रहा है, जिसका नतीजा यह हुआ कि उस तोहफ़े के देने का सवाब तो मिला नहीं बल्कि नाम नमूद की वजह से उल्टा गुनाह हो गया।

तक़रीबात में "न्यौता" देना हराम है

एक रस्म जो हमारे समाज में फैली हुई है, किसी इलाक़े में कम और किसी में ज़्यादा है, वह नये "न्यौते" की रस्म है। तक़रीबात में लेने देने की रस्म को "न्यौता" कहा जाता है। हर एक को यह याद होता है कि फ़लां ने हमारी तक़रीब के मौक़े पर कितने पैसे दिये थे

और मैं कितने दे रहा हूं। कुछ इलाक़ों में तो तक़रीबात के मौक़े पर ख़ास तौर पर फ़ेहरिस्त तैयार की जाती है, कि फ़लां शख़्स ने इतने पैसे दिये, फ़लां शख़्स ने इतने पैसे दिये, फिर उस फ़ेहरिस्त को महफ़ूज़ रखा जाता है और फिर जिस शख़्स ने पैसे दिये हैं उसके घर जब कोई शादी विवाह की तक़रीब होगी तो अब यह ज़रूरी है कि जितने पैसे उसने दिये थे उतने पैसे उसकी तक़रीब में देना ज़रूरी और लाज़िम है, चाहे क़र्ज़ लेकर दें या अपना और अपने बच्चों का पेट काट कर दें, या चोरी और डाका डाल कर दें, लेकिन देना ज़रूरी है। अगर नहीं देगा तो यह उस समाज का बद-तरीन मुज्रिम कहलायेगा। इसे "न्यौता" कहा जाता है। देखिये इसमें यह पैसे सिर्फ़ इसलिये दिये जा रहे हैं कि जब मेरे घर में तक़रीब का मौक़ा आयेगा तो वह भी देगा, इसलिये "बदले" के ख़्याल से जो पैसे दिये जा रहे हैं ये बिल्कुल हराम हैं। कुरआने करीम ने इसके लिये "रिबा" का लफ़्ज़ इसतेमाल फ़रमाया है। चुनांचे फ़रमायाः

"وَمَآ اٰتَيْتُمْ مِّنْ رِّبًا لِّيَرْبُوَا فِىٓ اَمْوَالِ النَّاسِ فَلَا يَرْبُوْا عِنْدَاللّٰهِ وَمَآ اٰتَيْتُمْ مِّنْ زَكٰوةٍ تُرِيْدُوْنَ وَجْهَ اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُضْعِفُوْنَ" (سورة روم: ۳۹)

तुम लोगों को न्यौते के तौर पर जो कुछ हदिया या तोहफ़ा देते हो (लेकिन इस ख़्याल से दिया कि या तो वह मेरी तक़रीब पर इतना ही देगा या इस से ज़्यादा देगा) ताकि उस से माल के अन्दर इज़ाफ़ा हो, तो याद रखो कि अल्लाह के नज़दीक इसमें कोई इज़ाफ़ा नहीं होगा। और जो ज़कात या सदक़ा तुम अल्लाह की रज़ामंदी की नियत से देते हो तो अल्लाह तआला ऐसे लोगों के माल में चन्द दर चन्द इज़ाफ़ा फ़रमाते हैं।

तोहफ़ा किस मक़सद के तहत दिया जाये?

इसलिये अगर किसी शख़्स के दिल में ख़्याल आया कि मेरे एक अज़ीज़ के यहां ख़ुशी का मौक़ा है। मेरा दिल चाहता है कि मैं उसको कोई हदिया पेश करूं और उसकी ख़ुशी के अन्दर मैं भी

शामिल हो जाऊं, और हदिया देने से "बदला" और नाम नमूद और दिखावा पेशे नज़र नहीं है बल्कि अपनी रिश्तेदारी का हक़ अदा करना है और अल्लाह को राज़ी करना है तो ऐसी सूरत में तोहफ़ा देना और पैसा देना सवाब और अज्र का सबब होगा, और यह तोहफ़ा और पैसे सिला रहमी में लिखे जायेंगे। शर्त यह है कि हदिया देने से अल्लाह का राज़ी करना मक़सद हो।

मक़सद जांचने का तरीक़ा

इसकी पहचान क्या है कि हदिया देने से अल्लाह को राज़ी करना मक़सद है या "बदला" लेना मक़सद है? इसकी पहचान यह है कि अगर हदिया देने के बाद इस बात का इन्तिज़ार है कि सामने वाला शख़्स उसका शुक्रिया अदा करे, और कम से कम पलट कर इतना तो कह दे कि आपका बहुत बहुत शुक्रिया, या इस बात का इन्तिज़ार है कि जब मेरे घर कोई तक़रीब होगी तो यह तक़रीब के मौक़े पर कोई तोहफ़ा या हदिया पेश करेगा, या अगर तुम्हारे यहां कोई तक़रीब हो तो वह तुम्हारे यहां कोई तोहफ़ा या हदिया न लाये तो उस वक़्त तुम्हारे दिल पर मैल आ जाये और उसकी तरफ़ से तुम्हें शिकायत हो कि हमने तो इतना दिया था और इसने तो कुछ भी नहीं दिया, यह सब इस बात की अलामत (निशानी) हैं कि इस देने में अल्लाह तआला को राज़ी करना मक़सद नहीं था। इसलिये दिया भी और उसको ज़ाया भी कर दिया। लेकिन अगर हदिया देने के बाद ज़ेहन को फ़ारिग़ कर दिया कि यह मेरा शुक्रिया अदा करे या न करे, मेरे यहां तक़रीब के मौक़े पर चाहे दे या न दे, लेकिन मुझे अल्लाह तआला ने देने की तौफ़ीक़ दी तो मैंने अल्लाह तआला को ख़ुश करने के लिये अपने रिश्तेदार की ख़ुशी के मौक़े पर उसकी ख़िदमत में हदिया पेश कर दिया, न तो मुझे शुक्रिये का इन्तिज़ार है और न बदले का इन्तिज़ार है। अगर मेरे घर में तक़रीब के मौक़े पर यह कुछ न दे तो भी मेरे दिल पर मैल नहीं आयेगा, मेरे दिल में

शिकायत पैदा नहीं होगी तो यह इस बात की अलामत है कि यह हदिया अल्लाह तआला की रज़ामन्दी के लिये दिया गया है। यह हदिया देने वाले और लेने वाले दोनों के लिये मुबारक है।

"हदिया" हलाल पाक माल है

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि किसी मुसलमान का वह हदिया जो खुश दिली और मुहब्बत से दिया गया हो, नाम नमूद के लिये न दिया गया हो, वह हदिया दुनिया में सब से ज़्यादा पाक और हलाल माल है। इसलिये कि जो पैसा तुमने खुद कमाया है, उसमें इस बात का इम्कान है कि कहीं उस कमाने में तुम से कोई ज़्यादती हो गयी हो या कोई कोताही हो गयी हो, जिसके नतीजे में उसके हलाल पाक होने में कोई कमी रह गयी हो, लेकिन अगर कोई मुसलमान तुम्हारे पास इख़्लास और मुहब्बत के साथ और महज़ अल्लाह के लिये कोई हदिया लेकर आया है, उसके हलाल होने में कोई शक नहीं है। चुनांचे हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि हदिये की बहुत क़द्र फ़रमाया करते थे। इसी वजह से हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि के यहां हदिया देने के उसूल मुक़र्रर थे, और हदिये की आप बहुत क़द्र फ़रमाया करते थे। और बाक़ायदा एहतिमाम करके उसको अपनी किसी ज़रूरत में इस्तेमाल करने की कोशिश करते थे, कि यह मुसलमान का हलाल पाक माल है, जो उसने अल्लाह तआला की ख़ातिर दिया है। इसलिये यह माल बड़ी बर्कत वाला है। बहर हाल! जो हदिया अल्लाह के लिये दिया जाये वह देने वाले के लिये भी मुबारक और लेने वाले के लिये भी मुबारक, और जिस हदिये का मक़सद हिर्स हो और नाम नमूद हो उसमें न देने वाले के लिये बर्कत और न लेने वाले के लिये बर्कत है।

इन्तिज़ार के बाद मिलने वाला हदिया बर्कत वाला नहीं

यहां तक कि हदीस शरीफ़ में यह तक बयान फ़रमाया गया है

कि अगर आपका किसी शख़्स की तरफ़ ध्यान लगा हुआ है, कि फ़लां शख़्स मेरे पास मुलाक़ात के लिये आयेगा, मुझे हदिया पेश करेगा, अब आपको उसके आने का शौक़ और इन्तिज़ार हो रहा है, तो इस सूरत में उस हदिये के अन्दर बर्कत नहीं होगी। और जो हदिया तलब के बग़ैर और इन्तिज़ार के बग़ैर आपको इस तरह मिला है कि अल्लाह तआला ने किसी बन्दे के दिल में यह ख़्याल डाला कि वह तुम्हें हदिया पेश करे, उसने वह हदिया लाकर पेश कर दिया, वह हदिया बड़ी बर्कत वाला है। गोया कि शौक़ और इन्तिज़ार से उस हदिये की बर्कत में कमी आ जाती है। इसलिये कि हदिया आने से पहले ही उसमें अपनी नफ़्सानी ग़र्ज़ भी शामिल हो गयी, इसलिये उसमें इतनी बर्कत नहीं होगी।

एक बुज़ुर्ग का वाक़िआ

एक बुज़ुर्ग का वाक़िआ लिखा है जो बड़े अल्लाह वाले दुर्वेश बुज़ुर्ग थे, और अल्लाह वालों पर बड़े बड़े कठिन हालात पेश आते हैं। एक मर्तबा उन पर फ़ाक़ों की नौबत आ गयी, कई दिन से फ़ाक़ा था और मुरीदीन और मोतक़िदीन की मज्लिस में वाज़ फ़रमा रहे थे, आवाज़ में बहुत कमज़ोरी थी, आहिस्ता और पस्त आवाज़ से बयान फ़रमा रहे थे। मज्लिस में एक मुरीद ने जब यह हालत देखी तो समझ गये की भूख की शिद्दत की वजह से यह कमज़ोरी है। शायद इन पर फ़ाक़े गुज़र रहे हैं। चुनांचे वह इस ख़्याल से मज्लिस से उठ कर चले गये कि मैं शैख़ के लिये खाने का इन्तिज़ाम करूं। थोड़ी देर के बाद खाना लेकर और एक थाल में लगा कर शैख़ की ख़िदमत में हाज़िर हुए, खाना देख कर शैख़ ने थोड़ी देर सोच कर फ़रमाया कि नहीं, यह खाना ले जाओ, मैं इसको क़बूल नहीं करता। चुनांचे वह मुरीद खाना लेकर वापस चले गये। आजकल के मुरीदों की तरह कोई होता तो वह इसरार (ज़िद) करता कि नहीं जी आप यह खाना ज़रूर खायें, मगर वह मुरीद जानता था कि शैख़ कामिल

हैं। और शैख़े कामिल का कहना बिना चूं व चरा के मान जाना चाहिए, और वह खाने से इन्कार तकल्लुफ़ की वजह से नहीं कर रहे हैं, बल्कि कोई वजह ही होगी जिसकी वजह से खाने से इन्कार कर रहे हैं। इस वजह से वह खाना लेकर वापस चला गया, फिर कुछ देर गुज़रने के बाद मुरीद दोबारा खाना लेकर आया, और उनकी ख़िदमत में पेश करते हुए कहा कि हज़रत अब क़बूल फ़रमा लीजिए। शैख़ ने कहा कि हां! अब मैं क़बूल करता हूं।

बाद में मुरीद ने बताया कि जब मैं पहले खाना लेकर आया और हज़रत ने खाने से इन्कार कर दिया, तो मेरे ज़ेहन में यह बात आई कि हज़रते वाला खाने से जो इन्कार कर रहे हैं इसकी वजह यह है कि जब मैं खाना लेने के लिये मज्लिस से उठ कर गया तो हज़रते वाला के दिल में यह ख़्याल आया कि शायद यह मेरी कमज़ोरी देख कर समझ गया, और शायद यह मेरे खाने का बन्दोबस्त करने गया हो, जिसकी वजह से खाने का इन्तिज़ार लग गया, इसलिये जब मैं खाना लेकर आया तो वह खाना इन्तिज़ार और इश्तियाक़ के आलम में लाया, और यह हदीस सामने थी कि जो हदिया इन्तिज़ार और इश्तियाक़ के आलम में मिले तो उसमें बर्कत नहीं होती, इसलिये उन्होंने वह खाना क़बूल करने से इन्कार कर दिया। चुनांचे मैं वह खाना लेकर वापस चला गया, ताकि उनका इन्तिज़ार और इश्तियाक़ ख़त्म हो जाये, फिर थोड़ी देर के बाद मैं वही खाना लेकर दोबारा हाज़िर हो गया, तो अब हदिया क़बूल करने में जो रुकावट थी वह ख़त्म हो गयी थी, इसलिये शैख़ ने उसको क़बूल फ़रमा लिया। बहर हाल अगर हदिये में इन्तिज़ार लग जाये या उसके देने में नाम नमूद और शोहरत की नियत कर ली जाये, या उसके बदले में लालच पैदा हो जाये, तो ये चीज़ें हदिये की बर्कत और नूर को ख़त्म कर देती हैं।

हदिया दो, मुहब्बत बढ़ाओ

हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

इर्शाद फ़रमायाः

"تَهَادُوْا تَحَابُّوْا" (الموطا)

एक दूसरे को हदिया दिया करो तो तुम्हारे दरमियान आपस में मुहब्बत पैदा होगी। लेकिन यह मुहब्बत उस वक़्त पैदा होगी जब यह हदिया अल्लाह को राज़ी करने के लिये दिया जा रहा हो। क़राबत दारी का हक़ अदा करने के लिये दिया जा रहा हो, अपनी आख़िरत संवारने के लिये और अल्लाह के सामने सुर्ख़–रू होने के लिये वह हदिया दिया जा रहा हो। लेकिन आज हम लोग इन मक़सदों के लिये हदिया नहीं देते, चुनांचे शादियों के मौक़े पर देख लें कि किस नियत से तोहफ़ा दिया जा रहा है। सिर्फ़ रस्म पूरी करने के लिये तोहफ़ा दे देंगे। लेकिन रस्म के अलावा कभी कोई तोहफ़ा किसी रिश्तेदार को देने की तौफ़ीक़ नहीं होती। चुनांचे कभी कभी मर्दों के दिल में ख़्याल भी आता है कि फ़लां अज़ीज़ को फ़लां तोहफ़ा दे दें, तो अक्सर औरतें अपने शौहर को यह कह कर रोक देती हैं कि इस वक़्त तोहफ़ा देने से क्या फ़ायदा? उनके यहां फ़लां तक़रीब होने वाली है, उस मौक़े पर तोहफ़ा पेश करेंगे, तो ज़रा नाम भी हो जायेगा, और उस वक़्त अपना बोझ भी उतर जायेगा। इस वक़्त देने से क्या फ़ायदा। हालांकि सारा फ़ायदा तो इस वक़्त देने में है, इसलिये कि जिस वक़्त दिल में कोई तकल्लुफ़ और बनावट के बग़ैर सिर्फ़ अल्लाह की ख़ातिर अपने किसी रिश्तेदार या दोस्त को ख़ुश करने के लिये तोहफ़ा देने का जज़्बा पैदा हो, बस तोहफ़ा देने का वही सही मौक़ा है, उसी वक़्त तोहफ़ा और हदिया दे दो।

नेकी के तक़ाज़े पर जल्द अमल कर लो

बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि दिल में किसी नेक काम करने का तक़ाज़ा और जज़्बा पैदा हुआ कि फ़लां नेक काम कर लूं तो उस नेक काम को जितना जल्दी हो सके कर डालो। उस काम को टलाओ नहीं, आइन्दा के लिये उसको मुल्तवी न करो। इसलिये कि

नेक काम करने का यह तक़ाज़ा जिस इख़्लास और जज़्बे के साथ पैदा हुआ है ख़ुदा जाने कि कल वह जज़्बा बाक़ी रहे या न रहे, कल को हालात मुवाफ़िक़ रहें या न रहें, कल को मौक़ा मिले या न मिले। इसलिये फ़ौरन उस जज़्बे पर अमल कर लो।

नेकी का जज़्बा अल्लाह का मेहमान है

हमारे हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि "नेकी का जज़्बा" अल्लाह तआला का मेहमान है, और सूफ़िया-ए-किराम इसको "वारिद" कहते हैं। यह "वारिद" अल्लाह तआला की तरफ़ से आने वाला मेहमान है, अगर तुमने इस मेहमान की इज़्ज़त और इकराम किया तो यह मेहमान दोबारा आयेगा, और बार बार आयेगा। और अगर तुमने इस मेहमान को धुतकार दिया और इसका इकराम न किया, जैसे दिल में नेक ख़्याल पैदा हुआ लेकिन उस ख़्याल को यह कह कर झटक दिया कि मियां छोड़ो, बाद में देखा जायेगा। तो तुमने अल्लाह तआला के मेहमान की नाक़द्री की, और बे इज़्ज़ती की, इसका नतीजा यह होगा कि वह मेहमान नाराज़ हो जायेगा, और आना छोड़ देगा। और अगर तुमने उस ख़्याल पर अमल करते हुए वह नेक काम कर लिया तो फिर अल्लाह मियां दोबारा उस मेहमान को तुम्हारे पास भेजेंगे, और वह जज़्बा किसी और मौक़े पर तुम से कोई और नेक काम करा लेगा। इसलिये जिस वक़्त किसी अज़ीज़ और किसी दोस्त को तोहफ़ा और हदिया देने का तक़ाज़ा दिल में पैदा हो, बस उसी वक़्त उस जज़्बे और तक़ाज़े पर अमल कर डालो।

हदिये की चीज़ मत देखो, बल्कि जज़्बा देखो

फिर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक तालीम यह दी कि यह मत देखो कि हदिये और तोहफ़े के तौर पर क्या चीज़ दी जा रही है, बल्कि यह देखो कि किस जज़्बे के साथ वह तोहफ़ा और हदिया दिया जा रहा है। अगर छोटी सी चीज़ भी

मुहब्बत से पेश की जाये, यकीनन वह उस बड़ी चीज़ से हज़ार दर्जे बेहतर है जो सिर्फ़ दिखावे और नाम नमूद के लिये दी जाये। इसलिये एक हदीस में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"لا تحقرنّ جارة لجارتها ولوفرسن شاة" (بخاری شریف)

यानी अगर कोई पड़ौसन कोई हदिया भेजे तो उसको कभी हकीर मत समझो, चाहे वह हदिया एक बकरी का पाया ही क्यों न हो। इसलिये कि उस चीज़ को मत देखो जो पेश की जा रही है, बल्कि उस जज़्बे को देखो जिस जज़्बे के साथ वह पेश की जा रही है। अगर मुहब्बत के जज़्बे से पेश की गयी है, उसकी कद्र करो, वह हदिया तुम्हारे लिये मुबारक है। लेकिन अगर बुहत कीमती चीज़ तुम्हें हदिये में दी गयी, मगर दिखावे की ख़ातिर दी गयी, तो उसमें बर्कत नहीं होगी। इसलिये अल्लाह का कोई बन्दा तुम्हें कोई छोटी सी चीज़ हदिये में दे तो उसको मुबारक समझ कर कबूल कर लो। देखा यह गया है कि आम तौर पर छोटी चीज़ हदिये में देने में दिखावा नहीं होता। इसलिये कि वह चीज ही मामूली सी है, उसमें क्या दिखावा करें, और कीमती चीज़ हदिये में देने में दिखावा आ जाता है।

इसलिये अगर कोई शख़्स हदिये में छोटी चीज दे तो उसकी ज़्यादा कद्र करनी चाहिये।

एक बुज़ुर्ग की हलाल आमदनी की दावत

मेरे वालिद माजिद मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब यह वाकिआ सुनाया करते थे, कि देवबन्द में एक बुज़ुर्ग घास काटा करते थे, और घास बेच कर अपना गुज़ारा किया करते थे। रोज़ाना उनकी आमदनी छह पैसे होती थी, उनकी तकसीम इस तरह कर रखी थी कि दो पैसे तो अपने इस्तेमाल में लाते, और दो पैसे सदका ख़ैरात करते, और दो पैसे जो बचते उनको दारुल उलूम देवबन्द के बड़े बड़े अकाबिर और उलमा की दावत के लिये जमा करते। जब कुछ पैसे

जमा हो जाते तो उलमा और अकाबिरे देवबन्द की दावत करते, जिनमें शैख़ुल हिन्द हज़रत मौलाना महमूदुल हसन साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि, हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही रहमतुल्लाहि अलैहि वग़ैरह होते। ये हज़रात फ़रमाते थे कि हमें सारे महीने उन बुज़ुर्ग की दावत का इन्तिज़ार रहता है, जब कि बड़े बड़े दौलत मंद और रईस भी दावत करते थे, उनका इन्तिज़ार नहीं रहता था। इसलिये कि यह एक अल्लाह के बन्दे की हलाल और पाक कमाई से और ख़ालिस अल्लाह की मुहब्बत की ख़ातिर यह दावत की जाती थी, और इसमें जो नूरानियत महसूस होती, वह किसी और दावत में महसूस नहीं होती थी। फ़रमाते थे कि जब अल्लाह के इस नेक बन्दे की दावत खा लेते हैं तो कई दिन तक दिल में नूर महसूस होता है, और इबादत करने और ज़िक्र व अज़कार में मशग़ूल रहने की ख़्वाहिश रहती है। बहर हाल छोटी और मामूली चीज़ हदिये में देने में इख़्लास की ज़्यादा उम्मीद है, बड़ी चीज़ के मुक़ाबले में, इसलिये मामूली हदिये की ज़्यादा क़द्र करनी चाहिये।

हदिये में रस्मी चीज़ मत दो

फिर हदिया देने में इस बात का ख़्याल रहना चाहिये कि हदिये और तोहफ़े का मक़सद राहत पहुंचाना और उसको ख़ुश करना है, इसलिये जो हदिया रस्म पूरी करने के लिये दिया जाता है, उसमें राहत का या ख़ुशी का ख़्याल नहीं रखा जाता, बल्कि उसमें रस्म पूरी करना मक़सद होता है। इसलिये ऐसे हदिये में सिर्फ़ वह रस्मी चीज़ ही दी जाती है, जैसे या तो मिठाई का डिब्बा दे दिया, या कपड़े का जोड़ा दे दिया, वग़ैरह। अगर उस मख़्सूस चीज़ के अलावा कोई दूसरी चीज़ ले जायेंगे तो यह रस्म के ख़िलाफ़ हो गयी, और उसको बतौरे हदिया देते हुए शर्म आयेगी कि यह भी कोई हदिया है? लेकिन जो शख़्स अल्लाह के लिये इख़्लास के साथ कोई हदिया देगा वह तो यह देखेगा कि इस शख़्स की ज़रूरत की चीज़ क्या है? मैं वह चीज़

इसको हदिये में दूं, ताकि उसके ज़रिये इसको फ़ायदा और राहत पहुंचे।

एक बुज़ुर्ग के अजीब हदिये

एक बुज़ुर्ग गुज़रे हैं हज़रत शाह अब्दुल अज़ीज़ साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि यह तब्लीग़ी जमाअत के मशहूर हज़रात में से थे। हज़रत वालिद साहिब रह्मतुल्लाहि अलैहि से बड़ी मुहब्बत फ़रमाते और बहुत ज़्यादा उनके पास आया करते थे। हमें याद है कि जब यह बुज़ुर्ग हज़रत वालिद साहिब से मिलने के लिये दारुल उलूम तशरीफ़ लाते तो वह ऐसी अजीब व ग़रीब चीज़ें हदिये में लाते कि हमने ऐसे हदिये कहीं और नहीं देखे। जैसे कभी काग़ज़ का एक दस्ता ले आये, और हज़रत वालिद साहिब की ख़िदमत में पेश कर दिया। अब देखिये काग़ज़ का दस्ता आज तक किसी ने हदिये में पेश नहीं किया, मगर वह अल्लाह के बन्दे जानते थे कि हज़रत मुफ़्ती साहिब का हर वक़्त लिखने का काम होता है, यह काग़ज़ उनके काम आयेगा और लिखने का जो नेक काम करेंगे, उसमें मेरा भी हिस्सा लग जायेगा, और मुझे भी सवाब मिल जायेगा। कभी रोशनाई की दवात लाकर हज़रत वालिद साहिब की ख़िदमत में पेश कर देते। अब बताइए जो शख़्स दिखावा करेगा वह कभी रोशनाई की दवात पेश करेगा? लेकिन जिस शख़्स के पेशे नज़र हदिये के ज़रिये अल्लाह को राज़ी करना है, और जिस शख़्स के पेशे नज़र सामने वाले को राहत और आराम पहुंचाना है, उसी शख़्स के दिल में यह ख़्याल आ सकता है कि ऐसा हदिया भी पेश किया जा सकता है। अब अगर मिठाई का डिब्बा हदिये में पेश कर देते तो हज़रत वालिद साहिब मिठाई तो खाते नहीं थे, वह दूसरों के खाने में आती।

हदिया देने के लिये अक़्ल चाहिये

बहर हाल हदिया और तोहफ़ा देने के लिये भी अक़्ल चाहिये, और यह अक़्ल भी अल्लाह की तौफ़ीक़ से और अल्लाह की रज़ामन्दी की चाहत और इख़्लास से मिलती है। लेकिन जहां हदिया देने का

मक़सद दिखावा और नाम नमूद हो, वहां यह अक़्ल काम नहीं आती, वहां तो इन्सान रस्मों के पीछे पड़ा रहता है, वह तो यह सोचेगा कि अगर मैं हदिये में रोशनाई की दवात लेकर जाऊंगा तो बड़ी शर्म मालूम होगी, अगर मिठाई का डिब्बा ले जाता तो ज़रा देखने में भी अच्छा लगता। आज हमारे पूरे समाज को रस्मों ने जकड़ लिया है, और इस तरह जकड़ लिया है कि अज़ीज़ और रिश्तेदारों के साथ जो सिला रहमी का मामला करते हैं, उसको भी इन रस्मों ने तबाह कर दिया है। चुनांचे हदिया और तोहफ़ा देना बड़ी अच्छी चीज़ है, और हुज़ूरे अकरम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की तालीम है, लेकिन हमने इसको रस्मों की जकड़ बन्दी में लाकर इसका सवाब बर्बाद किया, इसका नूर भी ग़ारत किया और इसकी बर्कत भी ग़ारत की और उल्टा अपने ज़िम्मे गुनाह ले लिया। ख़ूब याद रखें यह "न्यौता" वग़ैरह क़तई हराम है। हां अगर कोई शख़्स ख़ुश दिली से बदले और शुक्रिये की उम्मीद के बग़ैर देगा तो इन्शा अल्लाह उस पर अज्र और सवाब मिलेगा।

हर काम अल्लाह के लिये करो

यह तो हदिये और तोहफ़े की बात थी। इसके अलावा भी अज़ीज़ और रिश्तेदारों के हुक़ूक़ हैं, जैसे किसी के दुख दर्द में शरीक हो गये, किसी की ज़रूरत के मौक़े पर उसके काम आ गये वग़ैरह। इसमें भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमें यह तालीम दी कि जब किसी अज़ीज़ रिश्तेदार का काम करो तो सिर्फ़ अल्लाह के लिये करो, और इस ख़्याल से मत करो कि यह मेरे गुन गायेगा, या मेरा शुक्रिया अदा करेगा, या मुझे बदला देगा, इसका नतीजा यह होगा कि उसका काम भी करोगे और फिर भी दुनिया में ख़ुशी हासिल नहीं होगी।

रिश्तेदार बिच्छू के मानिंद हैं

हमारे समाज की ग़लत सोच की वजह से अरबी ज़बान में एक

मिसाल मश्हूर है कि:

"اَلْاَ قَارِبُ كَالْعَقَارِبِ"

"अल अक़ारिबु कल अक़ारिब"

"अक़ारिब" के मायने हैं रिश्तेदार, और अक़ारिब अक़्रब की जमा (बहुवचन) है, इसके मायने हैं बिच्छू। मायने यह हुए कि रिश्तेदार बिच्छू जैसे हैं। हर वक़्त डंक मारने की फ़िक्र में रहते हैं, कभी राज़ी नहीं होते। यह मिसाल इसलिये मश्हूर हुई कि रिश्तेदारों के साथ जब भी हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) किया तो यह सोच कर किया कि उनकी तरफ़ से जवाब मिलेगा, लेकिन जब उम्मीद के मुताबिक़ जवाब नहीं मिला तो इसका नतीजा यह हुआ कि वे बिच्छू हो गये। अगर यह हुस्ने सुलूक (अच्छा सुलूक) इस नियत से किया जाता कि मेरे अल्लाह ने अच्छा सुलूक करने का हुक्म दिया है, और यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत है। उस वक़्त इन्सान यह सोचता है कि ये रिश्तेदार जवाब दें या न दें लेकिन अल्लाह तो जवाब देने वाला मौजूद है, इसलिये कि मैंने यह काम अल्लाह के लिये किया है। मज़ा तो उसी वक़्त है कि तुम रिश्तेदारों के साथ अच्छा सुलूक करते रहो और उनकी तरफ़ से जवाब न मिले, बल्कि उल्टा जवाब मिले, मगर फिर भी उनके साथ अच्छा सुलूक इस नियत से किये जाओ कि जिसके लिये कर रहे हैं वह जवाब देने वाला मौजूद है। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सिला रहमी करने वाला वह शख़्स नहीं है जो बदले का इन्तिज़ार करे, बल्कि सिला रहमी करने वाला वह शख़्स है कि दूसरे तो क़ता रहमी करें, लेकिन यह इसके बावजूद सिला रहमी करे।

हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. का रिश्तेदारों से सुलूक

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखिये कि आपने रिश्तेदारों के साथ क्या सुलूक किया, चन्द रिश्तेदारों के अलावा बाक़ी सब रिश्तेदार आपकी जान के दुश्मन और ख़ून के प्यासे थे, और आपको तक्लीफ़ें पहुंचाने में कोई कसर नहीं छोड़ी, यहां तक कि

आपके चचा और चचा के बेटे जो बहुत ज़्यादा क़रीबी अज़ीज़ थे मगर आपको तक्लीफ़ पहुंचाने की कोशिश में लगे हुए थे। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी तरफ़ से रिश्तेदारी का हक़ अदा करने में कोई कोताही नहीं की। चुनांचे मक्का के फ़तह होने के मौक़े पर जब बदला लेने का वक़्त आया आपने सब को माफ़ कर दिया, और यह ऐलान फ़रमा दिया कि जो शख़्स हरम में दाख़िल हो जायेगा वह भी मामून है, जो शख़्स अबू सुफ़ियान के घर में दाख़िल हो जायेगा वह भी मामून है, और किसी से बदला नहीं लिया, और न किसी से यह उम्मीद रखी कि वह मेरे हुस्ने सुलूक का बदला देगा। इसलिये रिश्तेदारों की बद सुलूकी पर हुस्ने सुलूक करना भी सुन्नत है, और अच्छाई के साथ बदला देना भी सुन्नत है।

मख़्लूक़ से अच्छी उम्मीदें ख़त्म कर दो

इसी लिये हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने मवाइज़ (तक़रीरों) में बड़े तजुर्बे की बात फ़रमायी हैः फ़रमाया कि दुनिया में राहत से रहने का सिर्फ़ एक ही नुस्ख़ा है, वह यह कि मख़्लूक़ से उम्मीदें ख़त्म कर दो। जैसे कि यह उम्मीद रखना कि फ़लां शख़्स मेरे साथ अच्छा सुलूक करेगा, फ़लां शख़्स मेरे काम आयेगा, फ़लां शख़्स मेरे दुख दर्द में शरीक होगा, ये सब उम्मीदें ख़त्म करके बस एक ज़ात यानी अल्लाह तबारक व तआला से उम्मीद रखो। इसलिये कि मख़्लूक़ से उम्मीद ख़त्म करने के बाद अगर उनकी तरफ़ से कोई अच्छाई मिलेगी तो वह ख़िलाफ़े उम्मीद मिलेगी, उसके नतीजे में ख़ुशी बहुत होगी, क्योंकि ख़िलाफ़े उम्मीद मिली है। और अगर मख़्लूक़ की तरफ़ से कोई तक्लीफ़ पहुंचेगी तो फिर रंज ज़्यादा नहीं होगा, इसलिये कि अच्छाई की उम्मीद तो थी नहीं, तक्लीफ़ ही की उम्मीद थी, वह तक्लीफ़ उम्मीद के मुताबिक़ ही मिली, इसलिये सदमा और रंज ज़्यादा नहीं होगा।

इसलिये कि अच्छाई की उम्मीद के बाद तक्लीफ़ पहुंचे तो सदमा और रंज बहुत ज़्यादा होता है कि उम्मीद तो यह थी और यह मिला, इसलिये उम्मीद के बग़ैर जो अच्छाई मिल रही है वो सब बोनस है।

दुनिया दुख ही पहुंचाती है

दुनिया की हक़ीक़त यह है कि इन्सान को दुख ही पहुंचाती है। अगर कभी ख़ुशी और फ़ायदा हासिल हो जाये तो समझ लो कि यह अल्लाह का ख़ास इनाम है। और अगर दुख आये तो समझ लो कि यह तो आना ही था। इसलिये उस पर ज़्यादा सदमा करने की ज़रूरत नहीं। यह बात बिल्कुल सौ फ़ीसद सही है। अगर हम इस बात को पल्ले बांध लें और इस पर अमल करें तो फिर सारे शिकवे और शिकायतें ख़त्म हो जायें। इसलिये कि ये शिकवे और शिकायतें उम्मीदों के बाद ही पैदा होती हैं। जो उम्मीद रखनी है अल्लाह तआला से रखो, मख़्लूक़ात से उम्मीद रखना छोड़ दोगे तो इन्शा अल्लाह राहत व आराम में आ जाओगे।

अल्लाह वालों का हाल

हमारे बड़े यह नुस्ख़ा बता गये, और मैंने आपके सामने यह नुस्ख़ा बता दिया, और आपने सुन लिया, लेकिन सिर्फ़ कहने और सुनने से बात नहीं बनती है, बल्कि इस बात को दिल में बैठायें और इसकी मश्क़ करें, बार बार अपना जायज़ा लें कि हमने दूसरों से कौन कौन सी उम्मीदें बांध रखी हैं? और क्यों बांध रखी हैं? अल्लाह से उम्मीदें क्यों नहीं बांधीं? आपने अल्लाह वालों को देखा होगा कि वे हमेशा ख़ुश रहते हैं, उनके ऊपर बड़े से बड़ा ग़म भी आ जायेगा तो थोड़ा बहुत रंज होगा, लेकिन वह ग़म उनके ऊपर मुसल्लत नहीं होगा, और वह ग़म उनको बेचैन और बेताब नहीं करेगा, क्योंकि उन्होंने अपने मालिक से अपना ताल्लुक़ जोड़ा हुआ है। मख़्लूक़ की तरफ़ निगाह नहीं है, मख़्लूक़ से उम्मीद नहीं, मख़्लूक़ से कुछ नहीं मांगते, जो कुछ मांगते हैं अल्लाह तआला से मांगते हैं, इसका नतीजा

यह है कि वे हमेशा सुकून और इत्मीनान से रहते हैं।

एक बुज़ुर्ग का वाक़िआ

हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने एक बुज़ुर्ग के बारे में लिखा है कि उनसे किसी ने पूछा कि हज़रत क्या हाल है? कैसे मिज़ाज हैं? उन्होंने जवाब दिया कि अल्हम्दु लिल्लाह बहुत अच्छा हाल है। फिर फ़रमाया कि मियां उस शख़्स का क्या हाल पूछते हो कि इस कायनात में कोई काम उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं होता। यानी मैं वह शख़्स हूं कि कायनात में कोई काम मेरी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं होता, बल्कि हर काम मेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ होता है। और इस कायनात के सब काम जिसकी मर्ज़ी के मुताबिक़ हो रहे हों उस से ज़्यादा ख़ुश और उस से ज़्यादा ऐश में कौन हो सकता है? सवाल करने वाले को बड़ा ताज्जुब हुआ, उसने कहा कि यह बात तो अम्बिया अ़लैहिमुस्सलाम को भी हासिल नहीं हुई थी कि इस कायनात का हर काम उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ होता हो, बल्कि उनकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ भी काम होते थे। आपका हर काम आपकी मर्ज़ी के मुताबिक़ कैसे हो जाता है? उन बुज़ुर्ग ने जवाब दिया कि मैंने अपनी मर्ज़ी को अल्लाह की मर्ज़ी के ताबे (तहत) बना दिया है, बस जो मेरे अल्लाह की मर्ज़ी वह मेरी मर्ज़ी, जो मेरे अल्लाह की चाहत वही मेरी चाहत, और इस कायनात में हर काम अल्लाह की मर्ज़ी और अल्लाह की चाहत और इरादे के मुताबिक़ हो रहा है, और मैंने अपनी अना को मिटा दिया है, इसलिये हर काम मेरी मर्ज़ी के मुताबिक़ हो रहा है। क्योंकि वह अल्लाह की मर्ज़ी से हो रहा है, इसलिये मैं बड़ा ख़ुश हूं और ऐश व आराम में हूं।

बुज़ुर्गों का सुकून और इत्मीनान

बहर हाल अल्लाह वालों को जो सुकून और आराम और राहत मयस्सर है, जिसके बारे में हज़रत सुफ़ियान सौरी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि अगर दुनिया के बादशाहों को हमारी आ़फ़ियत,

सुकून और राहत का पता चल जाये तो वे बादशाह तलवारें लेकर हमारा मुक़ाबला करने के लिये आ जायें, कि यह राहत और सुकून हमें दे दो, यह सुकून मख़्लूक़ से निगाहें हटाने से और मख़्लूक़ से उम्मीदें ख़त्म करने से हासिल होता है। जब मख़्लूक़ से उम्मीदें ख़त्म हो जाती हैं तो फिर देखो कैसा सुकून हासिल होता है। लेकिन ये चीज़ें सिर्फ़ कहने सुनने से हासिल नहीं होतीं, सोहबत के नतीजे में ये चीज़ें धीरे धीरे मुन्तक़िल हो जाती हैं और इन्सान की दुनिया और आख़िरत संवर जाती है।

ख़ुलासा

ख़ुलासा यह है कि अ़ज़ीज़ व अक़ारिब (रिश्तेदारों और क़रीबी लोगों) के हुक़ूक़ की अदायेगी और उनके साथ हुस्ने सुलूक अल्लाह को राज़ी करने के लिये हो, और सिर्फ़ दिखावे के लिये और रस्म पूरी करने के लिये न हो। अल्लाह तबारक व तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे और आप सब को इस हक़ीक़त को समझने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, और इस पर अ़मल करने की भी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

मुसलमान मुसलमान भाई भाई

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِىَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"وَافْعَلُوا الْخَيْرَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ" (سورة الحج:٧٧)

وعن ابن عمر رضی اللّٰه تعالٰی عنهما ان رسول اللّٰه صلى اللّٰه عليه وسلم قال: اَلْمُسْلِمُ اَخُوالْمُسْلِمِ لَا يَظْلِمُهٗ وَلَايُسْلِمُهٗ، وَمَنْ كَانَ فِىْ حَاجَةِ اَخِيْهِ كَانَ اللّٰهُ فِىْ حَاجَتِهٖ، وَمَنْ فَرَّجَ عَنْ مُّسْلِمٍ كُرْبَةً فَرَّجَ اللّٰهُ عَنْهُ كُرْبَةً مِّنْ كُرَبِ يَوْمِ الْقِيَامَةِ وَمَنْ سَتَرَ مُسْلِمًا سَتَرَهُ اللّٰهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ. (ابوداؤد شريف)

दूसरों के साथ भलाई करें

एक मुसलमान के लिए सिर्फ़ इतनी बात काफ़ी नहीं है कि वह दूसरे मुसलमान को तक्लीफ़ न दे। और उस पर ज़ुल्म और ज़्यादती न करे। और उसको तक्लीफ़ पहुंचाने से बचाए। बल्कि इस से बढ़ कर एक मुसलमान का काम यह है कि वह दूसरे मुसलमान के काम आए, और उसकी ज़रूरत और हाजत को अपनी हिम्मत और ताक़त की हद तक पूरा करे। और अगर कोई मुसलमान किसी मुश्किल या परेशानी में गिरफ़्तार है तो उसको परेशानी से निकालने की कोशिश करे। यह बात भी एक मुसलमान के फ़राइज़ में दाख़िल है। चुनांचे

जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की, उसमें अल्लाह तआला ने इर्शाद फ़रमाया कि "भलाई का काम करो, ताकि तुमको फ़लाह और कामयाबी हासिल हो" भलाई के अन्दर सब कुछ आ जाता है। जैसे दूसरे के साथ भलाई करना। उसके साथ अच्छा सुलूक करना, उसके साथ रहम का मामला करना, उसकी ज़रूरतों और हाजतों को पूरा करना, ये सब चीज़ें ख़ैर और भलाई के अन्दर दाख़िल हैं।

एक जामे हदीस

जो हदीस मैंने तिलावत की, वह हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत की गयी है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः न तो मुसलमान किसी दूसरे मुसलमान पर ज़ुल्म करता है, और न उसको दुश्मनों के हवाले करता है। यानी न उसको बेसहारा और बे मददगार छोड़ता है।

"مَنْ كَانَ فِىْ حَاجَةِ اَخِيْهِ كَانَ اللّٰهُ فِىْ حَاجَتِهٖ"

जो शख़्स अपने किसी भाई की किसी ज़रूरत के पूरा करने में लगा हुआ हो, उसका कोई काम कर रहा हो, तो जब तक वह अपने भाई का काम करता रहेगा, अल्लाह तआ़ला उसके काम बनाते रहेंगे। और उसकी हाजतें पूरी करते रहेंगे।

"وَمَنْ فَرَّجَ عَنْ مُّسْلِمٍ كُرْبَةً فَرَّجَ اللّٰهُ عَنْهُ بِهَا كُرْبَةً مِّنْ يَوْمِ الْقِيَامَةِ"

और जो शख़्स किसी मुसलमान से किसी तक्लीफ़ या मशक़्क़त की बात दूर करे। यानी वह कोई ऐसा काम करे जिस से किसी मुसलमान की मुश्किल आसान हो जाए, और उसकी दुश्वारी दूर हो जाए तो उस दूर करने वाले पर क़ियामत के दिन जो सख़्तियां आने वाली थीं, अल्लाह तआ़ला उन सख़्तियों में से एक सख़्ती को उस सख़्ती के मुक़ाबले में दूर फ़रमा देते हैं।

"وَمَنْ سَتَرَ مُسْلِمًا سَتَرَهُ اللّٰهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ"

और जो शख़्स किसी मुसलमान की पर्दा पोशी करे। जैसे किसी मुसलमान का एक ऐब पता चल गया कि उसके अन्दर फ़लां ऐब है,

या फ़लां ख़राबी है, या फ़लां गुनाह के अन्दर मुब्तला है। अब यह शख़्स उस ऐब की पर्दा पोशी करे, और दूसरों तक उसको न पहुंचाए तो अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उसकी पर्दा पोशी फ़रमायेंगे और उसके गुनाहों को ढांप देंगे। यह बड़ी जामे हदीस है, और कई जुम्लों पर मुश्तमिल है। जिसमें से हर जुम्ला हमारी और आपकी तवज्जोह चाहता है। इन पर ग़ौर करने और इनको अपनी ज़िन्दगी का दस्तूर बनाने की ज़रूरत है।

मुसलमान मुसलमान का भाई है

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सब से पहले जो जुम्ला इर्शाद फ़रमया। उसमें एक उसूल बयान फ़रमा दिया कि:

"اَلْمُسْلِمُ اَخُوالْمُسْلِمِ"

यानी मुसलमान मुसलमान का भाई है। इसलिये इन्सान का अपने भाई के साथ जो मामला होता है, हर मुसलमान के साथ वही मामला होना चाहिए। चाहे मुसलमान अजनबी हो, और बज़ाहिर उसके साथ कोई रिश्तेदारी न हो। बज़ाहिर उसके साथ दोस्ती का कोई ताल्लुक़ न हो। लेकिन तुम उसको अपना भाई समझो। इस एक जुम्ले के ज़रिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हमारे समाज में फैले हुए इम्तियाज़ों और तअ़स्सुबों की जड़ काट दी, कि यह तो फ़लां वतन का रहने वाला है, और मैं फ़लां वतन का रहने वाला हूं। यह फ़लां ज़बान बोलने वाला है, मैं फ़लां ज़बान बोलने वाला। यह फ़लां ख़ानदान और क़बीले से ताल्लुक़ रखने वाला है, मैं फ़लां ख़ानदान और क़बीले से ताल्लुक़ रखने वाला। इस एक जुम्ले ने इन इम्तियाज़ों और तअ़स्सुबों की जड़ काट दी, जो हमारे समाज में फैले हुए हैं। यानी एक मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है। चाहे वह कोई भी ज़बान बोलता हो। किसी वतन का रहने वाला हो। किसी भी पेशे से उसका ताल्लुक़ हो, किसी भी ज़ात या नस्ल से

उसका ताल्लुक़ हो। हर हालत में वह तुम्हारा भाई है।

एक को दूसरे पर फ़ज़ीलत नहीं

इसी बात को क़ुरआने करीम की एक आयत में अल्लाह तआला ने बड़े प्यारे अन्दाज़ में बयान फ़रमाया कि:

"يَاأَيُّهَا النَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَاكُمْ مِنْ ذَكَرٍ وَّأُنْثَى وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوبًا وَّقَبَائِلَ لِتَعَارَفُوا، إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ أَتْقَاكُمْ" (سورة الحجرات:١٣)

इस आयत में पूरी इन्सानियत का बड़ा अजीब मन्शूर बयान फ़रमाया। फ़रमाया कि ऐ लोगो! हमने तुम सब को एक मर्द और एक औरत से पैदा किया, यानी तुम सब का नसब का सिलसिला एक मर्द और एक औरत यानी हज़रत आदम और हज़रत हव्वा अलैहिमस्सलाम पर जाकर ख़त्म होता है। तुम सब के बाप एक हैं, यानी हज़रत आदम अलैहिस्सलाम, और तुम सब की मां एक हैं, हज़रत हव्वा अलैहस्सलाम। जब सब इन्सानों के बाप एक, सब इन्सानों की मां एक, तो फिर किसी को दूसरे पर फ़ज़ीलत हासिल नहीं। फिर एक सवाल पैदा होता है कि जब तमाम इन्सान एक बाप और एक मां की औलाद हैं तो ऐ अल्लाह! फिर आपने मुख़्तलिफ़ ख़ानदान और मुख़्तलिफ़ क़बीले क्यों बनाए? कि यह फ़लां क़बीले का है। यह फ़लां ख़ानदान का है। यह फ़लां गिरोह का है। यह फ़लां नस्ल का है। यह फ़लां ज़बान बोलने वाला है। अल्लाह तआला ने जवाब दिया "लि-तआ-रफ़ू" यानी यह अलग अलग ख़ानदान क़बीले इसलिए बनाए ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको, अगर सब इन्सान एक ज़बान बोलने वाले, एक वतन एक नस्ल एक ख़ानदान के होते तो एक दूसरे को पहचानना मुश्किल हो जाता। जैसे तीन आदमी हैं, और तीनों का नाम "अब्दुल्लाह" है, तो अब तुम पहचान करने के लिए उनके साथ निस्बतें लगा देते हो, कि यह अब्दुल्लाह कराची का रहने वाला है, यह लाहौर का और यह पैशावर का रहने वाला है। इस तरह इन क़बीलों इन निस्बतों और शहरों के

अलग अलग होने से एक दूसरे की पहचान हो जाती है। बस इसी ग़र्ज़ के लिए हमने मुख़्तलिफ़ शहर और मुख़्तलिफ़ ज़बानें बनाई। वर्ना किसी को किसी पर फ़ौकियत और फ़ज़ीलत नहीं है। हां सिर्फ़ एक चीज़ की वजह से फ़ज़ीलत हो सकती है। वह है "तक़वा" जिसके अन्दर तक़वा ज़्यादा है, वह अल्लाह तआला के नज़दीक ज़्यादा करीम और ज़्यादा शरीफ़ है। चाहे बज़ाहिर वह निचले ख़ानदान से ताल्लुक़ रखता हो। अल्लाह तआला के यहां उसकी क़ीमत बहुत ज़्यादा है।

इस्लाम और कुफ़्र का फ़र्क़

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत देखिए कि अबू लहब जो आपका चचा था, और आपके ख़ानदान का एक बड़ा सरदार, उसका तो यह हाल है कि कुरआने करीम के अन्दर उसके ऊपर लानत आई। और ऐसी लानत आई कि क़ियामत तक जो मुसलमान भी कुरआने करीम की तिलावत करेगा वह:

"تَبَّتْ يَدَآ اَبِىْ لَهَبٍ وَّتَبَّ"

के ज़रिये अबू लहब पर लानत भेजेगा, कि उसके हाथ टूटें और उस पर लानत हो। बदर के मैदान में अपने चचा और तायों के साथ जंग हो रही है, उनके ख़िलाफ़ तलवारें उठाई जा रही हैं।

जन्नत में हज़रत बिलाल रज़ि. का मक़ाम

दूसरी तरफ़ हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु जो हब्शा के रहने वाले काले रंग के आदमी हैं। उनको सीने से लगाया जा रहा है। बल्कि आप उनसे यह पूछते कि हैं कि ऐ बिलाल! वह अमल तो ज़रा बताओ जिसकी वजह से मैंने आजकी रात ख़्वाब के अन्दर जन्नत देखी तो वहां तुम्हारे क़दमों की चाप और आहट अपने आगे आगे सुनी। यह सवाल बिलाले हब्शी रज़ियल्लाहु अन्हु से किया जा रहा है, जो सियाह फ़ाम हैं, और हब्शा के रहने वाले हैं। और जिनको सारे अरब के लोग नीची निगाह से देखते थे। जवाब में हज़रत बिलाल

रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि या रसूलल्लाह! और कोई ख़ास अमल तो मैं नहीं करता, लेकिन एक अमल है जिस पर मैं शुरू से पाबन्दी करता आ रहा हूं। वह यह कि जब कभी मैं दिन या रात में वुज़ू करता हूं तो उस वुज़ू से दो चार रक्अत नफ़िल ज़रूर पढ़ लेता हूं। (जिसको तहिय्यतुल वुज़ू कहते हैं) हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जवाब सुन कर इसकी तसदीक़ फ़रमाई कि शायद यही बात होगी जिसकी वजह से अल्लाह तआला ने तुम्हें इतना बड़ा मक़ाम अता फ़रमाया। (बुख़ारी शरीफ़)

हज़रत बिलाल रज़ि. हुज़ूर सल्ल. से आगे क्यों?

कभी कभी ख़्याल आता है कि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु जन्नत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आगे कैसे निकल गए? जब कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से आगे कोई नहीं निकल सकता? उलमा-ए-किराम ने फ़रमाया कि हक़ीक़त में इसकी वजह यह है कि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु आगे इसलिये नहीं थे कि उनका दर्जा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बढ़ा हुआ था, बल्कि दुनिया में हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु का मामूल यह था कि जब आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कहीं तशरीफ़ ले जाते तो हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु रास्ता दिखाने के लिए आगे आगे चलते, उनके हाथ में एक छड़ी होती थी! रास्ते में अगर कोई पत्थर होता तो उसको हटा देते, अगर कोई रुकावट होती तो उसको दूर कर देते, सामने से आने वाले लोगों पर नज़र रखते, ताकि कहीं ऐसा न हो कि सामने से कोई दुश्मन आ जाए और आपको तक्लीफ़ पहुंचा दे। चूंकि हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु का यह मामूल था कि वह आपके आगे आगे चलते थे, इसलिये अल्लाह तआला ने जन्नत में भी वही मन्ज़र दिखा दिया, कि तुम हमारे हबीब की दुनिया में इस तरह हिफ़ाज़त करते थे, चलो जन्नत में भी हम तुम्हें आगे रखेंगे। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जन्नत में अपने आगे

हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु के क़दमों की चाप सुनाई दी।

इस्लाम के रिश्ते ने सब को जोड़ दिया

यह मक़ाम उस शख़्स ने पाया जिसको गुलाम कहा जाता था। सियाह फाम और हक़ीर समझा जाता था। नस्ल और ख़ानदान के एतिबार से उसकी कोई वक्अत नहीं समझी जाती थी। उसके मुक़ाबले में "अबू लहब" पर कुरआने करीम में लानत नाज़िल हो रही है किः

"تَبَّتْ يَدَآ اَبِیْ لَهَبٍ وَّتَبَّ"

रूम के रहने वाले "हज़रत सुहैब" तशरीफ़ लाते हैं, और बड़ा ऊंचा मक़ाम पाते हैं। ईरान के रहने वाले हज़रत सलमान फ़ारसी ने आकर इतना ऊंचा मक़ाम पाया कि उनके बारे में हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"سَلْمَانُ مِنَّا اَهْلَ الْبَيْتِ"

यानी सलमान फ़ारसी हमारे घर वालों में शामिल हैं। इस तरह आपने वतन के, नस्ल के, रंग के और ज़बान के बुतों को तोड़ दिया, और यह ऐलान फ़रमा दिया कि हम तो उस एक अल्लाह के मानने वाले हैं जिसने सारे इन्सानों को एक मर्द और एक औरत से पैदा फ़रमायाः

"اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ اِخْوَةٌ"

और फ़रमाया कि तमाम मुसलमान भाई भाई हैं।

जब आप मदीना तय्यिबा तशरीफ़ लाए उस वक़्त मदीना तय्यिबा में 'औस' और 'ख़ज़रज' के क़बीलों के दरमियान लड़ाई और जंग की आग सुलग रही थी, बाप जब मरता तो बेटे को वसीयत कर जाता कि बेटा! और सब काम करना, लेकिन मेरे दुश्मन से इन्तिक़ाम ज़रूर लेना। ज़माना-ए-जाहिलिय्यत में एक लड़ाई हुई है। जिसको "हर्बे बसूस" कहा जाता है। चालीस साल तक यह लड़ाई जारी रही। इसकी इब्तिदा इस तरह हुई कि एक शख़्स की मुर्ग़ी का बच्चा दूसरे

शख़्स के खेत पर चला गया। खेत के मालिक ने गुस्से में आकर मुर्ग़ी के बच्चे को मार दिया, मुर्ग़ी का मालिक निकल आया। जिस से ज़बानी तू तू मैं मैं शुरू हुई। और फिर हाथा पाई तक नौबत आ गई। इसके नतीजे में तलवारें निकल आयीं। इसका क़बीला एक तरफ़ और दूसरे का क़बीला एक तरफ़, दोनों क़बीलों के दरमियान लड़ाई शुरू हुई और एक मुर्ग़ी के बच्चे पर चालीस साल तक लगातार यह लड़ाई जारी रही। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तशरीफ़ लाने के बाद उनको ईमान की और कलिमा ला इला–ह इल्लल्लाहु की लड़ी में पिरो दिया, कि उनके दरमियान दुश्मनी की आग ठन्डी हो गई। और बाद में उनको देख कर यह पता नहीं चलता था कि ये वही लोग हैं जो आपस में एक दूसरे के ख़ून के प्यासे होते थे। और उनके दरमियान भाई चारा पैदा फ़रमा दिया। कुरआने करीम ने इसी तरफ़ इशारा करते हुए फ़रमायाः

"وَاذْكُرُوْا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖ اِخْوَانًا" (سورة آل عمران:۱۰۳)

यानी उस वक़्त को याद करो जब तुम आपस में एक दूसरे के दुश्मन थे। फिर अल्लाह तआ़ला ने तुमको आपस में भाई भाई बना दिया। अब ऐसा न हो कि यह भाई भाई का रिश्ता ख़त्म हो जाए। और फिर दोबारा उसी जाहिलिय्यत के तरीक़े की तरफ़ लौट जाओ।

आज हम यह उसूल भूल गए

बहर हाल! नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हदीस के ज़रिये सब से पहले यह उसूल बता दिया कि हर मुसलमान दूसरे मुसलमान का भाई है। चाहे वह कोई ज़बान बोलता हो। चाहे किसी भी क़बीले से, किसी भी क़ौम से उसका ताल्लुक़ हो। इसलिये उसके साथ भाई जैसा मामला करो। यह न सोचो कि चूंकि यह दूसरी नस्ल का, दूसरी क़ौम का, या दूसरे वतन का आदमी है, इसलिये यह मेरा नहीं है, मेरा वह है जो मेरे वतन में पैदा हुआ हो।

यह तसव्वुर ज़ेहन से निकालो, और हर मुसलमान को अपना भाई समझो। पूरी इस्लामी तारीख़ इस बात की गवाह है कि जब कभी मुसलमानों को शिकस्त या ज़वाल का सामना करना पड़ा है, उसकी बुनियादी वजह यह थी कि मुसलमान यह उसूल भूल गए कि मुसलमान मुसलमान का भाई है। और किसी ने दरमियान में फूट डाल दी कि यह तो फ़लां क़ौम का है, वह फ़लां नस्ल का है, बस लड़ाई शुरू हो गई और उसके नतीजे में मुसलमान तबाह व बर्बाद हो गए। अल्लाह तआ़ला इस उसूल को हमारे दिलों में बिठा दे। आमीन। हम ज़बान से तो कहते हैं कि सब मुसलमान आपस में भाई भाई हैं। लेकिन जब अ़मल का वक़्त आता है तो क्या हम उस मुसलमान के साथ भाइयों जैसा बर्ताव करते हैं? हर मुसलमान अपने गिरेबान में मुंह डाल कर देख ले, और अपना जायज़ा ले। अगर ऐसा बर्ताव नहीं करते तो फिर आजके बाद यह तहिय्या कर लें कि हम हर मुसलमान के साथ अपने भाई जैसा सुलूक करेंगे। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से यह बात हमारे अन्दर पैदा फ़रमा दे, आमीन।

फिर हदीस के अगले जुम्ले में भाई समझने की पहली निशानी यह बयान फ़रमाई कि "ला यज़लिमुहू" यानी मुसलमान चूंकि मुसलमान का भाई है, इसलिये वह कभी दूसरे मुसलमान पर ज़ुल्म नहीं करेगा और उसकी जान, उसके माल, उसकी इज़्ज़त और आबरू पर कोई हक़ तल्फ़ी नहीं करेगा। उसके हुक़ूक़ ज़ाया नहीं करेगा।

मुसलमान दूसरे मुसलमान का मददगार होता है

आगे फ़रमाया कि "वला युसल्लिमुहू" यानी सिर्फ़ यह नहीं कि उस पर ज़ुल्म नहीं करेगा, बल्कि उसको बेसहारा और बे-मददगार भी नहीं छोड़ेगा। अगर मुसलमान किसी मुश्किल में मुब्तला है, या किसी परेशानी के अन्दर मुब्तला है, और उसको तुम्हारी मदद की ज़रूरत है तो कोई मुसलमान उसको बेसहारा और बे-मददगार नहीं

छोड़ेगा। वह यह नहीं सोचेगा कि जो कुछ पेश आ रहा है वह उसको पेश आ रहा है। मेरा इस से क्या ताल्लुक़? मेरा तो कुछ नहीं बिगड़ रहा है। और यह सोच कर अलग हो जाए। यह काम मुसलमान का नहीं है। बल्कि मुसलमान के फ़राइज़ में यह बात दाख़िल है कि अगर वह किसी दूसरे मुसलमान पर मुसीबत टूटते हुए देख रहा है, या किसी को मुश्किल और परेशानी में गिरफ़्तार पा रहा है, तो दूसरे मुसलमान को चाहिए कि जहां तक मुम्किन हो उसकी परेशानी को दूर करने की कोशिश करे, और यह न सोचे कि अगर मैं उस काम में लग गया तो मेरा वक़्त ज़ाया हो जायेगा, या मैं फंस जाऊंगा।

मौजूदा दौर का एक इब्रतनाक वाक़िआ

जिस दौर से हम गुज़र रहे हैं। यह दौर ऐसा आ गया है कि इसमें इन्सानियत की क़दरें बदल गयीं। इन्सान इन्सान न रहा। एक वक़्त वह था कि अगर किसी इन्सान को चलते हुए ठोकर भी लग जाती और वह गिर पड़ता तो दूसरा इन्सान उसको उठाने के लिए और खड़ा करने के लिए और सहारा देने के लिए आगे बढ़ता। अगर सड़क पर कोई हादसा पेश आ जाता तो हर इन्सान आगे बढ़ कर उसकी मदद करने की कोशिश करता था। लेकिन आज हमारे दौर में जो सूरत हो चुकी है, उसको मैं अपने सामने होने वाले एक वाक़िए के ज़रिये बयान करता हूं। एक मर्तबा मैंने देखा कि एक गाड़ी एक शख़्स को टक्कर मारते हुए चली गई। अब वह शख़्स टक्कर खाकर चारों शाने चित सड़क पर गिर गया। इस वाक़िए के बाद कम से कम बीस पच्चीस गाड़ियां वहां से गुज़र गयीं। हर गाड़ी वाला झांक कर उस गिरे हुए शख़्स को देखता और आगे रवाना हो जाता। किसी अल्लाह के बन्दे को यह तौफ़ीक़ न हुई कि गाड़ी से उतर कर उसकी मदद करता। इसके बावजूद आजके लोगों को अपने बारे में मुहज़्ज़ब और शाइस्ता होने का दावा है। इस्लाम तो बहुत आगे की चीज़ है। लेकिन ऐसे मौक़े पर एक इन्सान की

इन्सानियत का तकाज़ा यह है कि आदमी उतर कर देख ले कि उसको क्या तक्लीफ़ पहुंची है, और उसकी जितनी मदद कर सकता है कर दे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में फ़रमा दिया कि एक मुसलमान यह काम नहीं कर सकता कि वह दूसरे मुसलमान को इस तरह बेसहारा और बे-मददगार छोड़ कर चला जाए। बल्कि एक मुसलमान का फ़र्ज़ है कि अगर वह दूसरे मुसलमान को किसी मुसीबत में गिरफ़्तार पाए या किसी परेशानी में देखे तो जहां तक मुम्किन हो उसकी उस परेशानी और मुसीबत को दूर करने की कोशिश करे।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामूल

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का ज़िन्दगी भर यह मामूल रहा कि जब भी किसी शख़्स के बारे में यह मालूम होता कि उसको फ़लां चीज़ की ज़रूरत है, या वह मुश्किल में गिरफ़्तार है, तो आप बेचैन हो जाते। और जब तक अपनी गुन्जाइश और ताक़त के मुताबिक़ उसकी मदद की कोशिश न फ़रमा लेते, आपको चैन न आता था। सिर्फ़ "सुलह हुदैबिया" के मौक़े पर जब आपने अल्लाह तआला के हुक्म से कुफ़्फ़ार से मुआहदा कर लिया, और उस मुआहदे के नतीजे में आप उन मुसलमानों की मदद न करने पर और उनको वापस करने पर मजबूर थे जो मुसलमान मक्का मुकर्रमा से भाग कर मदीना तय्यिबा आ जाते। इसलिये आपने इर्शाद फ़रमाया कि मैं वापस करने पर मजबूर हूं। इस वाक़िए के अलावा शायद कभी ऐसा नहीं हुआ कि आपने किसी मुसलमान को मुश्किल और तक्लीफ़ में देख कर उसकी मदद न फ़रमाई हो। अल्लाह तआला हम सब को इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واٰخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

अल्लाह की मख़्लूक़ से मुहब्बत कीजिए

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عَنْ اَبِيْ هُرَيْرَةَ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُ عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: مَنْ نَفَّسَ عَنْ مُؤْمِنٍ كُرْبَةً مِّنْ كُرَبِ الدُّنْيَا نَفَّسَ اللّٰهُ عَنْهُ كُرْبَةً مِّنْ كُرَبِ يَوْمِ الْقِيَامَةِ، وَمَنْ يَسَّرَ عَلٰى مُعْسِرٍ يَسَّرَ اللّٰهُ عَلَيْهِ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ، وَمَنْ سَتَرَ مُسْلِمًا سَتَرَهُ اللّٰهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ، وَاللّٰهُ فِيْ عَوْنِ الْعَبْدِمَاكَانَ الْعَبْدُ فِيْ عَوْنِ اَخِيْهِ، وَمَنْ سَلَكَ طَرِيْقًا يَلْتَمِسُ فِيْهِ عِلْمًا سَهَّلَ اللّٰهُ بِهٖ طَرِيْقًا اِلَى الْجَنَّةِ، وَمَااجْتَمَعَ قَوْمٌ فِيْ بَيْتٍ مِّنْ بُيُوْتِ اللّٰهِ تَعَالٰى يَتْلُوْنَ كِتَابَ اللّٰهِ يَتَدَارَسُوْنَهٗ بَيْنَهُمْ، اِلَّا نَزَلَتْ عَلَيْهِمُ السَّكِيْنَةُ وَغَشِيَتْهُمُ الرَّحْمَةُ، وَحَفَّتْهُمُ الْمَلَآئِكَةُ، وَذَكَرَهُمُ اللّٰهُ فِيْمَنْ عِنْدَهٗ، وَمَنْ بَطَّأَبِهٖ عَمَلُهٗ لَمْ يُسْرِعْ بِهٖ نَسَبُهٗ" (مسلم شريف)

जवामिउल कलिम क्या हैं?

इस हदीस के रिवायत करने वाले हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु हैं, और इसमें आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इर्शाद फ़रमाए हुए बहुत से जुम्ले रिवायत फ़रमाए हैं। इनमें से हर जुम्ला अपने मायने और मफ़हूम के लिहाज़ से बड़ा जामे जुम्ला है, एक और रिवायत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"اُوْتِيْتُ جَوَامِعُ الْكَلِمِ"

मुझे अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसे कलिमात अता किए गए हैं जो जामे हैं। यानी जिनके अल्फ़ाज़ तो थोड़े हैं और बोलने में मुख़्तसर हैं, लेकिन अपने मायने और मतलब के एतिबार से और अमल के एतिबार से वे बड़े जामे कलिमात हैं। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ऐसे इर्शादात जो छोटे छोटे जुम्लों पर मुश्तमिल हैं। और मायने के एतिबार से बड़े हावी हैं, उनको "जवामिउल कलिम" कहा जाता है। इस हदीस में हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु ने बहुत से "जवामिउल कलिम" रिवायत फ़रमाए हैं, जो मुख़्तलिफ़ मौज़ूआत से मुताल्लिक़ हैं।

किसी की परेशानी दूर करने पर अज्र व सवाब

पहला जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया कि जो शख़्स किसी मोमिन की दुनिया की बेचैनियों में से कोई बेचैनी दूर करे, जैसे वह मोमिन किसी परेशानी में घिरा हुआ है, या किसी मुश्किल में मुब्तला है, और कोई मुसलमान उसकी परेशानी और मुश्किल को किसी अमल के ज़रिये, या किसी मदद के ज़रिये दूर कर दे तो उसका यह अमल इतने बड़े अज्र व सवाब का काम है कि अल्लाह तआला उसके बदले में क़ियामत की सख़्तियों और बेचैनियों में से एक बेचैनी को उस से दूर फ़रमा देंगे।

तंगदस्त को मोहलत देने की फ़ज़ीलत

दूसरा जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया कि जो शख़्स किसी तंगदस्त आदमी के लिए कोई आसानी पैदा कर दे तो अल्लाह तआला उसके लिए दुनिया व आख़िरत दोनों में आसानी पैदा फ़रमा देंगे। जैसे एक शख़्स मक़रूज़ है, और उसने अपनी किसी ज़रूरत की ख़ातिर क़र्ज़ लिया, और किसी ख़ास वक़्त पर वापस करने का वायदा कर लिया। लेकिन जब क़र्ज़ वापस करने का वक़्त आया तो क़र्ज़ वापस करने के क़ाबिल नहीं है, बल्कि तंगदस्त है। अब वह क़र्ज़ वापस करना चाहता है, लेकिन तंगदस्ती की वजह से नहीं दे सकता। अब अगरचे

क़र्ज़ लेने वाले को यह हक़ हासिल है कि वह यह मुतालबा करे कि मेरा क़र्ज़ मुझे वापस करो। लेकिन अगर यह शख़्स उसकी तंगदस्ती को देखते हुए उसको मोहलत देदे, और उस से यह कह दे कि अच्छा जब तुम्हारे पास पैसे आ जाएं उस वक़्त दे देना। ऐसे शख़्स के लिए फ़रमाया कि अल्लाह तआला उसके लिए दुनिया और आख़िरत दोनों में आसानी पैदा फ़रमायेंगे। इसी के बारे में कुरआने करीम में फ़रमाया:

"وَاِنْ كَانَ ذُوْعُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ" (سورة البقرة:٢٨٠)

यानी तुम्हारा मक़रूज़ शख़्स अगर तंगदस्त है तो फिर एक मोमिन का काम यह है कि उसको उस वक़्त तक मोहलत दे जब तक उसका हाथ खुल जाए, और उसकी तंगदस्ती दूर हो जाए, और उसमें क़र्ज़ की अदाएगी की ताक़त पैदा हो जाए।

नर्मी की आदत अल्लाह को पसन्द है

अल्लाह तबारक व तआला को नर्मी की आदत बहुत पसन्द है, अल्लाह के बन्दों के साथ नर्मी का मामला करना यह अल्लाह तआला के नज़दीक बहुत महबूब अमल है। जिस शख़्स ने क़र्ज़ के तौर पर पैसे दिए हैं, उसको क़ानूनी तौर पर हर वक़्त यह हक़ हासिल है कि वह मुतालबा करके अपना क़र्ज़ वसूल कर ले। यहां तक कि क़ानूनी तौर पर उसको क़ैद भी करा सकता है। लेकिन इस्लाम का एक मुसलमान से यह मुतालबा है कि सिर्फ़ पैसों ही को न देखो कि कितना पैसा चला गया और कितना पैसा आ गया। बल्कि यह देखो कि किसी अल्लाह के बन्दे के साथ नर्मी का मामला करना यह अल्लाह तआला को इतना महबूब है, जिसकी कोई हद व इन्तिहा नहीं। और उसके बदले में अल्लाह तआला उसके साथ क़ियामत के दिन नर्मी का मामला फ़रमायेंगे।

दूसरे मुसलमान की ज़रूरत पूरी करने की फ़ज़ीलत

एक और हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने

इर्शाद फ़रमायाः

"مَنْ كَانَ فِیْ حَاجَةِ اَخِیْهِ كَانَ اللّٰهُ فِیْ حَاجَتِهٖ" (ابوداؤد شریف)

जो शख़्स जितनी देर अपने भाई के काम बनाने और ज़रूरत पूरी करने में लगा रहेगा अल्लाह तआला उसके काम बनाते रहेंगे, उसकी ज़रूरत पूरी करते रहेंगे। तुम मेरे बन्दों के काम में लगे रहो, मैं तुम्हारे काम में लगा हुआ हूं:

कार साज़े मा बसाज़ कारे मा
फ़िक्रे मा दर कारे मा आज़ारे मा

एक जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया किः

"مَنْ فَرَّجَ عَنْ مُسْلِمٍ كُرْبَةً فَرَّجَ اللّٰهُ عَنْهُ كُرْبَةً مِّنْ كُرَبِ يَوْمِ الْقِيَامَةِ" (ابوداؤد شریف)

अगर किसी ने किसी मुसलमान की मुसीबत को दूर कर दिया तो अल्लाह तआला क़ियामत के दिन उसकी मुसीबत और परेशानी को दूर फ़रमायेंगे।

मख़्लूक़ पर रहम करो

हक़ीक़त में ये दोनों काम यानी दूसरों की ज़रूरत पूरी करना, और दूसरों की मुसीबत और परेशानी को दूर करना, उसी वक़्त हो सकता है कि जब दिल में अल्लाह तआला की मख़्लूक़ की तरफ़ से रहम हो, और उनकी मुहब्बत हो। अगर यही दोनों काम दिखावे के लिए कर लिए तो इन कामों की कोई क़ीमत नहीं। लेकिन अगर यह सोचा कि ये मेरे अल्लाह के बन्दे हैं, उसकी मख़्लूक़ हैं, मैं इनके साथ कोई भलाई और अच्छाई करूंगा तो उस पर मुझे अल्लाह तआला सवाब अता फ़रमायेंगे। तब ये काम क़ीमती बन जायेंगे। अल्लाह की मुहब्बत का यह हक़ है कि उसके बन्दों से मुहब्बत की जाए, अगर बन्दों से मुहब्बत नहीं तो इसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला से मुहब्बत नहीं। एक हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"اَلرَّاحِمُوْنَ يَرْحَمُهُمُ الرَّحْمٰنُ اِرْحَمُوْا مَنْ فِی الْاَرْضِ يَرْحَمْكُمْ مَنْ فِی السَّمَآءِ" (ابو داؤد)

जो दूसरों पर रहम करने वाले हैं, रहमान उन पर रहम करता है, ज़मीन वालों पर तुम रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा। इसलिये जब तक अल्लाह की मख़्लूक़ के लिए तुम्हारे दिल में रहम नहीं होगा, उस वक़्त तक तुम मुसलमान कहलाने के मुस्तहिक़ नहीं। तुम अल्लाह तआला की रहमत के उम्मीदवार कैसे होगे, जब अल्लाह तआला की मख़्लूक़ पर रहम नहीं करते? ईमान का एक तक़ाज़ा यह है कि अल्लाह के बन्दों और अल्लाह की मख़्लूक़ के साथ मुहब्बत करो।

मजनूं को लैला के शहर के दर व दीवार से मुहब्बत

जब किसी महबूब से मुहब्बत हो जाती है तो फिर उस महबूब की हर चीज़ से मुहब्बत होती है। मजनूं लैला की मुहब्बत में कहता है कि:

امر على الديار ديار ليلى اقبل ذا الجدار وذا الجدار

जब मैं लैला के वतन से गुज़रता हूं जहां वह रहती है तो मैं कभी इस दीवार को प्यार करता हूं, और कभी उस दीवार को प्यार करता हूं। क्यों?

وما حب الديار شغفن قلبى ولكن حب من سكن الديار

यानी उन दीवारों से मुझे क्या ताल्लुक़? मैं उनको क्यों प्यार करूं, लेकिन चूंकि ये दीवारें मेरे महबूब के शहर की दीवारें हैं, इस वजह से मुझे इन दीवारों से मुहब्बत है, और जब मैं उनके पास से गुज़रता हूं तो उन दीवारों को चूमता फिरता हूं। जब एक मजनूं को लैला के शहर की दीवारों से इश्क़ हो जाए, तो फिर क्या वजह है कि अल्लाह तआला से मुहब्बत हो, लेकिन अल्लाह तआला की पैदा की हुई मख़्लूक़ से मुहब्बत न हो। अल्लाह के पैदा किए हुए बन्दों से ताल्लुक़ न हो? उन पर रहम न हो? यह कैसी मुहब्बत है?

क्या अल्लाह की मुहब्बत लैला की मुहब्बत से कम हो जाए?

मसनवी शरीफ़ में मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि मजनूं को तो लैला के शहर के कुत्ते से भी मुहब्बत थी, इसलिये कि यह मेरे महबूब के शहर का कुत्ता है, मुझे इस से मुहब्बत है। मौलाना रूमी फ़रमाते हैं किः

इश्क़े मौला के कम अज़ लैला बुवद
गोए गश्त बहरे ऊ औला बुवद

अरे मौला का इश्क़ लैला के इश्क़ से भी कम हो गया। जब एक ना पाएदार और फ़ना हो जाने वाले वजूद से इतनी मुहब्बत हो जाती है कि उसके कुत्ते से मुहब्बत होने लगी, तो अल्लाह तआला जो मालिकुल मुल्क हैं और सारे महबूबों के महबूब हैं। उसकी मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि उसकी सारी मख़्लूक़ से भी मुहब्बत हो जाए। चाहे वह हैवान ही क्यों न हो। इसलिये कि वह मेरे अल्लाह की मख़्लूक़ है। इसी वजह से शरीअत ने हैवानों के भी हुक़ूक़ रखे हैं कि उन पर भी तरस का मामला करो। और उनके साथ कोई ज़्यादती न होने पाए।

एक कुत्ते को पानी पिलाने का वाक़िआ

बुख़ारी शरीफ़ में एक वाक़िआ लिखा है कि एक तवाइफ़ और फ़ाहिशा औरत थी। सारी ज़िन्दगी तवाइफ़ी का काम किया। एक मर्तबा वह कहीं से गुज़र रही थी, रास्ते में उसने देखा कि एक कुत्ता प्यास की शिद्दत की वजह से ज़मीन की मिट्टी चाट रहा है। क़रीब में एक कुआं था। उस औरत ने अपने पांव से चमड़े का मोज़ा उतारा और उस मोज़े में कुएं से पानी निकाला, और उस कुत्ते को पिला दिया। अल्लाह तआला को यह अमल इतना पसन्द आया कि उसकी मग़फ़िरत फ़रमा दी कि मेरी मख़्लूक़ के साथ तुमने मुहब्बत और रहम का मामला किया, तो हम तुम्हारे साथ रहम का मामला करने के

ज़्यादा हक़दार हैं। इसलिये अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ के साथ रहम का मामला करना चाहिए, चाहे वह हैवान ही क्यों न हो।

मख़्लूक़ पर रहम का एक वाक़िआ़

मेरे हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को अल्लाह तआ़ला ने मुख़्लूक़ पर रहम का अ़जीब हाल अ़ता फ़रमाया था, कि कभी किसी जानवर को मारना तो दूर की बात है, जानवर को उसकी जगह से हटाने के लिए भी हाथ नहीं उठता था। यह सोच कर कि अल्लाह की मख़्लूक़ है। यहां तक कि एक मर्तबा पांव पर ज़ख़्म हो गया। उस ज़ख़्म पर मक्खियां आकर बैठने लगीं, ज़ाहिर है कि ज़ख़्म पर मक्खियों के बैठने से तक्लीफ़ होती है। लेकिन हज़रते वाला उन मक्खियों को उड़ाते नहीं थे। बल्कि अपने काम में लगे रहते थे। उस वक़्त एक साहिब आपके पास आ गए, उन्होंने जब यह सूरत देखी तो अ़र्ज़ किया कि हज़रत! इजाज़त दें तो मैं इन मक्खियों को उड़ा दूं? जवाब में हज़रत ने फ़रमाया कि भाई! ये मक्खियां अपना काम कर रही हैं, मुझे अपना काम करने दो। वजह इसकी यह थी कि दिल में यह ख़्याल जमा हुआ था कि ये मेरे अल्लाह तआ़ला की मख़्लूक़ हैं। उनको यहां से उड़ा कर क्यों परेशान करूं? बहर हाल, अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत सही मायने में उस वक़्त होगी जब अल्लाह की मख़्लूक़ से भी मुहब्बत हो जाए। उस पर भी रहम करे।

एक मक्खी पर शफ़्क़त का अ़जीब वाक़िआ़

मैंने अपने शैख़ हज़रत डॉ० अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से कई बार यह वाक़िआ़ सुना कि एक बुज़ुर्ग थे जो बहुत बड़े आ़लिम, फ़ाज़िल, मुहद्दिस और मुफ़स्सिर थे। सारी उम्र पढ़ने पढ़ाने और किताबें लिखने में गुज़री, और उलूम के दरिया बहा दिए। जब उनका इन्तिक़ाल हो गया तो ख़्वाब में किसी ने उनको देखा तो उनसे पूछा कि हज़रत! आपके साथ कैसा मामला हुआ? फ़रमाया कि

अल्लाह तआला का करम है कि मुझ पर अपना फ़ज़्ल फ़रमाया। लेकिन मामला बड़ा अजीब हुआ, वह यह कि हमारे ज़ेहन में यह था कि हमने अल्हम्दु लिल्लाह ज़िन्दगी में दीन की बड़ी ख़िदमत की है। पढ़ने पढ़ाने की ख़िदमत अन्जाम दी, वाज़ और तक़रीरें कीं। किताबें लिखीं। दीन की तब्लीग़ की, हिसाब किताब के वक़्त इन ख़िदमतों का ज़िक्र सामने आयेगा, और इन ख़िदमतों के नतीजे में अल्लाह तआला अपना फ़ज़्ल व करम फ़रमायेंगे। लेकिन हुआ यह कि जब अल्लाह तआला के सामने पेशी हुई तो अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि हम तुम्हें बख़्श देते हैं, लेकिन मालूम भी है कि किस वजह से बख़्श रहे हैं? ज़ेहन में आया कि हमने दीन की जो ख़िदमतें अन्जाम दी थीं उनकी बदौलत अल्लाह तआला ने बख़्श दिया है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि नहीं, हम तुम्हें एक और वजह से बख़्शते हैं। वह यह कि एक दिन तुम कुछ लिख रहे थे, उस ज़माने में लकड़ी के क़लम होते थे। उस क़लम को रोशनाई में डुबो कर फिर लिखा जाता था। तुमने लिखने के लिए अपना क़लम रोशनाई में डुबोया। उस वक़्त एक मक्खी उस क़लम पर बैठ गई, और वह मक्खी क़लम की रोशनाई चूसने लगी, तुम उस मक्खी को देख कर कुछ देर के लिए रुक गए, और यह सोचा कि यह मक्खी प्यासी है, इसको रोशनाई पी लेने दो, मैं बाद में लिख लूंगा। तुमने यह उस वक़्त क़लम को रोका था, वह ख़ालिस मेरी मुहब्बत और मेरी मख़्लूक़ की मुहब्बत में इख़्लास के साथ रोका था। उस वक़्त तुम्हारे दिल में कोई जज़्बा नहीं था। उस अमल के बदले में आज हमने तुम्हारी मग़फ़िरत कर दी।

मख़्लूक़ की ख़िदमत ही का नाम तसव्वुफ़ है

बहर हाल, यह बड़ा नाज़ुक रास्ता है। जब तक अल्लाह तआला की मख़्लूक़ के साथ मुहब्बत न हो, अल्लाह तआला के साथ मुहब्बत का दावा सच्चा नहीं हो सकता। इसलिये मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि

अलैहि तसव्वुफ़ के बारे में फ़रमाते हैं:

ज़ तस्बीह व सज्जादा व दल्क़ नेस्त
तरीक़त बजुज़ ख़िदमते ख़ल्क़ नेस्त

यानी लोगों ने तसव्वुफ़ इसका नाम रख लिया है कि हाथ में तस्बीह हो, मुसल्ला बिछा हुआ हो, गुदड़ी हो, दुरवेशाना लिबास पहना हुआ हो। इन चीज़ों का नाम तसव्वुफ़ और तरीक़त नहीं है। बल्कि तसव्वुफ़ और तरीक़त इसके अलावा कुछ नहीं कि मख़्लूक़ की ख़िदमत हो। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि अगर तुम्हें हमारे साथ मुहब्बत का दावा है तो फिर हमारी मख़्लूक़ के साथ मुहब्बत करो, उनकी ख़िदमत करो।

अल्लाह तआला को अपनी मख़्लूक़ से मुहब्बत है

अरे, अल्लाह तआला को अपनी मख़्लूक़ के साथ बड़ा प्यार है। आप इसका तजुर्बा कर लें कि किसी ने अपने हाथों से मेहनत करके कोई चीज़ बनाई, वह चीज़ पत्थर ही क्यों न हो। लेकिन उस बनाने वाले को उस बनाए हुए पत्थर से मुहब्बत हो जाती है, कि उस पत्थर के बनाने में वक़्त लगाया है। मैंने मेहनत की है। यह मेरी दौलत है। इसी तरह अल्लाह तआला ने अपनी मख़्लूक़ को बनाया और उनको पैदा किया है। इसलिये उनको अपनी मख़्लूक़ से मुहब्बत है। इसलिये अगर उनसे मुहब्बत का दावा है तो उनकी मख़्लूक़ से भी मुहब्बत करनी होगी।

हज़रत नूह अलै. का एक अजीब वाक़िआ

जब हज़रत नूह अलैहिस्सलाम की क़ौम पर तूफ़ान आ चुका, सारी क़ौम उस तूफ़ान के नतीजे में हलाक हो गई तो उसके बाद अल्लाह तआला ने "वही" के ज़रिये हज़रत नूह अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि अब तुम्हारा काम यह है कि तुम मिट्टी के बरतन बनाओ। चुनांचे हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला के हुक्म की तामील में मिट्टी के बरतन बनाना शुरू कर दिए, और दिन रात

उसमें लगे रहे। जब कई दिन गुज़र गए और बरतनों का ढेर लग गया तो दूसरा हुक्म दिया कि अब सब बरतनों को एक एक करके तोड़ो। हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने अर्ज़ किया कि या अल्लाह! मैंने बड़ी मेहनत से और आपके हुक्म पर बनाए थे, अब आप उनको तोड़ने का हुक्म दे रहे हैं। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि हमारा हुक्म यह है कि अब इनको तोड़ दो। चुनांचे हज़रत नूह अलैहिस्सलाम ने उनको तोड़ दिया, लेकिन दिल दुखा कि इतनी मेहनत से बनाए और उनको तुड़वा दिया। अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया ऐ नूह! तुमने अपने हाथों से यह बरतन बनाए और मेरे हुक्म से बनाए, इन बरतनों से तुम्हें इतनी मुहब्बत हो गई कि जब मैंने तुम्हें इनको तोड़ने का हुक्म दिया तो तुम से तोड़ा नहीं जा रहा था। दिल यह चाह रहा था कि यह बरतन जो मेरी मेहनत और मेरे हाथ से बने हुए हैं किसी तरह बच जाएं तो बेहतर है, इसलिये कि तुम्हें इन बरतनों से मुहब्बत हो गई थी। लेकिन तुमने हमें नहीं देखा कि सारी मख़्लूक़ हमने अपने हाथ से बनाई और तुमने एक मर्तबा कह दिया कि:

"رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكَافِرِيْنَ دَيَّارًا" (سورۃ نوح: ۲۳)

ऐ अल्लाह! ज़मीन में बसने वाले सब काफ़िरों को हलाक कर दे, और उनमें से कोई बाक़ी न रहे। तुम्हारे इस कहने पर हमने अपनी मख़्लूक़ को हलाक कर दिया।

इशारा इस बात की तरफ़ फ़रमाया कि जिस मिट्टी से तुम बरतन बना रहे थे, इसके बावजूद कि वह मिट्टी तुम्हारी पैदा की हुई नहीं थी, और अपनी ख़्वाहिश से वे बरतन नहीं बना रहे थे, बल्कि मेरे हुक्म से बना रहे थे। फिर भी तुम्हें उनसे मुहब्बत हो गई थी, तो क्या हमें अपनी मख़्लूक़ से मुहब्बत नहीं होगी? जब मुहब्बत है तो फिर तुम्हें भी मेरी मख़्लूक़ के साथ मुहब्बत करनी पड़ेगी। अगर तुम्हें मेरे साथ मुहब्बत है।

हज़रत डॉ. साहिब रह. की एक बात

हमारे हज़रत डॉ. अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि जब हम अल्लाह तआ़ला की इबादत करते हैं, और उस से मुहब्बत करते हैं और उस से मुहब्बत की दुआएं मांगते हैं कि ऐ अल्लाह! हमें अपनी मुहब्बत अ़ता फ़रमा। उस वक़्त मुझे यूं महसूस होता है कि अल्लाह तआ़ला यूं फ़रमा रहे हैं कि तुम मुझसे मुहब्बत करना चाहते हो? हालांकि तुमने मुझे देखा तो है नहीं, कि बराहे रास्त तुम मुझसे मुहब्बत कर सको, और मुझसे इस तरह का ताल्लुक़ क़ायम कर सको, जैसे किसी चीज़ को देखते हुए किया जा सकता है। लेकिन अगर तुम्हें मुझसे ताल्लुक़ क़ायम करना है तो मैंने दुनिया में अपनी मुहब्बत का मज़हर (प्रतीक) इन बन्दों को बनाया है। इसलिये तुम मेरे बन्दों से मुहब्बत करो, और मेरे बन्दों पर रहम खाओ, और उनके साथ नर्मी का बर्ताव करो, इस से मेरी मुहब्बत पैदा होगी, और मुझ से मुहब्बत करने का तरीक़ा भी यही है। इसलिये यह समझना कि हम तो अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत करते हैं, ये बन्दे क्या चीज़ हैं? यह मख़्लूक़ क्या चीज़ हैं? यह तो हक़ीर हैं। और फिर इन मख़्लूक़ की तरफ़ हक़ारत की निगाह डालना, उनको बुरा समझना और उनको कमतर जानना, यह इस बात की निशानी है कि आपको अल्लाह तआ़ला से जो मुहब्बत है वह झूठी मुहब्बत है, इसलिये कि जिसको अल्लाह तआ़ला की ज़ात से मुहब्बत होगी, उसको अल्लाह की मख़्लूक़ से ज़रूर मुहब्बत होगी। इसी लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स अपने किसी भाई के काम में और उसकी हाजत पूरी करने में लगा हुआ हो तो अल्लाह तआ़ला उसके काम बनाने में लगे रहते हैं। और जो शख़्स किसी मुसलमान भाई की बेचैनी को दूर करे, अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसकी बेचैनी को दूर फ़रमायेंगे।

औलिया-ए-किराम की हालत

जितने औलिया-ए-किराम रहमुल्लाहि अ़लैहिम गुज़रे हैं उन सब

का हाल यह था कि वे अगर मख़्लूक़ को बुरे हाल में देखते, या बुराइयों और गुनाहों के अन्दर मुब्तला देखते, तो वे औलिया उन गुनाहों से तो नफ़रत करते थे, इसलिये कि गुनाहों से नफ़रत करना वाजिब है। उनके बुरे कामों और उनके आमाल से नफ़रत करना वाजिब है, लेकिन दिल में उस आदमी से नफ़रत नहीं होती थी, उसकी हक़ारत दिल में नहीं होती थी।

हज़रत जुनैद बग़दादी रह. वाक़िआ

हज़रत जुनैद बग़दादी रह्मतुल्लाहि अलैहि का दरिया-ए-दजला के किनारे पैदल जा रहे थे, क़रीब से दरिया में एक कश्ती गुज़री, उस कश्ती में औबाश क़िस्म के नौजवान बैठे हुए थे, और गाते बजाते हुए जा रहे थे। और जब गाना बजाना हो रहा हो, और हंसी मज़ाक़ की महफ़िल हो, उस मौक़े पर अगर कोई मुल्ला पास से गुज़रे तो उस मुल्ला का मज़ाक़ उड़ाना भी तफ़रीह का एक हिस्सा होता है। चुनांचे उन औबाश लोगों ने हज़रत जुनैद बग़दादी रह्मतुल्लाहि अलैहि का मज़ाक़ उड़ाया और आप पर फ़िक़रे कसे। हज़रत के साथ एक साहिब और थे, उन्होंने यह सूरते हाल देख कर फ़रमाया कि हज़रत! आप इनके हक़ में बद-दुआ फ़रमा दें, क्योंकि ये लोग इतने गुस्ताख़ हैं कि एक तरफ़ तो ख़ुद बुराइयों और गुनाहों में मुब्तला हैं और दूसरी तरफ़ अल्लाह वालों का मज़ाक़ उड़ा रहे हैं। हज़रत जुनैद बग़दादी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़ौरन दुआ के लिए हाथ उठाए, और फ़रमाया कि ऐ अल्लाह! आपने इन नौजवानों को जिस तरह यहां दुनिया में ख़ुशियां अता फ़रमाई हैं इनके आमाल ऐसे कर दीजिए कि वहां आख़िरत में भी इनको ख़ुशियां नसीब हों। देखिए: उनकी ज़ात से नफ़रत नहीं फ़रमाई, इसलिये कि यह तो मेरे अल्लाह की मख़्लूक़ है।

हुज़ूर सल्ल. की अपनी उम्मत पर शफ़्क़त

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जो तमाम दुनिया के

लिए रहमत बनाकर भेजे गए, जब आप पर कुफ़्फ़ार की तरफ़ से ईंटें बरसाई जा रही थीं, आपको पत्थर मारे जा रहे थे, आपके पांव ज़ख़्म से लहू लुहान थे, लेकिन उस वक़्त भी ज़बान पर ये अल्फ़ाज़ जारी थे किः

"اَللّٰهُمَّ اهْدِ قَوْمِى فَاِنَّهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ"

ऐ अल्लाह! मेरी क़ौम को हिदायत अ़ता फ़रमा, उनको इल्म नहीं है, यह मुझे जानते नहीं हैं, ये नादान हैं, और नादानी में यह हर्कत कर रहे हैं। ऐ अल्लाह! इनको हिदायत अ़ता फ़रमा।

ज़बान पर ये अल्फ़ाज़ इसलिये जारी हुए कि कुफ़्फ़ार के उन आमाल से तो नफ़रत और बुग़्ज़ है, लेकिन उनकी ज़ात से नफ़रत नहीं, और ज़ात बहैसियत ज़ात के मेरे अल्लाह की मख़्लूक़ है, और मेरे अल्लाह की मख़्लूक़ से मुझे मुहब्बत है।

गुनाहगार से नफ़रत मत करो

यह बात याद रखना चाहिए कि बुरे कामों और गुनाहों से नफ़रत न करना भी गुनाह है। गुनाहों से ज़रूर नफ़रत करनी चाहिए और उनको बुरा समझना चाहिए। लेकिन जो शख़्स इन गुनाहों के अन्दर मुब्तला है, उसकी ज़ात की हक़ारत दिल में न आनी चाहिए। उस से नफ़रत न हो। बल्कि उस पर तरस खाना चाहिए। जिस तरह एक शख़्स बीमार हो जाए और इलाज के लिए डॉक्टर के पास जाए, अब डॉक्टर का यह काम नहीं है कि उस से नाराज़ हो जाए, कि तुम बीमार क्यों पड़े? बल्कि वह डॉक्टर उस बीमार के ऊपर और तरस खाता है कि बेचारा इस बीमारी में मुब्तला हो गया, और उसका इलाज करता है, और उसके लिए दुआ करता है कि या अल्लाह! इसकी बीमारी को दूर फ़रमा दे। इसी तरह गुनाहगार, फ़ासिक़ फ़ाजिर के साथ भी यही मामला होना चाहिए कि उनके बुरे आमाल और बुराइयों से बुग़्ज़ और नफ़रत हो, लेकिन उनकी ज़ात से बुग़्ज़ और नफ़रत न हो, बल्कि उनकी ज़ात के साथ इस लिहाज़ से

मुहब्बत हो कि यह मेरे अल्लाह की मख़्लूक़ है। और उसके लिए दुआ करे कि अल्लाह तआला उसको सही रास्ते पर ले आए।

एक ताजिर की मग़फ़िरत का अजीब क़िस्सा

एक हदीस में है कि एक मर्तबा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि एक शख़्स अल्लाह तआला की बारगाह में पेश हुआ। अल्लाह तआला की बारगाह में पेश होने का मतलब यह है कि क़ियामत के दिन जब हिसाब किताब होगा तो उस वक़्त वह पेश होगा, लेकिन उसको कोई नमूना हो सकता है कि पहले भी किसी वक़्त दिखा दिया जाता हो। बहर हाल! जब वह पेश हुआ तो अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों से फ़रमाया कि इसका नामा-ए-आमाल देखो कि इसने क्या क्या आमाल किए हैं, जब फ़रिश्तों ने देखा तो यह मालूम हुआ कि उसका आमाल नामा नेकियों से तक़रीबन ख़ाली है। न नमाज़ है, न रोज़ा है, न कोई इबादत है, बस दिन रात तिजारत करता रहता है। अल्लाह तआला तमाम बन्दों के बारे में सब कुछ जानते हैं लेकिन दूसरों के सामने ज़ाहिर कराने के लिए फ़रिश्तों से पूछते हैं कि ज़रा अच्छी तरह देखो कि कोई और नेक अमल आमाल नामे में है या नहीं? उस वक़्त फ़रिश्ते फ़रमायेंगे कि हां! इसका एक नेक अमल है, वह यह है कि यह शख़्स अगरचे कोई ख़ास नेक अमल तो नहीं करता था, लेकिन यह तिजारत करता था, और अपने ग़ुलामों को तिजारत का सामान देकर भेजता था कि जाकर यह सामान बेच कर इसके पैसे ला कर दें। इस शख़्स ने ग़ुलामों को यह ताकीद कर रखी थी कि जब किसी को कोई सामान फ़रोख़्त करो, और तुम यह देखो कि वह शख़्स तंगदस्त और मुफ़्लिस है तो उसके साथ नर्मी का मामला करना, अगर उसको उधार दिया है तो उस से उधार वसूल करने में बहुत सख़्ती से काम मत लेना, और कभी किसी को माफ़ भी कर दिया करना। चुनांचे सारी उम्र तिजारत के अन्दर इसका यह मामूल रहा कि जब किसी तंगदस्त से मामला किया तो या तो उसको मोहलत दे दी, अगर

मौक़ा हुआ तो उसको माफ़ ही कर दिया। अल्लाह तआ़ला फ़रमायेंगे कि अच्छा यह मेरे बन्दों को माफ़ करता था, तो मैं इस बात का ज़्यादा मुस्तहिक़ हूं कि इसको माफ़ करूं। चुनांचे फिर फ़रिश्तों को हुक्म देंगे कि इस से दरगुज़र का मामला करो और इसको जन्नत में भेज दो। बहर हाल! बन्दों के साथ माफ़ी का मामला करना अल्लाह तआ़ला को बहुत पसन्द है।

यह रहमत का मामला था, क़ानून का नहीं

लेकिन एक बात याद रखिए कि यह ऊपर का मामला यह रहमत का मामला है, यह कोई क़ानून नहीं है। इसलिये कोई शख़्स यह न सोचे कि यह अच्छा नुस्ख़ा हाथ आ गया कि न नमाज़ पढ़ो, न रोज़ा रखो, न ज़कात दो, न दूसरे फ़राइज़ अन्जाम दो, न गुनाहों से बचो। बस मैं भी इसी तरह लोगों को माफ़ कर दिया करूंगा तो क़ियामत के दिन मेरी भी माफ़ी हो जायेगी, यह दुरुस्त नहीं। इसलिये कि यह मामला रहमत का है और अल्लाह तआ़ला की रहमत किसी क़ायदे और क़ानून की पाबन्द नहीं होती। वह जिसको चाहें अपनी रहमत से बख़्श दें। लेकिन क़ानून यह है कि फ़राइज़ की अदाएगी ज़रूर करनी है। गुनाहों से बचना ज़रूरी है, अगर कोई शख़्स फ़राइज़ की अदाएगी नहीं करता, या गुनाह सें नहीं बचता, महज़ एक अ़मल की बुनियाद पर तकिया करके बैठ जाए कि बस इस एक अ़मल के ज़रिये मेरी छुट्टी हो जाएगी, यह बात दुरुस्त नहीं। इसलिये कि यह अल्लाह तआ़ला का क़ानून नहीं है। जिस शख़्स की सिर्फ़ एक अ़मल की बुनियाद पर बख़्शिश हो गई, मालूम नहीं उसने वह अ़मल किस जज़्बे के साथ किया होगा, और उसकी बुनियाद पर अल्लाह तआ़ला की रहमत जोश में आ गई, और अल्लाह तआ़ला ने उसको माफ़ कर दिया। हमारे और आपके लिए यह कोई हमेशा का दस्तूरुल अ़मल नहीं है।

एक बच्चे का एक नवाब को गाली देना

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने इस क़िस्म के वाक़िआत

की सही हक़ीक़त समझाने के लिए एक वाक़िआ बयान फ़रमाया, कि निज़ाम हैदराबाद (दक्षिण) के एक नवाब साहिब थे, उनके वज़ीर ने एक मर्तबा उनकी दावत कर दी, और उनको अपने घर बुलाया, जब नवाब साहिब घर में दाख़िल हुए तो वज़ीर साहिब का बच्चा वहां पर खेल रहा था। नवाब साहिब को बच्चों से छेड़ख़ानी की आदत थी। उन्होंने वज़ीर के बच्चे को छेड़ने के लिए उसका कान पकड़ लिया। वह बहुत तेज़ तर्रार था, वह क्या जाने कि नवाब कौन है और बादशाह कौन है। बच्चे ने पलट कर नवाब साहिब को गाली दे दी। जब वज़ीर साहिब ने बच्चे के मुंह से नवाब साहिब के लिए गाली सुनी तो उनकी जान निकल गई कि मेरे बच्चे ने नवाब साहिब को गाली दे दी, और नवाब साहिब की ज़बान तो क़ानून होती है। अब पता नहीं बच्चे का क्या हश्र करेगा। इसलिये वज़ीर ने अपनी वफ़ादारी जताने के लिए तलवार निकाली और कहा कि मैं इसका सर क़लम करता हूं, इसने नवाब साहिब की शान में गुस्ताख़ी की है। नवाब साहिब ने रोका कि नहीं, छोड़ दो, यह बच्चा ही तो है, बाक़ी यह बच्चा ज़हीन लगता है। और इसमें इतनी ख़ुद्दारी है कि अगर कोई शख़्स इसका कान मरोड़ दे तो यह बच्चा फ़ौरन उसके आगे हथियार डालने वाला नहीं है। बल्कि बड़ा ज़हीन और ख़ुद्दार है। अपना बदला लेने वाला है, और अपने ऊपर एतिमाद रखने वाला है। ऐसा करो कि इसका माहानः वज़ीफ़ा जारी कर दो। चुनांचे उसका वज़ीफ़ा जारी हुआ, उस वज़ीफ़े का नाम था "वज़ीफ़ा-ए-दुश्नाम" यानी गाली देने का वज़ीफ़ा। हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि अब तुम यह सोच कर कि गाली देने से वज़ीफ़ा जारी होता है, इसलिये तुम भी किसी नवाब साहिब को गाली दे आओ। ज़ाहिर है कि कोई भी ऐसा नहीं करेगा। क्योंकि यह ख़ास तौर पर उस बच्चे के ख़ास हालात को मद्दे नज़र रखते हुए यह नवाब की सख़ावत का एक मुज़ाहरा था, कि गाली देने के बावजूद बच्चे को नवाज़ दिया। लेकिन यह कोई

आम क़ानून नहीं था कि जो कोई नवाब साहिब को गाली देगा तो उसको वज़ीफ़ा मिलेगा। बल्कि अब कोई गाली देगा तो पिटाई होगी, जेल में बन्द कर दिया जायेगा। हो सकता है कि सर क़लम कर दिया जाए।

यही मामला अल्लाह तआला की नुक्ता नवाज़ी का है, किसी को किसी नुक्ते से नवाज़ दिया, और किसी को किसी नुक्ते से नवाज़ दिया। किसी का कोई अमल क़बूल फ़रमा लिया, और किसी का कोई अमल क़बूल फ़रमा लिया। उनकी रहमत किसी क़ैद, किसी शर्त और किसी क़ानून की पाबन्द नहीं।

"وَسِعَتْ رَحْمَتِیْ كُلَّ شَیْءٍ"

मेरी रहमत तो हर चीज़ पर फैली हुई है। इसलिये किसी के साथ ना इन्साफ़ी कभी नहीं होती, लेकिन कभी कभी किसी को किसी अमल पर नवाज़ दिया जाता है। जब वह अमल अल्लाह तआला को पसन्द आ जाए।

किसी नेक काम को हक़ीर मत समझो

इस से यह नतीजा तो ज़रूर निकाला जाता है कि कोई नेकी का काम हक़ीर नहीं होता, क्या पता कि अल्लाह तआला किस नेक काम को क़बूल फ़रमा लें। और उस से बेड़ा पार हो जाए। इसलिये किसी नेकी के काम को हक़ीर नहीं समझना चाहिए, लेकिन यह नतीजा निकालना दुरुस्त नहीं है कि चूंकि ये वाक़िआत सुनने में आए हैं कि अल्लाह तआला ने फ़लां नेक काम पर बख़्श दिया, इसलिये अब न तो नमाज़ पढ़ने की ज़रूरत है, और न फ़राइज़ अदा करने की ज़रूरत है। बस आदमी अल्लाह की रहमत पर तकिया करके बैठ जाए। चुनांचे यह हदीस आपने सुनी है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि आजिज़ शख़्स वह है जो अपने नफ़्स को ख़्वाहिशात के पीछे छोड़ दे, और जो दिल में आ रहा है, वह काम कर रहा है। यह नहीं देख रहा है कि यह काम हलाल है

या हराम है। जायज़ है या ना जायज। लेकिन अल्लाह तआला पर तमन्ना और आरज़ू लगाए बैठा है कि अल्लाह मियां तो बड़े माफ़ करने वाले और रहम करने वाले हैं, सब माफ़ फ़रमा देंगे। बहर हाल! इन वाक़िआत से यह नतीजा निकालना दुरुस्त नहीं है।

बन्दों पर नर्मी करने पर मग़फ़िरत का एक और वाक़िआ

इसी तरह एक और हदीस में जनाब रसूले करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि तुम से पहले जो उम्मतें गुज़री हैं, उनमें एक शख़्स ऐसा था कि जब वह कोई चीज़ फ़रोख़्त करता, तो उसमें नर्मी से काम लेता, यह नहीं कि पैसे पैसे पर लड़ रहा है। बल्कि ग्राहक को एक क़ीमत बता दी, अब ग्राहक कह रहा है कि थोड़ी सी कमी कर दो तो उसने यह सोच कर कि चलो थोड़ा मुनाफ़ा कम सही, चलो इसको दे दो। इसी तरह जब वह कोई चीज़ ख़रीदता, तब भी नर्मी का मामला करता, जब दुकानदार ने चीज़ की क़ीमत बाता दी, उसने बस एक मर्तबा उस से कह दिया कि भाई थोड़ी सी कम कर दो। यह नहीं कि क़ीमत कम कराने के लिए उस से लड़ रहा है। और उस से ज़बरदस्ती कम करा रहा है। बल्कि एक आध मर्तबा कह देने के बाद क़ीमत अदा करके चीज़ ले ली। इसी तरह जब दूसरे से अपना हक़ वसूल करने का वक़्त आता, जैसे किसी से पैसे वसूल करने हैं, या क़र्ज़ वसूल करना है, तब भी नर्मी का मामला करता और उस से कहता कि चलो अभी पैसे नहीं हैं तो बाद में अदा कर देना। तुम्हें मोहलत देता हूं। जब आख़िरत में अल्लाह तआ़ला के सामने उसकी पेशी हुई तो अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि चूंकि यह मेरे बन्दों के साथ नर्मी का मामला करता था, इसलिये मैं भी इसके साथ नर्मी का मामला करता हूं। और फिर उसकी मग़फ़िरत फ़रमा दी। बहर हाल, अल्लाह तआ़ला को बन्दों के साथ नर्मी का मामला करना, और तंगदस्त के साथ आसानी का

मामला करना बहुत ही ज़्यादा पसन्द है।

हुज़ूरे अक़्दस सल्ल. का मामूल

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सारी ज़िन्दगी का यह मामूल था कि जब भी किसी के साथ ख़रीद व बेच का मामला फ़रमाते तो अपने ज़िम्मे जितना वाजिब होता उस से ज़्यादा ही दिया करते थे। उस ज़माने में सोने चांदी के सिक्के चलते थे, और वे सिक्के भी मुख़्तलिफ़ मालियतों के होते थे। इसलिये उनकी गिन्ती के बजाए उनका वज़न देखा जाता था, कि कितने वज़न का है। उसके ज़रिये क़ीमत अदा की जाती थी। एक रिवायत में आता है कि आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक चीज़ बाज़ार से ख़रीदी। दिर्हमों के ज़रिये जब उसकी क़ीमत अदा फ़रमाने लगे तो आपने वज़न करने वाले से फ़रमाया "झुकता हुआ तौलो"। यानी मेरे ज़िम्मे जितने दिरहम वाजिब हैं। उस से कुछ ज़्यादा दे दो। और एक रिवायत में आपने इर्शाद फ़रमायाः

"خِيَارُكُمْ اَحْسَنُكُمْ قَضَاءً"

तुम में सब से बेहतर लोग वे हैं जो जब दूसरे का हक़ अदा करें तो अच्छी तरह अदा करें। यानी कुछ ज़्यादा ही अदा करें, कम न करें। जैसे आपके ज़िम्मे सौ रुपये क़र्ज़ थे, आपने सौ के बजाए एक सौ दस अदा कर दिए, और यह कि देते वक़्त परेशान न करें, चक्कर न कटवाएं, टाल मटोल न करें। ये सब बातें अच्छी तरह अदा करने और हुस्ने सुलूक करने में दाख़िल हैं।

इमाम अबू हनीफ़ा रह. की वसीयत

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अलैहि जो फ़िक़्ह के अन्दर हमारे इमाम हैं। जिनके फ़िक़्ह पर हम अमल करते हैं। उन्होंने अपने शागिर्दों के नाम एक वसीयत नामा लिखा है। उस वसीयत नामे में लिखते हैं कि "जब किसी के साथा ख़रीद व बेच का मामला हो तो उसको उसके हक़ से कुछ ज़्यादा ही दे दिया करो, कम न

किया करो" यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत है। हम लोगों ने सिर्फ़ चन्द ख़ास ख़ास सुन्नतें याद कर ली हैं, और उन पर अमल कर लेते हैं। हालांकि यह सब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की सुन्नत का हिस्सा है। हमें इन पर अमल करना चाहिए। अल्लाह तआला हम सब को इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन। इस हदीस में इसी सुन्नत की तरफ़ इशारा करते हुए आपने फ़रमाया कि:

"وَمَنْ يَسَّرَ عَلٰى مُعْسِرٍ يَسَّرَ اللّٰهُ عَلَيْهِ فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ"

"यानी जो शख़्स किसी तंगदस्त के साथ आसानी का मामला करे तो अल्लाह तआला दुनिया व आख़िरत दोनों में उसके साथ आसानी का मामला फ़रमायेंगे"।

असल आसानी तो आख़िरत की आसानी है। लेकिन तजुर्बा यह है कि ऐसा शख़्स दुनिया में भी परेशान नहीं होता"।

पैसे जोड़ जोड़ कर रखने वालों के लिए बद-दुआ

एक हदीस में है कि एक फ़रिश्ता रोज़ाना अल्लाह तआला से यह दुआ करता है कि:

"اَللّٰهُمَّ اَعْطِ مُمْسِكًا تَلَفًا وَاَعْطِ مُنْفِقًا خَلَفًا"

"ऐ अल्लाह! जो शख़्स पैसों को जोड़ जोड़ कर रखता हो, यानी हर वक़्त गिन्ता रहता है, कि अब कितने हो गए, और अब कितने हो गए। और ख़र्च करते हुए जान निकल रही है। ऐ अल्लाह! उसके माल पर तबाही डाल दे"।

चुनांचे इस दुआ के नतीजे में उसके माल पर इस तरह हलाकत और तबाही पड़ती है कि कभी उसके पैसे चोरी हो गए, कभी डाका पड़ गया, कभी कोई नुक़सान हो गया। और कुछ न हो तो बे बर्कती ज़रूर हो जाती है। वे पैसे अगरचे गिन्ती में तो ज़्यादा हो गए लेकिन उन पैसों से जो फ़ायदा हासिल होना चाहिए था, और उन पैसों में जो बर्कत होनी चाहिए थी, वह फ़ायदा और बर्कत हासिल न हुई।

जैसे पैसे तो ज़्यादा हो गए लेकिन घर में बीमारी हो गई, और अब वे पैसे अस्पताल और डॉ० के पास जा रहे हैं। बताइये कि यह कैसी बर्कत हुई? या पैसे तो बहुत जमा हो गए, लेकिन घर के अन्दर ना इत्तिफ़ाक़ी और झगड़ा हो गया और उसके नतीजे में ज़िन्दगी का लुत्फ़ जाता रहा।

पैसे ख़र्च करने वालों के लिए दुआ

पैसे ख़र्च करने वालों के लिए फ़रिश्ता यह दुआ करता है कि:

"وَاَعْطِ مُنْفِقًا خَلَفًا"

ऐ अल्लाह जो शख़्स अल्लाह की राह में ख़र्च करता हो, सदक़ा ख़ैरात करता हो, लोगों के साथ अच्छा सुलूक करता हो, किसी को पैसे दे रहा है, किसी को पैसे माफ़ कर रहा है। ऐ अल्लाह! ऐसे ख़र्च करने वाले को ख़र्च का बदल दुनिया ही में अ़ता फ़रमा। बहर हाल, जो शख़्स इस तरह लोगों के साथ नर्मी का मामला करने वाला हो, बज़ाहिर यह मालूम होता है कि दूसरों के मुक़ाबले में उसके पैसे ज़्यादा ख़र्च हो रहे हैं, लेकिन जो पैसा ख़र्च हो रहा है, वह हक़ीक़त में जा नहीं रहा है, बल्कि वह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से बर्कत ला रहा है, और अल्लाह उसको बदल अ़ता फ़रमा देते हैं। आज तक कोई शख़्स ऐसा नहीं देखा गया जो सिर्फ़ इस वजह से मुफ़्लिस हो गया कि वह सदक़ा ख़ैरात ज़्यादा करता था। या लोगों के साथ नर्मी का मामला करने की वजह से मुफ़्लिस हो गया। ऐसा कभी नहीं हुआ। बल्कि अल्लाह तआ़ला उसको बदल ज़रूर अ़ता फ़रमाते हैं। इसी लिए हदीस में फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला दुनिया में भी उसके लिए आसानी पैदा फ़रमा देते हैं, और आख़िरत में भी आसानी पैदा फ़रमायेंगे।

दूसरों की पर्दा पोशी करना

तीसरा जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया:

"وَمَنْ سَتَرَ مُسْلِمًا، سَتَرَهُ اللّٰهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ"

जो शख़्स किसी मुसलमान की पर्दा पोशी करे, क़ियामत के दिन अल्लाह तआला उसकी पर्दा पोशी फ़रमायेंगे। जैसे किसी मुसलमान का कोई ऐब या ग़लती समाने आ गई कि उसने फ़लां काम ग़लत और ना जायज़ किया है, अब हर जगह उसके बारे में चर्चा करते फिरो कि वह तो यह काम कर रहा था। इसके बजाए उसकी पर्दा पोशी करो, उसको छुपा दो। किसी और को मत बताओ। यह तरीक़ा उस वक़्त इख़्तियार करना चाहिए जब उसके अ़मल से किसी दूसरे को नुक़सान पहुंचने का अन्देशा न हो। लेकिन अगर उसका ऐसा अ़मल सामने आया, जिस से दूसरे को नुक़सान पहुंचने का अन्देशा है, जैसे किसी के क़त्ल करने की साज़िश की जा रही है, उस वक़्त पर्दा पोशी करना जायज़ नहीं, बल्कि दूसरों को बताना ज़रूरी है। लेकिन अगर उसके अ़मल से दूसरे को नुक़सान पहुंचने का अन्देशा न हो तो फिर हुक्म यह है कि उसकी पर्दा पोशी करो, और उसके लिए दुआ करो कि या अल्लाह! यह शख़्स इस गुनाह के अन्दर मुब्तला हो गया है। आप अपनी रहमत से इसको इस गुनाह से निकाल दीजिए।

बहर हाल, दूसरों के ऐब न तो तलाश करो, और न उसको फैलाने की कोशिश करो। आजकल इसके बारे में बड़ी कोताही हो रही है। एक आदमी के बारे में आपको पता चल गया कि वह फ़लां काम करता है, अब आपके पेट में यह बात नहीं रुकती, और दूसरों से कहे बग़ैर आपको चैन नहीं आता, दूसरों को बताना ज़रूरी समझते हैं। हालांकि बिला वजह दूसरों के ऐब तलाश करना और उनको फैलाना गुनाह है।

दूसरों को गुनाह पर शर्म दिलाना

एक हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

"مَنْ عَيَّرَ أَخَاهُ بِذَنْبٍ قَدْ تَابَ مِنْهُ لَمْ يَمُتْ حَتّٰى يَعْمَلَهٗ" (ترمذی شریف)

अगर कोई शख़्स अपने भाई को ऐसे गुनाह पर आर और शर्म दिलाए जिस गुनाह से वह तौबा कर चुका था, तो यह शख़्स उस वक़्त तक नहीं मरेगा जब तक ख़ुद उस गुनाह में मुब्तला नहीं हो जायेगा। अगर एक शख़्स से कोई गुनाह हो गया, फिर उसने उस गुनाह से तौबा कर ली। अब आप उसको बार बार उस गुनाह पर आर दिला रहे हैं, कि तू तो वही है जिसने यह हर्कत की थी। अल्लाह तआला को यह बात बहुत ना पसन्द है। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैंने उसके गुनाह पर पर्दा डाल दिया, और उसके गुनाह को माफ़ कर दिया, मैंने उसके नामा-ए-आमाल से उस गुनाह को मिटा दिया, अब तू कौन है उस गुनाह पर एतिराज़ करने वाला। अगर तू आर और शर्म दिलायेगा तो हम तुझे उस गुनाह के अन्दर मुब्तला कर देंगे। इसलिये कि किसी मुसलमान के ऐब ढूंढना, या किसी मुसलमान के ऐब को बयान करना, उसको फैलाना बड़ा सख़्त गुनाह का काम है। अल्लाह तआला ने तुम्हें इस दुनिया के अन्दर दारोग़ा बनाकर नहीं भेजा कि दूसरों के ऐबों को उछालते फिरो, बल्कि तुम्हें तो बन्दा बनाकर भेजा है।

अपनी फ़िक्र करें

इसलिये तुम अपनी फ़िक्र करो, अपने ऐबों को देखो, अपने गिरेबान में मुंह डाल कर देखो। अल्लाह तआला जिस शख़्स को अपने ऐबों की फ़िक्र अता फ़रमा देते हैं, उसको दूसरों के ऐब नज़र ही नहीं आते, दूसरों के ऐब उसी को नज़र आते हैं जो अपने ऐबों से बेपर्वाह हो, जो अपनी इस्लाह से ग़ाफ़िल हो। जो शख़्स ख़ुद बीमार हो, वह शख़्स दूसरों के नज़ले व ज़ुकाम की कहां फ़िक्र करेगा। अगर वह ऐसा करेगा तो वह अहमक़ और बेवक़ूफ़ है। इसलिये दूसरों के ऐबों के पीछे पड़ना, जासूसी करना, उनको फैलाना बड़ा सख़्त जुर्म है। जैसा कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में बयान फ़रमाया। इसलिये एक मुसलमान का शेवा

नहीं है कि वह यह काम करे। मुसलमान को इन तमाम बुराइयों से परहेज़ करना लाज़मी है। उसके बग़ैर वह सही मायने में मुसलमान नहीं बन सकता।

दीन का इल्म सीखने की फ़ज़ीलत और उस पर ख़ुशख़बरी

चौथा जुम्ला यह इर्शाद फ़रमायाः

"وَمَنْ سَلَكَ طَرِيْقًا يَلْتَمِسُ فِيْهِ عِلْمًا سَهَّلَ اللّٰهُ لَهٗ بِهٖ طَرِيْقًا اِلَى الْجَنَّةِ"

इस जुम्ले में हम सब के लिए बड़ी ख़ुशख़बरी और बशारत है। अल्लाह तआ़ला हम सब को इसका मिस्दाक़ बनने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन। फ़रमाया कि जो शख़्स कोई फ़ासला तय करे या कोई रास्ता चले, और रास्ता चलने और और फ़ासला तय करने से उसका मक़सद यह हो कि दीन की कोई बात मालूम हो जाए, तो अल्लाह तआ़ला उस चलने की बदौलत उसके लिए जन्नत का रास्ता आसान फ़रमा देंगे। दीन की एक बात मालूम करने की ख़ातिर जो सफ़र किया जायेगा, जैसे कोई मामला पेश आया, और आपको उसके बारे में मसला मालूम नहीं है, अब आप मसला मालूम करने के लिए किसी के पास जा रहे हैं कि मुझे इस बारे में क्या करना चाहिए? अब मुफ़्ती के पास जो चल कर गए तो इस से आपको यह फ़ज़ीलत हासिल हो गई।

यह इल्म हमारे बड़ों ने मेहनत से जमा कर दिया

हम लोग इल्म हासिल करने के लिए वह मेहनत कहां कर सकते हैं जो मेहनत हमारे बुज़ुर्ग कर गए। आज हम लोग आराम से बैठ कर किताब खोल कर यह हदीस पढ़ रहे हैं, और इस पर वाज़ कर रहे हैं। हमारे बड़े फ़ाक़े करके, रूखी सूखी खाकर, मोटा झोटा पहन कर, मशक़्क़त उठा कर, क़ुर्बानियां देकर यह इल्म हमारे लिए इस शक्ल में तैयार करके चले गए। अगर वे लोग इस तरह मेहनत न करते तो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के यह इर्शादात इस तरह हमारे पास महफ़ूज़ न होते। सरकारे दो आ़लम

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की एक एक अदा महफूज़ करके चले गए। कियामत आने तक आने वालों के लिए अमल का एक तरीका बता गए। एक रास्ते की मशाल बता गए।

एक हदीस के लिए लम्बा सफ़र करने का वाकिआ

बुखारी शरीफ़ में एक रिवायत है कि हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु जो हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बड़े करीबी सहाबी थे, और अन्सारी थी। हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के बाद एक दिन बैठे हुए थे, उनको मालूम हुआ कि तहज्जुद की नमाज़ की फ़ज़ीलत के बारे में एक हदीस ऐसी है जो मैंने नहीं सुनी, बल्कि एक दूसरे सहाबी ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बराहे रास्त सुनी है। जो इस वक्त मुल्क शाम के शहर दमिश्क में मुकीम हैं। उनके दिल में ख़्याल आया कि यह हदीस वास्ते से अपने पास क्यों रखूं। बल्कि जिन सहाबी ने यह हदीस हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से सुनी है, मैं उनसे बराहे रास्त क्यों न हासिल कर लूं। अब उन्होंने लोगों से पूछा कि वह सहाबी कहां हैं? लोगों ने बताया कि वह शाम के शहर दमिश्क में मुकीम हैं। (जब कि खुद मदीना मुनव्वरा में मुकीम थे) और मदीना मुनव्वरा से दमिश्क का फ़ासला तकरीबन पन्द्रह सौ किलो मीटर का फ़ासला है। मैंने खुद उस रास्ते पर सफ़र किया है। वह पूरा रास्ता सुन्सान और बयाबान जंगल है। न उसमें कोई टीला है, न कोई दरख़्त है, न पानी है। चुनांचे उसी वक्त हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने ऊंट मंगवाया, और उस पर सवार होकर रवाना हो गए, और पन्द्रह सौ किलो मीटर का फ़सला तय करके दमिश्क पहुंच गए। वहां जाकर उनके घर का पता लगाया। दरवाज़े पर पहुंच कर दस्तक दी। उन सहाबी ने दरवाज़ा खोला, और पूछा कैसे आना हुआ? हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैंने सुना है कि तहज्जुद की फ़ज़ीलत पर आपने एक हदीस हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से बराहे रास्त सुनी है, मैं वह हदीस

आपकी ज़बान से सुनने के लिए आया हूं। उन सहाबी ने पूछा कि आप मदीना तय्यिबा से सिर्फ़ इसी काम के लिए आये हैं? उन्होंने जवाब दिया कि हां सिर्फ़ इसी काम के लिए आया हूं। उन सहाबी ने कहा कि वह हदीस तो मैं बाद में सुनाऊंगा, लेकिन पहले एक और हदीस सुन लो, जो मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सुनी थी। फिर यही हदीस सुनाई कि जो शख़्स कोई रास्ता तय करे। जिसके ज़रिये वह अल्लाह तआ़ला के दीन का इल्म हासिल करना चाहता हो तो अल्लाह तआ़ला उसके लिए जन्नत का रास्ता आसान फ़रमा देते हैं। पहले यह हदीस सुनाई और फिर तहज्जुद की फ़ज़ीलत वाली हदीस सुनाई। हदीस सुनाने के बाद उन सहाबी ने फ़रमाया अब थोड़ी देर अन्दर बैठें, और खाना खायें। हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि नहीं, मैं खाना नहीं खाऊंगा। इसलिये कि मैं यह चाहता हूं कि यह पूरा सफ़र सिर्फ़ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की हदीस की ख़ातिर हो, इस सफ़र में किसी और काम का ज़र्रा बराबर भी दख़ल न हो। अब मैं कोई काम करना नहीं चाहता। यह हदीस मुझे मिल गई और मेरा मक़सद हासिल हो गया। मैं मदीना तय्यिबा वापस जा रहा हूं, "अस्सलामु अ़लैकुम"।

यहां आते वक़्त सीखने की नियत कर लिया करें

देखिए: एक हदीस की ख़ातिर इतना लम्बा सफ़र किया। और यह मैंने आपको सिर्फ़ एक मिसाल बताई, वर्ना सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के हालात और ताबिईन और तबए ताबिईन के हालात उठा कर देखिए तो यह नज़र आयेगा कि उनमें से एक एक ने दीन का इल्म हासिल करने की ख़ातिर और हदीसें जमा करने की ख़ातिर लम्बे लम्बे सफ़र किए। आज हदीसों का यह मजमूआ पकी पकाई रोटी की शक्ल में हमारे सामने मौजूद है। उन अल्लाह के बन्दों ने अपने माल क़ुर्बान किए, और अपनी जानें क़ुर्बान कीं और मशक़्क़तें उठाईं तब जाकर यह इल्म हम तक पहुंचा है। यह मेहनत

वे हज़रात कर गए, अगर हमारे ज़िम्मे यह काम होता तो यह दीन का इल्म ज़ाया हो चुका होता। यह तो अल्लाह तआला का करम था कि उसने इस काम के लिए वह क़ौम पैदा कर दी थी कि आइन्दा आने वाली नस्लों के लिए दीन को महफ़ूज़ कर दें। अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम है कि यह दीन महफ़ूज़ है, किताबें छपी हुई हैं, और हर दौर में दीन को पढ़ने पढ़ाने वाले, जानने वाले हर जगह मौजूद रहे हैं। बस अब तुम्हारा इतना काम है कि उनके पास जाकर इल्म सीख लो, और मसले मालूम कर लो। बहर हाल! इस हदीस में इल्म सीखने वाले के लिए यह अज़ीम ख़ुशख़बरी बयान फ़रमाई। हम लोग जो यहां जमा होते हैं, इसका मक़सद भी यही है कि दीन की बातें सुनें और सुनाएं और दीन का इल्म हासिल करें, इसलिये घर से चलते वक़्त इस हदीस को ज़ेहन में लेकर आया करें कि हम दीन का इल्म हासिल करने के लिए जा रहे हैं, अल्लाह तआला इस हदीस की ख़ुशख़बरी हम सब को अता फ़रमाए, आमीन।

अल्लाह के घर में जमा होने वालों के लिए अज़ीम ख़ुशख़बरी

हदीस के अगले जुम्ले में एक और ख़ुशख़बरी बयान फ़रमाई, फ़रमाया कि कोई जमाअत अल्लाह के घरों में से किसी घर यानी मस्जिद में जमा होकर बैठ जाए, अल्लाह की किताब की तिलावत कर ले, या अल्लाह की किताब के पढ़ने पढ़ाने के लिए यानी अल्लाह के दीन की बातों को सुनने सुनाने के लिए बैठ जाए तो जिस वक़्त वे लोग इस मक़सद के लिए जमा होते हैं तो उस वक़्त अल्लाह तआला की तरफ़ से उन पर सकीनत नाज़िल होती है। और अल्लाह तआला की रहमत उनको ढांप लेती है। और चारों तरफ़ से फ़रिश्ते उस मज्लिस और मजमे को घेर लेते हैं। फ़रिश्तों के घेरने का मतलब यह है कि अल्लाह तआला की रहमत उनकी तरफ़ मुतवज्जह है। और वे रहमत के फ़रिश्ते हैं, वे उन बन्दों के लिए दुआ करते हैं,

और उनके लिए इस्तिग़फ़ार और इल्तिजा करते हैं कि या अल्लाह! ये लोग आपके दीन की ख़ातिर जमा हुए हैं, या अल्लाह! आप अपनी रहमत से इनकी मग़फ़िरत फ़रमा दीजिए। इन पर रहमतें नाज़िल फ़रमाइये। इनके गुनाह माफ़ फ़रमाइये। इनको दीन की तौफ़ीक़ अता फ़रमाइये।

तुम अल्लाह का ज़िक्र करो, अल्लाह तुम्हारा तज़्किरा करें

अगला जुम्ला यह इर्शाद फ़रमाया:

"وَذَكَرَهُمُ اللّٰهُ فِيْمَنْ عِنْدَهُ"

यानी अल्लाह तआला अपनी महफ़िल में उन मज्लिस वालों का ज़िक्र फ़रमाते हैं कि ये मेरे बन्दे अपने सारे काम छोड़ कर सिर्फ़ मेरी ख़ातिर और मेरा ज़िक्र करने के लिए, मेरा ज़िक्र सुनने के लिए, मेरे दीन की बातें सुनने के लिए यहां जमा हुए हैं। और अपने आस पास के फ़रिश्तों के सामने इस महफ़िल का तज़्किरा फ़रमाते हैं। यह कोई मामूली बात है? अरे यह बहुत बड़ी बात है:

ज़िक्र मेरा मुझ से बेहतर है कि उस महफ़िल में है

यह कोई मामूली बात है कि महबूबे हक़ीक़ी हमारा ज़िक्र करे? अरे यह काम तो हमारा था कि हम उनका ज़िक्र करते, हमें पहले हुक्म दिया कि "फ़ज़्कुरूनी" तुम मेरा ज़िक्र करो, लेकिन साथ ही इस ज़िक्र का सिला और बदला भी अता फ़रमा दिया कि "अज़्कुर्कुम" तुम मेरा ज़िक्र करोगे मैं तुम्हारा ज़िक्र करूंगा। तुम मुझे याद करोगे मैं तुम्हें याद करूंगा। हालांकि हमारा ज़िक्र क्या हक़ीक़त रखता है? ज़िक्र कर लें तो क्या, न करें तो क्या, हमारे ज़िक्र करने से उनकी अज़्मत और बड़ाई में ज़र्रा बराबर भी इज़ाफ़ा नहीं होता। और अगर हम उनका ज़िक्र छोड़ दें, बल्कि सारी दुनिया उनका ज़िक्र करना छोड़ दे तो भी उनकी अज़्मत और बड़ाई में ज़र्रा बराबर कमी नहीं आयेगी। हमारी मिसाल तो एक तिनके जैसी है। एक तिनके ने अल्लाह तआला का ज़िक्र कर लिया तो क्या कमाल किया? लेकिन

वह बन्दे का ज़िक्र करें, यह मामूली बात नहीं।

हज़रत उबई बिन काब रज़ि. से कुरआन पाक सुनाने की फ़रमाइश

हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु मश्हूर सहाबी हैं। हर सहाबी में अल्लाह तआला ने अलग अलग ख़ुसूसियतें रखी थीं। हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु की ख़ुसूसियत यह थी कि कुरआने करीम बेतरीन पढ़ा करते थे। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके बारे में फ़रमायाः

"اَقْرَءُهُمْ اُبَیُّ بْنُ کَعْبٍ"

सारे सहाबा में सब से बेहतर कुरआने करीम पढ़ने वाले उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु हैं। एक दिन हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मज्लिस में बैठे हुए थे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु से मुख़ातब होकर फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने हज़रत जिब्राईल अमीन के वास्ते से यह पैग़ाम भेजा है कि तुम उबई बिन काब से कहो कि वह तुम्हें कुरआन शरीफ़ सुनाएं। जब हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह बात सुनी तो फ़ौरन यह सवाल किया कि क्या अल्लाह तआला ने मेरा नाम लेकर फ़रमाया है कि उबई बिन काब से ऐसा कहो? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि हां! तुम्हारा नाम लेकर फ़रमाया है। बस उसी वक़्त हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु पर रोनी तारी हो गयी। और रोते रोते हिच्कियां बन्ध गईं, और फ़रमाया कि मैं इस क़ाबिल कहां कि अल्लाह तआला मेरा ज़िक्र फ़रमाएं, और मेरा नाम लें।

अल्लाह तआला के ज़िक्र करने पर अज़ीम ख़ुशख़बरी

बहर हाल! अल्लाह तआला किसी बन्दे का ज़िक्र फ़रमायें, यह इतनी बड़ी दौलत और नेमत है कि सारी दुनिया की नेमतें और

दौलतें एक तरफ़, यह नेमत एक तरफ़। इस हदीस में इसी अज़ीम नेमत के बारे में फ़रमाया कि जब अल्लाह का दीन सीखने की ख़ातिर, और दीन के पढ़ने पढ़ाने की ख़ातिर लोग किसी जगह जमा हो जाते हैं, तो अल्लाह तआला अपने फ़रिश्तों के मजमे में उनका ज़िक्र फ़रमाते हैं। एक हदीसे कुदसी है। "हदीसे कुदसी" उस हदीस को कहते हैं जिसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह जल्ल शानुहू का कलाम नक़ल फ़रमायें। एक हदीस कुदसी में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाते हैं कि अल्लाह जल्ल शानुहू ने फ़रमायाः

"مَنْ ذَكَرَنِي فِي نَفْسِي ذَكَرْتُهُ فِي نَفْسِي وَمَنْ ذَكَرَنِي فِي مَلَاءٍ ذَكَرْتُهُ فِي مَلَاءٍ خَيْرٍ مِنْهُ"

"जो शख़्स मेरा ज़िक्र तन्हाई में करता है, तो मैं उसका ज़िक्र तन्हाई में करता हूं और उसको याद करता हूं। और जो शख़्स मेरा ज़िक्र किसी मजमे में करता है तो मैं उसका ज़िक्र उस से बेहतर मजमे में करता हूं। यानी वह मेरा ज़िक्र इन्सानों के मजमे में करता है, मैं उसका ज़िक्र फ़रिश्तों के मजमे में करता हूं"।

ज़िक्र की कितनी बड़ी फ़ज़ीलत बयान फ़रमा दी। इसमें वे सब लोग दाख़िल हैं जो दीन के पढ़ने पढ़ाने के लिए, या दीन के समझाने और समझने के लिए किसी जगह जमा हो जाएं। वे सब इस फ़ज़ीलत के अन्दर दाख़िल हैं, अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से हम सब को इसका मिस्दाक़ बनने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन। हम लोग जो यहां हफ़्ते में एक दिन जमा होकर बैठ जाते हैं, और दीन की बातों का तज़्किरा कर लेते हैं, यह मामूली चीज़ नहीं। अल्लाह तआला की रहमत से बड़ी फ़ज़ीलत और सवाब और अज्र की चीज़ है, बशर्ते कि दिल में इख़्लास हो और अल्लाह के दीन की तलब हो।

ऊंचा ख़ानदान होना नजात के लिए काफ़ी नहीं

इस हदीस में आख़री जुम्ला यह इर्शाद फ़रमायाः

"مَنْ بَطَّأَ بِهِ عَمَلُهُ لَمْ يُسْرِعْ نَسَبُهُ"

यह जुम्ला भी जवामिउल कलिम में से है। मायने इसके यह हैं कि जिस शख़्स के अमल ने उसको पीछे छोड़ दिया, या जो शख़्स अपने अमल की वजह से पीछे रह गया, तो महज़ उसका नसब उसको आगे नहीं बढ़ा सकता। मतलब यह है कि किसी का अमल ख़राब है, और उस ख़राब अमल की वजह से जन्नत तक नहीं पहुंच सका, बल्कि पीछे रह गया, जब कि दूसरे लोग जल्दी जल्दी क़दम बढ़ा कर जन्नत में पहुंच गए। बक़ौल किसी के:

याराने तेज़ गाम ने मन्ज़िल को जा लिया
हम महवे नाला-ए-जर्से कारवां रहे

वे लोग आगे चले गए अैर यह अपने अमल की ख़राबी की वजह से पीछे रह गया। और अमल की इस्लाह न कर पाया तो अब सिर्फ़ नसब की वजह से चूंकि यह फ़लां ख़ानदान से ताल्लुक़ रखता है, या फ़लां बुज़ुर्ग का या फ़लां आलिम का बेटा है, महज़ इस बुनियाद पर वह जल्दी नहीं पहुंच सकेगा। इशारा इस तरफ़ फ़रमा दिया कि महज़ इस पर भरोसा और तकिया करके मत बैठ जाओ कि मैं फ़लां का साहिबज़ादा हूं, फ़लां ख़ानदान से ताल्लुक़ रखता हूं। बल्कि अपना अमल सही करने की फ़िक्र करो। अगर यह चीज़ कारामद होती तो हज़रत नूह अलैहिस्सलाम का बेटा जहन्नम में न जाता। जब कि हज़रत नूह अलैहिस्सलाम इतने बड़े रुतबे वाले पैग़म्बर हैं। और अपने बेटे की मग़फ़िरत के लिए दुआ भी फ़रमा रहे हैं। लेकिन अल्लाह तआला ने फ़रमा दिया कि:

"اِنَّهٗ عَمَلٌ غَيْرُ صَالِحٍ"

उसने जो अमल किया है वह नेक अमल नहीं है, इसलिये उसके हक़ में आपकी दुआ क़बूल नहीं की जायेगी। तो असल चीज़ अमल है। लेकिन अमल के साथ अगर किसी बुज़ुर्ग से ताल्लुक़ भी होता है तो उन बुज़ुर्ग के ताल्लुक़ की वजह से अल्लाह तआला कुछ सहारा फ़रमा देते हैं। लेकिन अपनी तरफ़ से अमल और तवज्जोह और फ़िक्र शर्त है। अब अगर किसी को तवज्जोह, फ़िक्र और तलब ही

नहीं है, बल्कि ग़फ़लत के अन्दर मुब्तला है, तो महज़ ऊंचे ख़ानदान से ताल्लुक़ की वजह से आगे नहीं बढ़ सकेगा। अल्लाह तआला हम सब को अपना अमल दुरुस्त करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

ख़ुलासा

आजके बयान का ख़ुलासा यह है कि अल्लाह तआला से मुहब्बत का तक़ाज़ा भी यह है, और अल्लाह तआला से मुहब्बत की लाज़मी शर्त यह है कि अल्लाह की मख़्लूक़ से मुहब्बत करो, और अल्लाह तआला की मख़्लूक़ पर शफ़क़त और रहम करो। जब तक यह चीज़ हासिल नहीं होगी, उस वक़्त तक अल्लाह से मुहब्बत का दावा झूठा होगा। अल्लाह तआला हमारे दिलों में अपनी मुहब्बत और अपनी मख़्लूक़ की मुहब्बत पैदा फ़रमा दे, आमीन।

وآخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

आ़लिमों की तौहीन करने से बचें

اَلْحَمْدُ لِلّٰہِ نَحْمَدُہٗ وَنَسْتَعِیْنُہٗ وَنَسْتَغْفِرُہٗ وَنُؤْمِنُ بِہٖ وَنَتَوَکَّلُ عَلَیْہِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَیِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ یَّھْدِہِ اللّٰہُ فَلَا مُضِلَّ لَہٗ وَمَنْ یُّضْلِلْہُ فَلَا ھَادِیَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنْ لَّا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَحْدَہٗ لَا شَرِیْکَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنَّ سَیِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُہٗ وَرَسُوْلُہٗ صَلَّی اللّٰہُ تَعَالٰی عَلَیْہِ وَعَلٰی اٰلِہٖ وَ اَصْحَابِہٖ وَبَارَکَ وَسَلَّمَ تَسْلِیْمًا کَثِیْرًا کَثِیْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

عن عمروبن عوف المزنی رضی اللہ عنہ قال:قال رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم: اتقوا اذلة العالم ولا تقطعوہ وانتظروا فیئتہ۔ (مسند الفردوس، کنزالعمال)

यह हदीस अगरचे सनद के एतिबार से कमज़ोर है, लेकिन मायने के एतिबार से तमाम उम्मत ने इसको क़बूल किया है, इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बड़ा अहम नुक्ता बयान फ़रमाया है। हदीस का तर्जुमा यह है कि हज़रत अमर बिन औ़फ़ मुज़्नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु से रिवायत है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमायाः आ़लिम की लग़ज़िश (ग़लती और ख़ता) से बचो, और उस से ताल्लुक़ ख़त्म मत करो, और उसके लौट आने का इन्तिज़ार करो। "आ़लिम" से मुराद वह शख़्स है जिसको अल्लाह तआ़ला ने दीन का इल्म, क़ुरआने करीम का इल्म, हदीस का इल्म और फ़िक़्ह का इल्म अ़ता फ़रमाया हो। आपको यक़ीन से यह मालूम है कि फ़लां काम गुनाह है, और तुम यह देख रहे हो कि एक आ़लिम उस गुनाह का इर्तिकाब कर रहा है, और उस ग़लती के अन्दर मुब्तला है। पहला काम तो तुम यह करो

कि यह हरगिज़ मत सोचो कि जब इतना बड़ा आ़लिम यह गुनाह का काम कर रहा है, तो लाओ मैं भी कर लूं। बल्कि तुम उस आ़लिम की उस ग़लती और गुनाह से बचो, और उसको देख कर तुम उस गुनाह के अन्दर मुब्तला न हो जाओ।

गुनाह के कामों में आ़लिमों की पैरवी मत करो

इस हदीस के पहले जुम्ले में उन लोगों की इस्लाह फ़रमा दी जिन लोगों को जब किसी गुनाह से रोका जाता है, और मना किया जाता है कि फ़लां काम ना जायज़ और गुनाह है, यह काम मत करो, तो वे लोग बात मानने और सुनने के बजाए फ़ौरन मिसालें देना शुरू कर देते हैं, कि फ़लां आ़लिम भी तो यह काम करते हैं। फ़लां आ़लिम ने तो फ़लां वक़्त में यह काम किया था। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पहले क़दम पर ही इस दलील पकड़ने की जड़ काट दी, कि तुम्हें उस आ़लिम की पैरवी नहीं करनी है, बल्कि तुम्हें उसकी सिर्फ़ अच्छाई की पैरवी करनी है। वह अगर गुनाह का काम यह कोई ग़लत काम कर रहा है तो तुम्हारे दिल में यह जुर्रत पैदा न हो कि जब वह आ़लिम यह काम कर रहा है तो हम भी करेंगे। ज़रा सोचो कि अगर वह आ़लिम जहन्नम के रास्ते पर जा रहा है तो क्या तुम भी उसके पीछे जहन्नम के रास्ते पर जाओगे? वह अगर आग में कूद रहा है तो क्या तुम भी कूद जाओगे? ज़ाहिर है कि तुम ऐसा नहीं करोगे। फिर क्या वजह है कि गुनाह के काम में तुम उसकी पैरवी कर रहे हो?

आ़लिम का अ़मल मोतबर होना ज़रूरी नहीं

इस वजह से उलमा-ए-किराम ने फ़रमाया है कि वह आ़लिम जो सच्चा और सही मायने में आ़लिम हो, उसका फ़तवा तो मोतबर है, उसका ज़बान से बताया हुआ मसला मोतबर है, उसका अ़मल मोतबर होना ज़रूरी नहीं। अगर वह कोई ग़लत काम कर रहा है तो उस से पूछो कि यह काम जायज़ है या नहीं? वह आ़लिम यह जवाब

देगा कि यह अमल जायज़ नहीं। इसलिये तुम उसके बताए हुए मसले की पैरवी करो। उसके अमल की पैरवी मत करो। इसलिये यह कहना कि फ़लां काम जब इतने बड़े बड़े उलमा कर रहे हैं तो लाओ मैं भी यह काम कर लूं, यह दलील पकड़ना दुरुस्त नहीं। इसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई शख़्स यह कहे कि इतने बड़े बड़े लोग आग में कूद रहे हैं, लाओ मैं भी आग में कूद जाऊं। जैसे यह दलील पकड़ने का तरीक़ा ग़लत है, इसी तरह वह दलील पकड़ने का तरीक़ा भी ग़लत है। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि आ़लिम की ग़लती और ख़ता से बचो, यानी उसकी पैरवी मत करो।

आ़लिम से बदगुमान न होना चाहिए

बाज़ लोग दूसरी ग़लती यह करते हैं कि जब वे किसी आ़लिम को किसी ग़लती में या गुनाह में मुब्तला देखते हैं तो बस फ़ौरन उस से ताल्लुक़ ख़त्म कर लेते हैं। और उस से बदगुमान होकर बैठ जाते हैं। और कभी कभी उसको बदनाम करना शुरू कर देते हैं, कि ये मौलवी ऐसे ही होते हैं। और फिर तमाम उलमा–ए–किराम की तौहीन शुरू कर देते हैं, कि आजकल के उलमा तो ऐसे हैं। इसी हदीस के दूसरे जुम्ले में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसकी भी तर्दीद फ़रमा दी, कि अगर कोई आ़लिम गुनाह का काम कर रहा है तो उसकी वजह से उस से ताल्लुक़ भी मत तोड़ो, क्यों?

उलमा तुम्हारी तरह के इन्सान ही हैं

इसलिये कि आ़लिम भी तुम्हारी तरह का इन्सान है, जो गोश्त पोस्त तुम्हारे पास है, वह उसके पास भी है। वह कोई आसमान से उतरा हुआ फ़रिश्ता नहीं है। जो जज़्बात तुम्हारे दिल में पैदा होते हैं, वे जज़्बात उसके दिल में भी पैदा होते हैं। नफ़्स तुम्हारे पास भी है, उसके पास भी है। शैतान तुम्हारे पीछे भी लगा हुआ है, उसके पीछे भी लगा हुआ है। न वह गुनाहों से मासूम है, न वह पैग़म्बर है और

न वह फ़रिश्ता है, बल्कि वह भी इसी दुनिया का रहने वाला है, और जिन हालात से तुम गुज़रते हो वह भी उन हालात से गुज़रता है। इसलिये यह तुमने कहां से समझ लिया कि वह गुनाहों से मासूम है, और उस से गुनाह सर्ज़द नहीं होगा, और उस से कभी ग़लती नहीं होगी। इसलिये कि जब वह इन्सान है तो इन्सानी तकाज़े से कभी उस से ग़लती भी होगी। कभी वह गुनाह भी करेगा। इसलिये उसके गुनाह करने की वजह से फ़ौरन उस आलिम से बर्गश्ता हो जाना और उसकी तरफ़ से बदगुमान हो जाना सही नहीं। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि फ़ौरन उस से ताल्लुक़ मत तोड़ो, बल्कि उसके वापस आने का इन्तिज़ार करो। इसलिये कि उसके पास सही इल्म मौजूद है। उम्मीद है कि वह इन्शा अल्लाह किसी वक़्त लौट आयेगा।

उलमा के हक़ में दुआ करो

और उसके लिए दुआ करो कि या अल्लाह! फ़लां शख़्स आपके दीन का हामिल है, उसके ज़रिये हमें दीन का इल्म मालूम होता है, यह बेचारा इस गुनाह की मुसीबत में फंस गया है। ऐ अल्लाह! उसको अपनी रहमत से इस मुसीबत से निकाल दीजिए। इस दुआ करने से तुम्हरा डबल फ़ायदा है। एक दुआ करने का सवाब मिलेगा, दूसरे एक मुसलमान के साथ ख़ैर-ख़्वाही करने का सवाब मिलेगा। और अगर तुम्हारी यह दुआ क़बूल हो गई तो तुम उस आलिम की इस्लाह का सबब बन जाओगे। फिर इसके नतीजे में वह आलिम जितने नेक काम करेगा वे सब तुम्हारे आमाल नामे में भी लिखे जायेंगे। इसलिये बिला वजह दूसरों से यह कह कर किसी आलिम को बदनाम करना कि फ़लां बड़े आलिम बने फिरते हैं, वह तो यह हर्कत कर रहे थे, इस से कुछ हासिल नहीं। इस से तुम्हें कोई फ़ायदा नहीं पहुंचेगा।

बे अमल आलिम भी क़ाबिले एहतिराम है

दूसरी बात यह है कि हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब

थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि आ़लिम को तो खुद चाहिए कि वह बा अ़मल हो। लेकिन अगर कोई आ़लिम बे अ़मल भी है, तो भी वह आ़लिम अपने इल्म की वजह से तुम्हारे लिए क़ाबिले एहतिराम है। अल्लाह तआ़ला ने उसको इल्म दिया है। उसका एक रुतबा है। उस रुतबे की वजह से वह आ़लिम क़ाबिले एहतिराम बन गया। जैसा कि मां बाप के बारे में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि:

"وَاِنْ جَاهَدَاكَ عَلٰٓى اَنْ تُشْرِكَ بِىْ مَالَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا وَصَاحِبْهُمَا فِى الدُّنْيَا مَعْرُوْفًا" (سورة لقمان:١٥)

अगर मां बाप काफ़िर और मुश्रिक भी हों तो कुफ़्र और शिर्क में तो उनकी बात मत मानो लेकिन दुनिया के अन्दर उनके साथ नेक सुलूक करो। इसलिये कि उनको अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से मां बाप होने का जो शर्फ़ हासिल है वह बज़ाते खुद सम्मान और अदब व एहतिराम के क़ाबिल है। तुम्हारे लिए उनकी तौहीन करना जायज़ नहीं। इसी तरह अगर एक आ़लिम बे अ़मल भी है, तो उसके हक़ में दुआ़ करो कि या अल्लाह! उसको नेक अ़मल की तौफ़ीक़ दे दे। लेनिक उसकी बद अ़मली की वजह से उसकी तौहीन मत करो। हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि उलमा से ख़िताब करते हुए फ़रमाते कि ख़ाली इल्म कोई चीज़ नहीं होती, जब तक उसके साथ अ़मल न हो। लेकिन यह भी फ़रमाते कि मेरा मामूल यह है कि जब मेरे पास कोई आ़लिम आता है तो अगरचे उसके बारे में मुझे मालूम हो कि यह फ़लां ग़लती के अन्दर मुब्तला है, इसके बावजूद उसके इल्म की वजह से उसका इकराम करता हूं और उसकी इज़्ज़त करता हूं।

उलमा से ताल्लुक़ क़ायम रखो

इसलिये यह प्रोपैगन्डा करना और उलमा को बदनाम करते फिरना कि अरे मियां आजकल के मौलवी सब ऐसे ही होते हैं, आजकल के उलमा का तो यह हाल है। यह भी मौजूदा दौर का एक

फ़ैशन बन गया है। जो लोग बेदीन हैं उनका तो यह तर्ज़े अमल है ही, इसलिए कि उनको मालूम है कि जब तक मौलवी और उलमा को बदनाम नहीं करेंगे, उस वक़्त तक हम इस क़ौम को गुमराह नहीं कर सकते, जब उलमा से इसका रिश्ता तोड़ देंगे तो फिर ये लोग हमारे रहम व करम पर होंगे। हम जिस तरह चाहेंगे इनको गुमराह करते फिरेंगे। मेरे वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि जब चरवाहे से बकरियों का रिश्ता तोड़ दिया तो अब भेड़िये के लिए आज़ादी हो गई कि वह जिस तरह चाहे बकरियों को फाड़ खाए। इसलिये जो लोग बेदीन हैं उनका तो काम ही यह है कि उलमा को बदनाम किया जाए, लेकिन जो लोग दीनदार हैं उनका भी यह फ़ैशन बनता जा रहा है कि वे भी हर वक़्त उलमा की तौहीन और उनकी बे वक़्अती करते फिरते हैं, कि अरे साहिब! उलमा का तो यह हाल है। उन लोगों की मज्लिसें इन बातों से भरी होती हैं। हालांकि इन बातों से कोई फ़ायदा नहीं। सिवाए इसके कि जब लोगों को उलमा से बदगुमान कर दिया तो अब तुम्हें शरीअत के अहकाम कौन बतायेगा? अब तो शैतान ही तुम्हें शरीअत के मसाइल बतायेगा कि यह हलाल है, यह हराम है। फिर तुम उसके पीछे चलोगे, और गुमराह हो जाओगे। इसलिये उलमा अगरचे बे अमल नज़र आएं, फिर भी उनकी इस तरह तौहीन मत करो, बल्कि उनके लिए दुआ करो। जब तुम उसके हक़ में दुआ करोगे तो इल्म तो उसके पास मौजूद है। तुम्हारी दुआ की बर्कत से इन्शा अल्लाह एक दिन वह ज़रूर सही रास्ते पर लौट आयेगा।

एक डाकू पीर बन गया

हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही रहमतुल्लाहि अलैहि एक बार अपने मुरीदों से फ़रमाने लगे, तुम कहां मेरे पीछे लग गए। मेरा हाल तो उस पीर जैसा है जो हक़ीक़त में एक डाकू था। उस डाकू ने जब यह देखा कि लोग बड़ी अक़ीदत और मुहब्बत के साथ पीरों

के पास जाते हैं। उनके पास हदिये तोहफ़े ले जाते हैं। उनका हाथ चूमते हैं। यह तो अच्छा पेशा है। मैं ख़्वाह मख़्वाह रातों को जाग कर डाके डालता हूं। पकड़े जाने और जेल में बन्द होने का ख़तरा अलग होता है। मशक़्क़त और तक्लीफ़ अलग होती है। इस से अच्छा यह है कि मैं पीर बन कर बैठ जाऊं। लोग मेरे पास आयेंगे, मेरे हाथ चूमेंगे, मेरे पास हदिये तोहफ़े लायेंगे। चुनांचे यह सोच कर उसने डाका डालना छोड़ दिया, और एक ख़ानक़ाह बनाकर बैठ गया। लम्बी तस्बीह ले ली। लम्बा कुर्ता पहन लिया, और पीरों जैसा हुलिया बना लिया, और ज़िक्र और तस्बीह शुरू कर दी। जब लोगों ने देखा कि कोई अल्लाह वाला बैठा है, और बहुत बड़ा पीर मालूम होता है। अब लोग उसके मुरीद बनना शुरू हो गए। यहां तक कि मुरीदों की बहुत बड़ी तायदाद हो गई। कोई हदिया ला रहा है, कोई तोहफ़ा ला रहा है, ख़ूब नज़राने आ रहे हैं। कोई हाथ चूम रहा है, कोई पांव चूम रहा है। हर मुरीद को मख़्सूस ज़िक्र बता दिए, कि तुम फ़लां ज़िक्र करो, तुम फ़लां ज़िक्र करो। अब ज़िक्र की ख़ासियत यह है कि उसके ज़रिये अल्लाह तआला इन्सान के दर्जों को बुलन्द फ़रमाते हैं। चूंकि उन मुरीदों ने इख़्लास के साथ ज़िक्र किया था, उसके नतीजे में अल्लाह तआला ने उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमा दिए, और कश्फ़ व करामात का ऊंचा मक़ाम हासिल हो गया।

मुरीदों की दुआ काम आई

एक रोज़ उन मुरीदों ने आपस में गुफ़्तगू की कि अल्लाह तआला ने हमें तो इस रुतबे तक पहुंचा दिया। हम ज़रा यह देखें कि हमारा शैख़ किस रुतबे का है? चुनांचे उन्होंने मुराक़बा करके कश्फ़ के ज़रिये अपने शैख़ का रुतबा मालूम करना चाहा, लेकिन जब मुराक़बा किया तो शैख़ का कहीं दर्जा नज़र नहीं आया। आपस में मुरीदों ने मश्विरा किया कि शायद हमारा शैख़ इतने ऊंचे मक़ाम पर पहुंचा हुआ है कि हमें उसकी हवा तक नहीं लगी। आख़िरकार

जाकर शैख़ से ज़िक्र किया कि हज़रत! हमने आपका मकाम तलाश करना चाहा, मगर आप इतने ऊंचे मकाम पर हैं कि हम वहां तक पहुंच नहीं पाते। उस वक़्त शैख़ ने अपनी हक़ीक़त ज़ाहिर कर दी, और रोते हुए उसने कहा कि मैं तुम्हें अपना दर्जा क्या बताऊं। मैं तो असल में एक डाकू हूं, और मैंने दुनिया कमाने की ख़ातिर यह सारा धन्धा किया था। अल्लाह तआला ने ज़िक्र की बदौलत तुम्हें ऊंचे ऊंचे मकाम अता फ़रमा दिए, और मैं तो एक दम नीचे गढ़े में हूं। तुम्हें मेरा रुतबा कहां मिलेगा? मैं तो डाकू और चोर हूं। मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। इसलिये तुम अब मेरे पास से भाग जाओ, और किसी पीर को तलाश करो। जब शैख़ के बारे में ये बातें सुनीं तो उन सब मुरीदों ने आपस में मिलकर अपने शैख़ के लिए दुआ की, कि या अल्लाह! यह चोर हो या डाकू हो, लेकिन या अल्लाह! आपने हमें जो कुछ भी अता फ़रमाया है, वो इसी के ज़रिए अता फ़रमाया है। ऐ अल्लाह! अब आप इसकी भी इस्लाह फ़रमा दीजिए और इसका दर्जा भी बुलन्द फ़रमा दीजिए। चूंकि वे मुरीद लोग मुख़्लिस थे, और अल्लाह वाले थे, उनकी दुआ की बर्कत से अल्लाह तआला ने उसको भी बख़्श दिया, और उसको भी बुलन्द दर्जा अता फ़मा दिया।

बहर हाल! जब किसी आलिम के बारे में कोई ग़लत बात सुनो तो उसको बदनाम करने के बजाए उसके लिए दुआ करनी चाहिए। अल्लाह तआला हम सब को इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

وأخر دعوانا ان الحمد لله رب العالمين

गुस्से को क़ाबू में कीजिए

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

"عن ابی ہریرة رضی الله عنه قال: ان رجلاً قال لرسول الله صلی الله علیه وسلم: اوصنی ولا تکثر علی، قال: لا تغضب" (جامع الاصول)

हदीस का मतलब

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु रिवायत फ़रमाते हैं कि एक शख़्स हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! मुझे कोई नसीहत फ़रमाइये, और ज़्यादा लम्बी नसीहत न फ़रमाइए। गोया कि नसीहत की भी दरख़्वास्त की और साथा में यह शर्त लगा दी कि वह नसीहत मुख़्तसर हो, लम्बी चौड़ी न हो। और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसकी शर्त पर नागवारी का इज़हार नहीं फ़रमाया, कि नसीहत भी करवाना चाहते हो और साथ में यह क़ैद भी लगा रहे हो कि मुख़्तसर कीजिए। इसी वजह से इस हदीस की शरह करते हुए मुहद्दिसीन ने फ़रमाया कि जो शख़्स नसीहत का तलबगार हो, वह अगर यह कहे कि मुझे मुख़्तसर सी नसीत कर दीजिए तो इसमें कोई अदब के ख़िलाफ़ बात नहीं। क्योंकि हो सकता है कि वह आदमी जल्दी में हो और उसने आप से नसीहत करने की फ़रमाइश की, अब अगर आपने उसके सामने लम्बी तक़रीर शुरू कर दी तो वह बेचारा नसीहत की फ़रमाइश करके किस ख़ाता में पकड़ा गया। हालांकि वह जल्दी में था। उसके पास ज़्यादा वक़्त नहीं था। मालूम

हुआ कि यह कोई अदब के ख़िलाफ़ बात नहीं। चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको यह मुख़्तसर नसीहत फ़रमाई कि "ला तग़्ज़िब" गुस्सा मत कर।

अगर आदमी इस मुख़्तसर नसीहत पर अमल कर ले तो शायद सैकड़ों बल्कि हज़ारों गुनाहों से उसकी हिफ़ाज़त हो जाए।

गुनाहों के दो मुहर्रिक, गुस्सा और शह्वत

इसलिये कि दुनिया में जितने गुनाह होते हैं, चाहे वे अल्लाह के हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ हों या बन्दों के हुक़ूक़ से मुताल्लिक़ हों। अगर इन्सान ग़ौर करे तो यह नज़र आयेगा कि उन तमाम गुनाहों के पीछे दो जज़्बे काम करने वाले होते हैं। एक गुस्सा, दूसरे शह्वत। शह्वत अरबी ज़बान का लफ़्ज़ है, जिसके असल मायने हैं। "नफ़्स की इच्छा" जैसे दिल किसी चीज़ के खाने को चाह रहा है। यह खाने की शह्वत है, या किसी ना जायज़ काम के ज़रिये इन्सान अपनी नफ़्सानी ख़्वाहिशों को पूरा करना चाह रहा है, यह भी शह्वत है। इन्सान चोरी क्यों करता है? इसलिये कि उसको यह ख़्वाहिश है कि माल ज़्यादा मिल जाए। डाका इसलिये डालता है कि मुझे ज़्यादा माल एक दम मिल जाए। बुरी निगाह का डालने का जुर्म भी इन्सान इसलिये करता है कि उसकी नफ़्सानी ख़्वाहिश उसको उस काम पर तैयार करती है। इसलिये बहुत से गुनाह तो शह्वत से पैदा होते हैं। और बहुत से गुनाह गुस्से से पैदा होते हैं। चुनांचे अभी इसकी तफ़सील अर्ज़ करूंगा। उस से अन्दाज़ा हो जायेगा कि यह गुस्सा कितने बेशुमार गुनाहों को जन्म देता है। इसलिये जब यह फ़रमा दिया कि "गुस्सा मत करो" अगर आदमी इस नसीहत पर अमल कर ले तो इसके नतीजे में आधे गुनाह ख़त्म हो जायेंगे।

नफ़्स के सुधार के लिए पहला क़दम

हकीमुल उम्मत हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि इस हदीस का मज़्मून यानी गुस्सा पी जाना तसव्वुफ़ और

तरीक़त का एक अज़ीम बाब है। जो आदमी अल्लाह के रास्ते पर चलना चाहता हो और अपनी इस्लाह करना चाहता हो, उसके लिए पहला क़दम यह होगा कि वह अपने गुस्से को क़ाबू में करने की फ़िक्र करे।

"गुस्सा" एक फ़ितरी चीज़ है

यूं तो अल्लाह तआला ने "गुस्सा" इन्सान की फ़ितरत में रखा है। कोई इन्सान ऐसा नहीं है जिसके अन्दर गुस्से का माद्दा न हो, और अल्लाह तआला ने हिक्मत के तहत ही यह माद्दा इन्सान के अन्दर रखा है। यही माद्दा है कि अगर इन्सान इस पर कन्ट्रोल कर ले और इसको क़ाबू में कर ले तो फिर यही माद्दा इन्सान को बेशुमार बलाओं से महफ़ूज़ रखने का एक ज़रिया है। अगर इन्सान के अन्दर यह माद्दा न हो तो फिर अगर कोई दुश्मन हमला कर देगा तो उसको गुस्सा भी नहीं आयेगा, या कोई दरिन्दा उस पर हमला कर देगा तो उसको गुस्सा ही नहीं आयेगा, और अपना दिफ़ा (रक्षा) भी नहीं कर सकेगा। इसलिये अपने जायज़ दिफ़ा के लिए गुस्से का इस्तेमाल करना जायज़ है, शरीअत ने इस पर कोई पाबन्दी नहीं लगाई। इसलिये कि गुस्सा रखा ही इसलिए है कि वह इन्सान अपनी जान का, अपने माल का दिफ़ा और हिफ़ाज़त कर सके, अपने बीवी बच्चों की तरफ़ से दिफ़ा कर सके। अपने रिश्तेदारों और क़रीबी लोगों का दिफ़ा कर सके। यह गुस्से का जायज़ मौक़ा है।

गुस्से के नतीजे में होने वाले गुनाह

लेकिन अगर यही गुस्सा क़ाबू में न हो तो इसके नतीजे में जो गुनाह होते हैं, वे बेशुमार हैं। चुनांचे गुस्से ही से "तकब्बुर" पैदा होता है। गुस्से से "हसद" पैदा होता है। गुस्से से "बुग्ज़" पैदा होता है। गुस्से से "दुश्मनी" पैदा होती है, और इनके अलावा न जाने कितनी ख़राबियां हैं जो इस गुस्से से पैदा होती हैं। जब कि यह गुस्सा क़ाबू में न हो और इन्सान के कन्ट्रोल में न हो। जैस अगर

गुस्सा क़ाबू में नहीं था और वह गुस्सा किसी इन्सान पर आ गया। अब अगर जिस शख़्स पर गुस्सा आया है वह क़ाबू में है, जैसे वह मातहत है तो उस गुस्से के नतीजे में उसको तक्लीफ़ पहुंचायेगा, या उसको मारेगा, या उसको डांटेगा, उसको गाली देगा, उसको बुरा भला कहेगा, उसका दिल दुखायेगा। और ये सब काम गुनाह हैं, जो गुस्से के नतीजे में उस से ज़ाहिर होंगे। इसलिये कि दूसरे को नाहक़ मारना बहुत बड़ा गुनाह है। इसी तरह अगर गुस्से के नतीजे में गाली दे दी तो हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसके बारे में फ़रमायाः

"سباب المسلم فسوق وقتاله كفر" (بخاری شریف)

यानी मुसलमान को गाली देना बद तरीन फ़िस्क़ है, और उसका क़त्ल करना कुफ़्र है। इसी तरह अगर गुस्से के नतीजे में दूसरे को ताने दिए या बुरा भला कहा। जिस से दूसरे इन्सान का दिल टूट गया तो यह भी बहुत बड़ा गुनाह है। ये सब गुनाह उस वक़्त हुए जब ऐसे शख़्स पर गुस्सा आया जो आपका मातहत था।

"बुग्ज़" गुस्से से पैदा होता है

और अगर ऐसे शख़्स पर गुस्सा आ गया जो आपका मातहत नहीं है, और वह आपके क़ाबू में नहीं है, तो गुस्से के नतीजे में आप उसकी ग़ीबत करेंगे। जैसे जिस पर गुस्सा आया वह बड़ा है, और ओहदा और पद रखता है। उसके सामने कुछ कहने की जुर्रत नहीं होती, ज़बान नहीं खुलती, तो यह होगा कि उसके सामने तो ख़ामोश रहेंगे, लेकिन जब वह नज़रों से ओझल होगा तो उसकी बुराइयां बयान करना शुरू कर देंगे, और उसकी ग़ीबत करेंगे। अब यह ग़ीबत उसी गुस्से के नतीजे में हो रही है। और कभी कभी यह होता है कि इन्सान दूसरे की कितनी भी ग़ीबत कर ले, मगर उसका गुस्सा ठन्डा नहीं होता, बल्कि गुस्से के नतीजे में यह दिल चाहता है कि उसका चेहरा नोच लूं। उसको तक्लीफ़ पहुंचाऊं। मगर चूंकि वह ताक़तवर

और ओहदे वाला और बड़ा है, इसलिये उस पर क़ाबू नहीं चलता। उसके नतीजें में दिल के अन्दर एक घुटन पैदा होगी। उस घुटन का नाम "बुग्ज़" है। अब दिल में हर वक़्त यह ख़्वाहिश होती है कि अगर मौक़ा मिल जाए तो किसी तरह उसको तक्लीफ़ पहुंचाऊं, और अगर ख़ुद बख़ुद उसको तक्लीफ़ पहुंच जाए तो ख़ुशी होती है, कि अच्छा हुआ कि तक्लीफ़ पहुंच गई। यह "बुग्ज़" है जो एक मुस्तक़िल गुनाह है। जो इसी ग़ुस्से के नतीजे में पैदा हुआ।

"हसद" ग़ुस्से से पैदा होता है

और अगर जिस शख़्स पर ग़ुस्सा आ रहा है, और उसको तक्लीफ़ पहुंचने के बजाए राहत और ख़ुशी हासिल हो गई। उसको कहीं से पैसे ज़्यादा मिल गए, या उसको बड़ा ओहदा मिल गया, तो अब दिल में यह ख़्वाहिश हो रही है कि यह ओहदा उस से छिन जाए। यह माल दौलत, यह रुपया पैसा किसी तरह उसके पास से ज़ाया हो जाएं और ख़त्म हो जाएं। इसका नाम "हसद" है। यह "हसद" भी इसी ग़ुस्से के नतीजे में पैदा हो रहा है। बहर हाल, जिस शख़्स पर ग़ुस्सा आ रहा है, अगर उस पर क़ाबू चल जाए तो भी बेशुमार गुनाह इसके ज़रिये हो जाते हैं, और अगर क़ाबू न चले तो भी बेशुमार गुनाह इसके ज़रिये होते हैं। ये सब गुनाह इस "ग़ुस्से" के क़ाबू में न रहने के नतीजे में पैदा हो रहे हैं। अगर ग़ुस्सा क़ाबू में होता तो इन्सान इन सारे गुनाहों से महफ़ूज़ रहता। इसी वजह से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया "ला तग़्ज़िब" ग़ुस्सा न करो। चुनांचे क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने नेक मुसलमानों की तारीफ़ करते हुए इर्शाद फ़रमाया:

"وَالْكَاظِمِيْنَ الْغَيْظَ وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ" (ال عمران:١٣٤)

यानी नेक मुसलमान वे है जो ग़ुस्से को पी जाते हैं, और लोगों से ग़ुस्से को दरगुज़र करते हैं। इसलिये कि ग़ुस्सा पीने के नतीजे में ये सारे गुनाह सर्ज़द नहीं होंगे।

गुस्से के नतीजे में बन्दों के हुकूक़ ज़ाया होते हैं

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया कि गुनाहों के दो सर–चश्मे (स्रोत) होते हैं। एक गुस्सा, दूसरे शह्वत। लेकिन शह्वत के नतीजे में जो गुनाह सर्ज़द होते हैं, वे भी अगरचे बड़े संगीन हैं लेकिन वे गुनाह ऐसे होते हैं कि जिस वक़्त भी अल्लाह तआ़ला तौबा की तौफ़ीक़ दे दें तो तौबा के नतीजे में इन्शा अल्लाह वे गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं। और उसकी तौबा क़बूल कर ली जाती है। और उसके आमाल नामे से वे गुनाह मिटा दिये जाते हैं। लेकिन गुस्से के नतीजे में जो गुनाह सर्ज़द होते हैं, उनका ज़्यादा तर ताल्लुक़ बन्दों के हुकूक़ से है। जैसे गुस्से के नतीजे में किसी को मारा, या किसी को डांटा, या किसी का दिल दुखाया, या किसी को बुरा भला कहा। इन सब का ताल्लुक़ बन्दों के हुकूक़ से है। इसी तरह गुस्से के नतीजे में अगर किसी की ग़ीबत कर ली, या किसी से "बुग्ज़" रखा, या किसी से "हसद" पैदा हो गया। ये सब बन्दों के हुकूक़ में हक़ तल्फ़ी है। इसलिये गुस्से के नतीजे में जितने गुनाह होते हैं, उन सब का ताल्लुक़ बन्दों के हुकूक़ से है, और बन्दों के हुकूक़ को ज़ाया करना बड़ा संगीन गुनाह है। अगर बाद में इन्सान इनसे बाज़ भी आ जाए और तौबा कर ले, तब भी उसकी तौबा कामिल नहीं होगी। जब तक कि जिस बन्दे का हक़ ज़ाया किया है, वह माफ़ न करे उस वक़्त तक वह गुनाह माफ़ नहीं होगा। अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं कि तौबा करने से तो मैं अपना हक़ माफ़ कर दूंगा, लेकिन मेरे बन्दों के जो हुकूक़ तुमने पामाल और ज़ाया किए हैं वे उस वक़्त तक माफ़ नहीं करूंगा जब तक उन बन्दों से माफ़ नहीं करा लोगे। अब तुम किस किस से माफ़ कराते फिरोगे? इसलिये बन्दों के हुकूक़ में कोताही बहुत संगीन है। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह मुख़्तसर और जामे नसीहत फ़रमाई कि "ला तग़्ज़ब" गुस्सा मत करो।

जब इन्सान अपने गुस्से पर कन्ट्रोल हासिल कर लेता है, और उसको क़ाबू में कर लेता है तो अल्लाह जल्ल शानुहू फ़रमाते हैं कि जब मेरे बन्दे ने गुस्से को कन्ट्रोल में कर लिया तो अब मैं भी उसके साथ गुस्से का मामला नहीं करूंगा।

गुस्सा न करने पर अज़ीम बदला

एक हदीस शरीफ़ का मफ़हूम यह है कि क़ियामत के दिन हिसाब किताब के लिए अल्लाह जल्ल शानुहू के सामने एक शख़्स को लाया जायेगा, अल्लाह तआला फ़रिश्तों से सवाल करेंगे कि बताओ इसके नामा-ए-आमाल में क्या क्या नेकियां हैं? हालांकि अल्लाह तआला सब कुछ जानते हैं। लेकिन कभी कभी दूसरे लोगों पर ज़ाहिर करने के लिए सवाल भी करते हैं। चुनांचे पूछेंगे कि इसके नामा-ए-आमाल में क्या क्या नेकियां हैं? जवाब में फ़रिश्ते बतायेंगे कि या अल्लाह! इसके नामा-ए-आमाल में तो बहुत ज़्यादा नेकियां तो नहीं हैं। इसने न तो बहुत ज़्यादा नफ़िलें पढ़ी हैं, और न ही इसने बहुत ज़्यादा इबादतें की हैं। लेकिन इसके नामा-ए-आमाल में एक ख़ास नेकी यह है कि जब कोई शख़्स इसके साथ ज़्यादती करता था, तो यह उसको माफ़ कर देता था। और जब किसी शख़्स के ज़िम्मे इसका कोई माली हक़ होता, और वह शख़्स यह कहता कि मेरे अन्दर इस वक़्त अदा करने की हिम्मत और ताक़त नहीं है, तो यह अपने नौकरों से कहता कि इसके अन्दर हिम्मत और ताक़त नहीं है, इसलिये इसको छोड़ दो। इस तरह यह अपना हक़ छोड़ देता था। अल्लाह तआला यह सुन कर इर्शाद फ़रमायेंगे कि जब यह बन्दा मेरे बन्दों के साथ माफ़ी का मामला करता था, और उनके लिए अपना हक़ छोड़ देता था। आज मैं भी इसके साथ माफ़ी का मामला करूंगा, और इसको माफ़ कर दूंगा। चुनांचे इस बुनियाद पर अल्लाह तआला उस बन्दे की मग़फ़िरत फ़रमा देंगे।

शाह अब्दुल कुद्दूस गंगोही रह. के बेटे का मुजाहदा

यही वजह है कि हमारे बुज़ुर्गाने दीन के पास जब कोई शख़्स

अपनी इस्लाह कराने के लिए जाता तो तौबा के बाद उसको सबक़ यह दिया जाता कि अपने गुस्से को बिल्कुल ख़त्म कर दे और इस गुस्से को ख़त्म कराने के लिए बड़े बड़े मुजाहदे कराए जाते थे। हज़रत शैख़ अ़ब्दुल कुद्दूस गंगोही रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बड़े दर्जे क औलिया अल्लाह में से थे, और सारी दुनिया से लोग उनके पास अपनी इस्लाह कराने के लिए आया करते थे। उनके साहिबज़ादे ने उनकी ज़िन्दगी में उनकी कोई क़द्र न की। ऐसा अक्सर होता है कि जब तक अपना बड़ा ज़िन्दा है तो दिलों में उसकी कोई क़द्र नहीं होती। जैसे यह मुहावरा है "घर की मुर्ग़ी दाल बराबर" बाप घर में मौजूद हैं। वह अपने खेल कूद में लगे हुए हैं। जब बाप का इन्तिक़ाल हो गया तो अब आंख खुली और यह सोचा कि घर में कितनी बड़ी दौलत मौजूद थी। सारी दुनिया आकर फ़ैज़ उठाती रही लेकिन मैंने वक़्त ज़ाया कर दिया और उनसे कुछ भी हासिल न कर सका।

अब मालूमात कराईं कि हमारे वालिद साहिब के पास जो लोग आया करते थे और जिन्होंने वालिद साहिब से अपनी इस्लाह कराई उनमें से कौन ऐसे हैं जिन्होंने वालिद साहिब से ज़्यादा फ़ैज़ हासिल किया हो, ताकि कम से कम अब मैं उनके पास जाकर फ़ैज़ हासिल करूं। तहक़ीक़ करने पर पता चला कि ऐसे कए बुज़ुर्ग बल्ख़ में रहते हैं। यह ख़ुद यू. पी. में रहते थे। चुनांचे बल्ख़ जाने का इरादा किया, और उनको इत्तिला पहुंची कि मेरे शैख़ के साहिबज़ादे तशरीफ़ ला रहे हैं। तो उन्होंने अपने ख़ादिमों के साथ शहर से बाहर निकल कर उनका इस्तिक़बाल किया, और बड़े ऐज़ाज़ व इकराम के साथ घर लाए, उनके लिए शानदार खाने पकवाए, ख़ूब दावत की। जब एक दो दिन इसी तरह गुज़र गए तो साहिबज़ादे ने अ़र्ज़ किया कि हज़रत! आप मुझ से बड़ी मुहब्बत से पेश आए, और मेरी क़द्र दानी की, लेकिन मैं तो असल में किसी और मक़सद के लिए आया था। उन्होंने पूछा कि क्या मक़सद है? साहिबज़ादे ने कहा कि हज़रत! मैं

तो इस मक़सद के लिए आया हूं कि मेरे वालिद साहिब से जो दौलत आप लेकर आये हैं, उसका कुछ हिस्सा मैं भी आप से हासिल कर लूं, क्योंकि उनकी ज़िन्दगी में मैं नहीं ले सका था। उन्होंने फ़रमाया अच्छा आप इस मक़सद के लिए आए हैं, तो अब यह ख़ातिर तवाज़ो और मेहमान दारी सब बन्द, यह ऐज़ाज़ व इक्राम, यह दावत के शानदार खाने सब बन्द, अब आप ऐसा करें कि मस्जिद के पास एक हम्माम है। उस हम्माम के पास आपका ठिकाना होगा, वहीं आपका सोना होगा, और हम्माम की आग जला कर हर वक़्त उसका पानी गर्म किया करो, और उसके लिए कूड़ा कबाड़, लकड़ियां चुन कर लाकर उसमें झोंका करो। चूंकि सर्दियों का मौसम था नमाज़ियों के वुज़ू के लिए गर्म पानी का इन्तिज़ाम किया जाता था। उन साहिबज़ादे से कह दिया कि बस तुम्हारा यही काम है। कोई वज़ीफ़ा कोई तस्बीह वग़ैरह नहीं बताई। कहां तो वह ऐज़ाज़ व इक्राम हो रहा था और कहां यह ख़िदमत सुपुर्द कर दी।

तकब्बुर का इलाज

चूंकि यह इख़्लास के साथ अपनी इस्लाह के लिए आए थे, इसलिये कहने के मुताबिक़ गए और उस काम में लग गए। अब एक लम्बी मुद्दत तक उनके ज़िम्मे बस यही काम था कि पांच वक़्त की नमाज़ पढ़ो, और मस्जिद का हम्मम रोशन करो। बुज़ुर्ग जानते थे कि इन साहिबज़ादों में ख़ानदानी शराफ़त भी होती है। दिलों में तहारत होती है। मगर एक ऐब इनके अन्दर ज़रूर होता है, वह तकब्बुर और बड़ाई। इसका इलाज करना मन्ज़ूर था, इसलिये ऐसा काम उनके सुपुर्द कर दिया ताकि इस बीमारी का इलाज हो जाए। कुछ अर्से के बाद यह देखने के लिए कि शहज़ादगी का ख़्याल और तसव्वुर उनके दिल में है या ख़त्म हो गया है, इसकी आज़माइश के लिए उन बुज़ुर्ग ने अपने घर की भंगन जो घर का कूड़ा कबाड़ उठा कर ले जाती थी, उस से कहा कि आज जब कूड़ा उठा कर जाओ तो हम्माम के पास जो साहिब हम्माम की आग रोशन करने पर लगे हुए हैं, उनके

करीब से गुज़रना, वह जो कुछ तुम्हें कहें वह आकर हम से कहना, चुनांचे जब वह भंगन कूड़ा लेकर उन साहिबज़ाद के पास से गुज़री तो उनको बड़ा तैश और गुस्सा आया, और कहा कि यह तेरी मजाल कि हमारे पास से गुज़रे, न हुआ गंगोह वर्ना तुझे बताता, अब उस भंगन ने जाकर शैख़ को इत्तिला दे दी कि यह जवाब दिया है। उन बुज़ुर्ग ने सोचा कि भी तो कच्चा पन बाक़ी है। अभी कसर बाक़ी है। चुनांचे उसी हम्माम के झोंकने पर उनको लगाए रखा।

दूसरा इम्तिहान

जब फिर कुछ मुद्दत गुज़र गई तो फिर भंगन से कहा कि अब कूड़ा उठा कर ले जाओ और अब के बिल्कुल उनके क़रीब से गुज़रो, चुनांचे वह भंगन और ज़्यादा क़रीब से गुज़री तो साहिबज़ादे ने उस भंगन को गुस्से से देखा, लेकिन ज़बान से कुछ न कहा, उस भंगन ने जाकर इसकी इत्तिला कर दी, कि आज यह वाक़िआ पेश आया। उन्होंने सोचा कि यह इलाज कारगर साबित हुआ है।

तीसरा इम्तिहान

फिर कुछ अर्से के बाद शैख़ ने भंगन को हुक्म दिया कि अबकी मर्तबा उनके इतने क़रीब से गुज़रो कि वह कूड़ा कबाड़ का टोकरा उनको लग भी जाए और उसमें से कुछ कूड़ा उनके ऊपर गिर जाए। चुनांचे जब वह भंगन उनके क़रीब से गुज़री और थोड़ा कूड़ा उन पर गिरा दिया तो उन्होंने अबकी मर्तबा नज़र उठा कर भी नहीं देखा। फिर भंगन ने जाकर शैख़ को इत्तिला दे दी। शैख़ ने फ़रमाया कि हां फ़ायदा हो रहा है।

चौथा इम्तिाहन

कुछ अर्से के बाद फिर शैख़ ने भंगन को हुक्म दिया कि अबकी मर्तबा कूड़े का टोकरा लेकर उनके पास से गुज़रो और ठोकर खाकर उनके ऊपर इस तरह गिर जाओ कि सारा कूड़ा उनके ऊपर गिरे। फिर वह जो करें वह मुझे आकर बताओ, चुनांचे वह भंगन गई और

ठोकर खाकर गिर गई, जब उन्हों ने देखा कि वह भंगन गिर गई है, अब बजाए इसके कि उनको अपनी फ़िक्र होती बल्कि उस भंगन की फ़िक्र हुई, और उस से पूछा कि तुम्हें कहीं चोट तो नहीं लग गई। अपनी कुछ फ़िक्र न हुई कि मेरे कपड़े गन्दे हो गए। चुनांचे भंगन ने जाकर शैख़ को इत्तिला कर दी। फ़रमाया कि अब कामयाबी की उम्मीद हुई।

बड़ी आज़माइश और दौलते बातिनी का देना

उसके बाद एक और वाक़िआ पेश आया, वह यह कि शैख़ शिकार को बाहर जाया करते थे, और शिकारी कुत्ते भी साथ होते थे। इसमें उन्होंने कोई दीनी मस्लिहत देखी होगी, और शिकारी कुत्तों के ज़रिये शिकार करना कोई ना जायज़ काम तो था नहीं, बल्कि जायज़ था। चुनांचे एक मर्तबा जब शिकार के लिए जाने लगे, उन साहिबज़ादे को भी साथ ले लिया और शिकारी कुत्ते की ज़न्जीर उन साहिबज़ादे के हाथ में पकड़ा दी, वे शिकारी कुत्ते बड़े मोटे ताज़े और ताक़तवर और यह बेचारे नहीफ़ और कमज़ारे और फ़ाक़ा मस्त थे। चुनांचे जब शिकारी कुत्ते शिकार के पीछे भागे, और यह साहिबज़ादे कमज़ोर होने की वजह से उन कुत्तों के साथ न भाग सके, चुनांचे गिर पड़े। अब घिस्टते हुए लहू लुहान हो गए, लेकिन शैख़ का हुक्म बजा लाने के लिए ज़न्जीर नहीं छोड़ी।

इस वाक़िए के बाद रात को शैख़ ने ख़्वाब में अपने शैख़ हज़रत मौलाना अ़ब्दुल क़ुद्दूस रह्मतुल्लाहि अ़लैहि को देखा कि वह फ़रमा रहे हैं कि "मैंने तो तुम से इतनी मशक़्क़त नहीं ली" क्योंकि औलाद का ख़्याल तो बाप को होता ही है। चुनांचे जब सुबह हुई तो उनको बुला कर सीने से लगाया और फ़रमाया कि जो दौलत मैं तुम्हारे वालिद से लेकर आया था, तुमने वह दौलत मांगी थी, जो तुम्हारी अमानत थी, वह दौलत मैंने तुम्हारे सुपुर्द कर दी, और चूंकि इस तर्ज़े अ़मल के बग़ैर यह दौलत नहीं मिल सकती थी इसलिये मैंने

यह तरीका इख़्तियार किया।

गुस्सा दबाएं, फ़रिश्तों से आगे बढ़ जाएं

बहर हाल मैं यह अर्ज़ कर रहा था कि जब यह साहिबज़ादे अपनी इस्लाह कराने के लिए वहां गए तो न उनको वज़ीफ़े बताए, न तस्बीहात पढ़ने को बतायीं, न और कुछ मामूलात बताए, बल्कि पहला काम ऐसा कराया जिसके ज़रिये दिमाग़ से तकब्बुर निकले और अल्लाह के बन्दों के साथ अच्छा सुलूक करने का जज़्बा पैदा हो जाए, और यह गुस्सा जो तकब्बुर का सबब और उसका नतीजा होता है वह ख़त्म हो जाए। हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि सुलूक व तसव्वुफ़ का अज़ीम बाब और इसका पहला क़दम यह है कि इन्सान की तबीयत से गुस्सा निकल जाए और इस पर क़ाबू पाया जाए, और जब यह गुस्सा क़ाबू में हो जाता है तो अल्लाह तआला इन्सान को ऐसे मक़ाम तक पहुंचाते हैं कि फ़रिश्ते भी उस पर रश्क करते हैं। फ़रिश्तों के अन्दर गुस्सा तो मौजूद ही नहीं, फिर वे इबादत करते हैं और उनसे किसी को तक्लीफ़ नहीं पहुंचती, तो यह कोई कमाल की बात नहीं। अल्लाह तआला फ़रमाते हैं कि मैंने उनको पैदा ही इस तरह किया है। लेकिन इन्सान और आदम के बेटे की पैदाइश के अन्दर मैंने गुस्से को रखा है, और फिर यह इन्सान मेरे डर की वजह से और मुझ से मुहब्बत की ख़ातिर अपने गुस्से को दबाता है तो यह आदम का बैटा फ़रिश्तों से भी आगे बढ़ जाता है। कैसे बढ़ जाता है? सुनिए।

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह. का एक वाक़िआ

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अलैहि जिनकी फ़िक़्ह पर हम सब अमल करते हैं, और सारी दुनिया में अल्लाह तआला ने उनका फ़ैज़ जारी फ़रमा दिया है। उनसे जलने वाले बहुत थे। अल्लाह तआला ने उनको चूंकि बहुत ऊंचा मक़ाम अता फ़रमाया था, शोहरत अता की थी, इल्म दिया था, और मोतक़िद भी बहुत थे,

इसलिये हसद करने वाले भी बहुत थे। एक दिन आप घर जाने के लिए निकले तो एक साहिब आपके साथ लग गए और बराबर पूरे रास्ते गालियों की बौछार करते रहे। आप ऐसे हैं, वैसे हैं। जब गली का मोड़ आया तो आप रुक गए और उनसे फ़रमाया कि चूंकि इस मोड़ से मेरा रास्ता अलग हो जायेगा। इसलिये कि मेरे घर का मोड़ आ गया है। और आपका रास्ता अलग हो जायेगा, और मेरा रास्ता दूसरा हो जायेगा। कहीं आपके दिल में हसरत न रह जाए। इसलिये मैं यहां खड़ा हो जाता हूं और आपको जो गालियां देनी हों, या बुरा भला कहना हो, वह कह लें, फिर मैं अपने घर की तरफ़ चला जाऊंगा। यह वाक़िआ किताबों में लिखा हुआ मौजूद है।

चालीस साल तक इशा के वुज़ू से फ़जर की नमाज़

मैंने अपने शैख़ हज़रत मौलाना मसीहुल्लाह ख़ां साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि से सुना कि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि का मामूल यह था कि इशा की वुज़ू से फ़जर की नमाज़ पढ़ा करते थे। इसका भी अजीब क़िस्सा है। शुरू में ऐसा करने का मामूल नहीं था, बल्कि शुरू में आपका मामूल यह था कि अख़ीर रात में तहज्जुद के लिए उठ जाते थे। एक दिन रास्ते में जा रहे थे कि रास्ते में एक बुढ़िया को यह कहते हुए सुना कि यह वह शख़्स है जो इशा के वुज़ू से फ़जर की नमाज़ पढ़ता है। बस ये अल्फ़ाज़ सुन कर इमाम साहिब को ग़ैरत आ गई कि यह बुढ़िया तो मेरे बारे में यह गुमान रखती है, कि मैं इशा के वुज़ू से फ़जर की नमाज़ पढ़ता हूं, हालांकि मैं पढ़ता नहीं हूं। इसका मतलब यह है कि मेरी ऐसी बात की तारीफ़ की जा रही है जो मेरे अन्दर मौजूद नहीं। उसी दिन यह तय कर लिया कि आइन्दा सारी उम्र इशा के वुज़ू से फ़जर की नमाज़ पढ़ूंगा। चुनांचे उसके बाद अपना यह मामूल बनाया कि सारी रात इबादत करते और इशा के वुज़ू से फ़जर की नमाज़ पढ़ते थे।

और ऐसा नहीं था कि जब सारी रात इबादत की तो अब सारे दिन सोएंगे। क्योंकि इमाम साहिब की तिजारत भी थी, पढ़ने पढ़ाने का मामूल भी था, लोग आपके पास आकर इल्म हासिल किया करते थे। इसलिये आप सारी रात इबादत करते और फ़जर की नमाज़ के बाद पढ़ने पढ़ाने और तिजारत वग़ैरह के काम अन्जाम देते। इस तरह ज़ुहर की नमाज़ तक इसमें मश्गूल रहते। ज़ुहर की नमाज़ के बाद अ़सर तक सोने का मामूल था।

इमाम अबू हनीफ़ा रह. का एक और अ़जीब वाक़िआ़

एक दिन ज़ुहर की नमाज़ के बाद घर तश्रीफ़ ले गए। बाला ख़ाने पर आपका घर था, जाकर आराम करने के लिए बिस्तर पर लेट गए। इतने में किसी ने दरवाज़े पर नीचे दस्तक दी। आप अन्दाज़ा कीजिए कि जो शख़्स सारी रात का जागा हुआ हो, और सारा दिन मसरूफ़ रहा हो। उस वक़्त उसकी क्या कैफ़ियत होगी। ऐसे वक़्त कोई आ जाए तो इन्सान को कितना नागवार होता है कि यह शख़्स बे वक़्त आ गया। लेकिन इमाम साहिब उठे, ज़ीने से नीचे उतरे, दरवाज़ा खोला तो देखा कि एक साहिब खड़े हैं। इमाम साहिब ने उस से पूछा कि कैसे आना हुआ? उसने कहा कि एक मसला मालूम करना है। देखिए अव्वल तो इमाम साहिब जब मसाइल बताने के लिए बैठते थे, वहां आकर मसला पूछा नहीं, अब बे वक़्त परेशान करने के लिए यहां आ गए। लेकिन इमाम साहिब ने उसको कुछ नहीं कहा, बल्कि फ़रमाया कि अच्छा भाई, क्या मसला मालूम करना है? उसने कहा कि मैं क्या बताऊं। जब मैं आ रहा था तो उस वक़्त मुझे याद था कि क्या मसला मालूम करना है, लेकिन अब मैं भूल गया। याद नहीं रहा कि क्या मसला पूछना था। इमाम साहिब ने फ़रमायाः अच्छा जब याद आ जाए तो फिर पूछ लेना। आपने उसको बुरा भला नहीं कहा, न उसको डांटा डपटा, बल्कि ख़ामोशी से वापस ऊपर चले गए। अभी जाकर बिस्तर पर लेटे ही थे कि दोबारा दरवाज़े पर दस्तक हुई। आप फिर उठ कर नीचे तश्रीफ़ लाए और

दरवाज़ा खोला तो देखा कि वही शख़्स खड़ा है। आपने पूछा क्या बात है? उसने कहा कि हज़रत! वह मसला मुझे याद आ गया था। आपने फ़रमाया पूछ लो। उसने कहा कि अभी तक तो याद था मगर जब आप आधी सीढ़ी तक पहुंचे तो मैं वह मसला भूल गया। अगर एक आम आदमी होता तो उस वक़्त उसके इश्तिआल (उत्तेजना) का क्या आलम होता, मगर इमाम साहिब अपने नफ़्स को मिटा चुके थे। इमाम साहिब ने फ़रमाया कि अच्छा भाई जब याद आ जाए तो पूछ लेना। यह कह कर आप वापस चले गए, और जाकर बिस्तर पर लेट गए। अभी लेटे ही थे कि दोबारा फिर दरवाज़े पर दस्तक हुई। आप फिर नीचे तशरीफ़ लाए। दरवाज़ा खोला तो देखा कि वही शख़्स खड़ा है। उस शख़्स ने कहा कि हज़रत! वह मसला याद आ गया। इमाम साहिब ने पूछा कि क्या मसला है? उसने कहा कि यह मसला मालूम करना है कि इन्सान की नजासत (पाख़ाना) का ज़ायक़ा कड़वा होता है या मीठा होता है? (अल्लाह की पनाह)

अब सब्र का पैमाना भर जाता

अगर कोई दूसरा आदमी होता, और वह अब तक ज़ब्त भी कर रहा होता, तो इस सवाल के बाद तो उसके ज़ब्त और सब्र का पैमाना भर जाता, लेकिन इमाम साहिब ने बहुत इत्मीनान से जवाब दिया कि अगर इन्सान की नजासत ताज़ा हो तो उसमें मिठास होती है, और अगर सूख जाए तो कड़वाहट पैदा हो जाती है। फिर वह शख़्स कहने लगा कि क्या आपने चख कर देखा है? (अल्लाह की पनाह) हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रह्मतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमाया कि हर चीज़ का इल्म चख कर हासिल नहीं किया जाता, बल्कि बाज़ चीज़ों का इल्म अक़्ल से हासिल किया जाता है, और अक़्ल से यह मालूम होता है कि ताज़ा नजासत पर मक्खी बैठती है, ख़ुश्क पर नहीं बैठती। इस से पता चला कि दोनों में फ़र्क़ है, वर्ना मक्खी दोनों पर बैठती।

अपने वक़्त का बुर्दबार इन्सान

जब इमाम साहिब ने यह जवाब दे दिया तो उस शख़्स ने कहाः इमाम साहिब! मैं आपके सामने अपने हाथ जोड़ता हूं। मुझे माफ़ कीजिएगा, मैंने आपको बहुत सताया। लेकिन आज आपने मुझे हरा दिया। इमाम साहिब ने फ़रमाया कि मैंने कैसे हरा दिया? उस शख़्स ने कहा कि एक दोस्त से मेरी बहस हो रही थी। मेरा कहना यह था कि हज़रत सुफ़ियान सौरी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि उलमा के अन्दर सब से ज़्यादा बुर्दबार हैं, और ग़ुस्सा न करने वाले बुज़ुर्ग हैं, और मेरे दोस्त का यह कहना था कि सब से बुर्दबार और ग़ुस्सा न करने वाले बुज़ुर्ग इमाम अबू हनीफ़ा हैं। और हम दोनों के दरमियान बहस हो गई। और हमने जांचने के लिए यह तरीक़ा सोचा था कि मैं उस वक़्त आपके घर पर आऊं जो आपके आराम का वक़्त होता है, और इस तरह दो तीन मर्तबा आपको ऊपर नीचे दौड़ाऊं और आप से ऐसा बेहूदा सवाल करूं, और यह देखूं कि आप ग़ुस्सा होते हैं या नहीं? मैंने कहा कि अगर ग़ुस्सा हो गए तो मैं जीत जाऊंगा और अगर ग़ुस्सा न हुए तो तुम जीत गए। लेकिन आज आपने मुझे हरा दिया। और हक़ीक़त यह है कि मैंने इस रूए ज़मीन पर ऐसा बुर्दबार इन्सान जिसको ग़ुस्सा छूकर भी न गुज़रा हो, आपके अ़लावा कोई दूसरा नहीं देखा।

इस से अन्दाज़ा लगाइये कि आपका क्या मक़ाम था। इस पर फ़रिश्तों को रश्क न आए तो किस पर आए। उन्होंने अपने नफ़्स को बिल्कुल मिटा दिया था।

"बुर्दबारी" ज़ीनत बख़्शती है

चुनांचे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह दुआ फ़रमाईः

"اللّٰهم اغننی بالعلم وزینی بالحلم" (کنزل العمال)

"ऐ अल्लाह मुझे इल्म देकर ग़िना अ़ता फ़रमाइए और हिल्म

(बुर्दबारी) की ज़ीनत अता फ़रमाइए"।

यानी वक़ार देकर संवार दीजिए। आदमी के पास इल्म हो, और हिल्म न हो, बुर्दबारी न हो तो फिर इल्म के बावजूद आदमी में आरास्तगी और ज़ीनत नहीं आ सकती।

इस रास्ते पर चलने के लिए और अपने नफ़्स को काबू में करने के लिए पहला क़दम यह है कि गुस्सा न करो। इसलिये फ़रमाया "ला तग़्ज़ब" यही पहला सबक़ है और यही मुख़्तसर नसीहत है, और यही अल्लाह जल्ल जलालुहू के ग़ज़ब से बचने का तरीक़ा भी है।

गुस्से से बचने की तदबीरें

और सिर्फ़ यह नहीं है कि हुक्म दे दिया कि गुस्सा न करो, बल्कि गुस्से से बचने की तदबीर कुरआने करीम ने भी बताई, और जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी बतलाई। इस तदबीर के ज़रिये गुस्से को दबाने की मश्क़ की जाती है। पहली बात यह है कि ग़ैर इख़्तियारी तौर पर जो गुस्सा आ जाता है, और तबीयत में एक हैजान पैदा हो जाता है, उस ग़ैर इख़्तियार हैजान पर अल्लाह तआला के यहां कोई पकड़ नहीं। इसलिये कि वह इन्सान के इख़्तियार से बाहर है। लेकिन तबीयत में जो हैजान पैदा हुआ और जो जोश आया। उस जोश को अपनी हद के अन्दर रखे, और उसका असर अपने किसी फ़ेल पर न आने दे। जैसे किसी पर गुस्सा आया, और दिल में ओटन पैदा हुई तो यह कोई गुनाह की बात नहीं। लेकिन अगर उस गुस्से के नतीजे में किसी को मार दिया, या किसी को डांट दिया, या बुरा भला कह दिया तो गोया कि उस गुस्से के तक़ाज़े पर अमल कर लिया, अब उस पर पकड़ हो जायेगी, और यह गुनाह है।

गुस्से के वक़्त "अऊज़ु बिल्लाह" पढ़ लो

इसलिये जब कभी दिल में यह हैजान और ओटन पैदा हो तो

पहला काम वह करो जिसको अल्लाह तआला ने कुरआने करीम के अन्दर तल्क़ीन फ़रमाया। चुनांचे फ़रमायाः

"وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيْمِ"

(سورة الاعراف:٢٠٠)

यानी जब तुम्हें शैतान कोई कचोका लगाए तो शैतान मर्दूद से अल्लाह की पनाह मांगो, और "अऊज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम" पढ़ो। ऐ अल्लाह! मैं शैतान मर्दूद से आपकी पनाह मांगता हूं। इसलिये कि शैतान ने अपना कचोका लगाया, लेकिन तुमने अल्लाह से पनाह मांग ली तो अब इन्शा अल्लाह इस गुस्से के बुरे नताइज (परिणामों) से अल्लाह तआला तुम्हारी हिफ़ाज़त फ़रमायेंगे। इसलिये इस बात की आदत डालो कि जब गुस्सा आए तो फ़ौरन "अऊज़ु बिल्लाह" पढ़ लो। यह कोई मुश्किल काम नहीं। ज़रा से ध्यान और मश्क़ की ज़रूरत है।

गुस्से के वक़्त बैठ जाओ या लेट जाओ

गुस्से के वक़्त दूसरा काम वह करो जिसकी हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तल्क़ीन फ़रमाई। और यह बड़ा अजीब व ग़रीब और नफ़्सियाती काम है। फ़रमाया कि जब तबीयत में गुस्से की तेज़ी हो तो उस वक़्त अगर तुम खड़े हो तो बैठ जाओ, और अगर फिर भी गुस्से में कमी न आए तो लेट जाओ। क्योंकि गुस्से की ख़ासियत यह है कि ऊपर दिमाग़ की तरफ़ चढ़ता है, और जब गुस्से का गलबा होता है तो इन्सान ऊपर की तरफ़ उठता है। चुनांचे आपने देखा होगा कि गुस्से के वक़्त अगर इन्सान लेटा हुआ होगा तो उठकर बैठ जायेगा। अगर बैठा होगा तो खड़ा हो जायेगा। इसलिये इसको ख़त्म करने की तदबीर बताई कि तुम उसके उलट काम करो। इसलिये अगर गुस्से के वक़्त खड़े हो तो बैठ जाओ, और बैठे हो तो लेट जाओ। और अपने आपको निचली हालत पर ले आओ। यह तदबीर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

बयान फ़रमाई। इसलिये कि आप जानते हैं कि ये लोग ग़ुस्से के नतीजे में न जाने किस मुसीबत के अन्दर मुब्तला हो जायेंगे। इसलिये आपने यह तदबीर बताई। (अबू दाऊद शरीफ़)

एक रिवायत में यह भी आया है कि आदमी उस वक़्त ठन्डा पानी पी ले।

ग़ुस्से के वक़्त अल्लाह की क़ुदरत को सोचे

एक तदबीर यह है कि आदमी उस वक़्त यह सोचे कि जिस तरह का ग़ुस्सा मैं इस आदमी पर करना चाहता हूं। अगर अल्लाह तआ़ला मुझ पर इस तरह ग़ुस्सा कर दे तो फिर उस वक़्त मेरा क्या हाल होगा। हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तश्रीफ़ लेजा रहे थे। आपने देखा कि हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु अपने ग़ुलाम पर ग़ुस्सा कर रहे हैं, और बुरा भला कह रहे हैं। एक रिवायत में आता है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस वक़्त उनसे फ़रमाया:

"لله اقدر عليك منك عليه"

याद रखो, तुम्हें जितनी क़ुदरत और इख़्तियार इस ग़ुलाम पर हासिल है, इस से कहीं ज़्यादा क़ुदरत और इख़्तियार अल्लाह तआ़ला को तुम पर हासिल है। तुम अपने इख़्तियार को इस्तेमाल करके उसको तक्लीफ़ पहुंचा रहे हो तो अल्लाह तआ़ला को इस से ज़्यादा इख़्तियार तुम पर हासिल है।

अल्लाह तआ़ला का हिल्म

अल्लाह तआ़ला का हिल्म (बर्दाश्त करना) तो देखो कि किस तरह खुलेआ़म उनकी ना फ़रमानियां हो रही हैं, कुफ़्र किया जा रहा है, शिर्क किया जा रहा है, उनके वजूद का इन्कार किया जा रहा है। इसके बावजूद फिर भी उन सब को रिज़्क़ दे रहे हैं। बल्कि अपने बाज़ ना फ़रमानों पर दुनियावी दौलत के अंबार लगा दिए हैं, उनके हिल्म का तो क्या ठिकाना है। इसलिये फ़रमाया:

"تَخَلَّقُوْا بِاَخْلَاقِ اللّٰہِ"

अल्लाह तआला के अख़्लाक़ अपने अन्दर पैदा करने की कोशिश करो। और यह सोचो कि जब अल्लाह तआला अपने गुस्से को अपने बन्दों पर इस्तेमाल नहीं फ़रमाते और मुझ पर अपना गुस्सा इस्तेमाल नहीं फ़रमा रहे हैं तो मैं अपने मातहतों पर गुस्सा क्यों इस्तेमाल करूं।

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ि. का गुलाम को डांटना

एक और रिवायत में आता है कि जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अ़न्हु को देखा कि वह अपने गुलाम को बुरा भला कह रहे हैं, तो आपने उनको ख़िताब करते हुए फ़रमायाः

"لَعَّانِیْنَ وَصِدِّیْقِیْنَ کَلَّا وَرَبِّ الْکَعْبَۃِ"

यानी एक तरफ़ आप गुलाम को लानत मलामत भी करें, और दूसरी तरफ़ "सिद्दीक़" भी बन जाएं। काबा के रब की क़सम ऐसा नहीं हो सकता। यानी आपका मक़ाम तो "सिद्दीक़ियत" का मक़ाम है, और सिद्दीक़ियत के साथ यह चीज़ जमा नहीं हो सकती। इस तरीक़े से आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उनको गुस्सा करने से मना फ़रमाया। इसलिये जब दूसरे पर गुस्सा आए तो यह तसव्वुर कर लो कि जितना क़ाबू और क़ुदरत मुझे इस बन्दे पर हासिल है, इस से ज़्यादा क़ुदरत अल्लाह तआला को मुझ पर हासिल है। अगर अल्लाह तआला मेरी पकड़ फ़रमा लें तो मेरा कहां ठिकाना होगा। बहर हाल! गुस्से को दबाने की ये मुख़्तलिफ़ तदबीरें हैं, जो क़ुरआने करीम ने और नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत ने हमें बताईं।

शुरू में गुस्से को बिल्कुल दबा दो

शुरू में जब इन्सान अपने अख़्लाक़ की इस्लाह करना शुरू करे तो उस वक़्त हक़ नाहक़ की फ़िक्र न करे। यानी बाज़ मौक़े ऐसे

होते हैं कि वहां पर गुस्सा करना जायज़ और बर्हक़ होता है, लेकिन एक मुब्तदी को जो अपने नफ़्स की इस्लाह करना शुरू कर रहा हो। उसको चाहिए कि हक़ और नाहक़ का फ़र्क़ किए बग़ैर हर मौक़े पर गुस्से को दबाए, ताकि रफ़्ता रफ़्ता यह ख़बीस माद्दा एतिदाल पर आ जाए। अगर एक बार इसको दबा दिया जाए, और इसका ज़हर निकाल दिया जाए तो उसके बाद जब इस गुस्से को इस्तेमाल किया जायेगा तो फिर इन्शा अल्लाह सही जगह पर इस्तेमाल किया जायेगा। लेकिन शुरू शरू में किसी भी मौक़े पर गुस्सा न करो। चाहे तुमको यह मालूम हो कि यहां गुस्सा करने का मुझे हक़ है, फिर भी न करो, और जब यह गुस्सा क़ाबू में आ जाए तो फिर अगर गुस्सा किया जायेगा तो वह गुस्सा हद के अन्दर रहता है, हद से आगे नहीं बढ़ता और एतिदाल से आगे नहीं बढ़ता।

गुस्से में एतिदाल

कभी कभी गुस्से की ज़रूरत पेश आती है। ख़ास तौर पर जो लोग अपने ज़ेरे तर्बियत हैं। जैसे बाप को अपनी औलाद पर गुस्सा करने की ज़रूरत पेश आती है। उस्ताद को अपने शागिर्दों पर, शैख़ को अपने मुरीदों पर उनकी इस्लाह की ख़ातिर गुस्सा करना पड़ता है। लेकिन जितना गुस्सा करने की ज़रूरत है, उतना ही गुस्सा करना चाहिए। ज़रूरत से आगे नहीं बढ़ना चाहिए। इसलिये कि अगर आदमी ज़रूरत से आगे बढ़ेगा तो उसमें अपनी नफ़सानियत शामिल हो जायेगी और उसके नतीजे में वह गुनाहगार भी होगा, और उसमें बे बर्कती शामिल हो जायेगी।

अल्लाह वालों के अलग अलग मिज़ाजी रंग

अक्सर औलिया अल्लाह के बारे में तो आपने सुना होगा कि वे अपने तमाम मुताल्लिक़ीन के साथ शफ़्क़त और मुहब्बत का बर्ताव करते हैं। गुस्सा वग़ैरह नहीं करते। लेकिन अल्लाह वालों के रंग अलग अलग होते हैं। किसी पर रहमत का गलबा होता है, तो वे

रहमत और शफ़्कत ही के ज़रिये अपने मुताल्लिकीन का इलाज करते रहते हैं। और किसी पर जलाल का ग़लबा होता है, वे उस जलाल के ज़रिये इलाज करते हैं। लेकिन वह जलाल क़ाबू में रहता है, वह हद से आगे नहीं बढ़ता। यह जो मश्हूर होता है कि फ़लां बुज़ुर्ग बड़े जलाली बुज़ुर्ग थे, तो जलाली होने का मतलब यह नहीं है कि वह मौक़ा बे मौक़ा हर वक़्त गुस्सा करते थे, और हद से ज़्यादा गुस्सा करते थे, बल्कि जिस वक़्त जितना गुस्सा करने का हक़ था और तर्बियते बातिनी के लिए उसकी ज़रूरत समझते थे उसके मुताबिक़ वह गुस्सा करते थे। चुनांचे हमारे बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि के बारे में यह बात मश्हूर है कि वह बड़े जलाली बुज़ुर्ग थे, फ़ारूक़ी थे। यानी हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की औलाद में से थे, इसलिये तबीयत में ग़ैरत भी थी। लेकिन ज़ेरे तर्बियत अफ़राद के लिए कभी भी गुस्सा अपनी हद से आगे नहीं बढ़ता था, और आम हालात में बुर्दबारी और तहम्मुल का मामला भी रहता था।

गुस्से के वक़्त मत डांटो

आप फ़रमाया करते थे कि "मैं दूसरों को भी यह तल्क़ीन करता हूं और ख़ुद मेरा अमल भी यह है कि जो आदमी मेरे ज़ेरे तर्बियत है, उस पर तो मैं गुस्सा कर लेता हूं, लेकिन जो शख़्स मेरे ज़ेरे तर्बियत नहीं है, उसके ऊपर कभी गुस्सा नहीं करता हूं। और फ़रमाते थे कि "जिस वक़्त तबीयत में इश्तिआल और गुस्सा हो, उस वक़्त मत डांटो, बल्कि उस वक़्त ख़ामोश हो जाओ, फिर जब गुस्सा ठन्डा हो जाए उस वक़्त मसनूई गुस्सा पैदा करके फिर डांटो। इसलिये कि मसनूई गुस्सा कभी हद से नहीं निकलेगा, और इश्तिआल की मौजूदगी में गुस्सा करोगे तो हद से निकल जाओगे" आप फ़रमाया करते थे कि "अल्हम्दु लिल्लाह, जब मैं किसी को उसकी तादीब इस्लाह के लिए सज़ा भी दे रहा होता हूं तो ऐन सज़ा देने के वक़्त

भी ज़ेहन में यह बात रहती है कि इसका दर्जा मुझ से बढ़ा हुआ है, और यह मुझ से अफ़ज़ल है। मैं तो अल्लाह तआला की तरफ़ से इस काम पर लगाया हुआ हूं। इसलिये यह काम कर रहा हूं"। फिर इसकी मिसाल देते हुए फ़रमाया कि "जैसे अगर बादशाह अपने शहज़ादे की किसी ना मुनासिब बात पर ख़फ़ा होकर जल्लाद को हुक्म दे कि इस शहज़ादे को कोड़े लगाओ, तो अब वह जल्लाद बादशाह के हुक्म पर शहज़ादे को कोड़े तो मारेगा, लेकिन मारते वक़्त भी जल्लाद यह समझ रहा होगा कि यह शहज़ादा है, मैं जल्लाद हूं। दर्जा इसका बुलन्द है, लेकिन एक हुक्म की ख़ातिर मजबूरन इसको कोड़े मार रहा हूं"। फिर फ़रमाया कि अल्हम्दु लिल्लाह, ऐन ग़ुस्से के वक़्त भी यह ध्यान मेरे दिल से जाता नहीं है कि दर्जा इसका बुलन्द है, लेकिन ज़रूरत के तहत कि अल्लाह तआला ने यह फ़रीज़ा मुझ पर आयद कर दिया है, इसलिये मैं इसको डांट रहा हूं या सज़ा दे रहा हूं।

फ़रमाया करते थे कि मैं एक तरफ़ तो उस से पूछ ताछ और पकड़ कर रहा हूं, और डांट डपट कर कर रहा होता हूं, लेकिन साथ साथ दिल में यह दुआ करता हूं कि या अल्लाह! जिस तरह मैं इस से पूछ ताछ और पकड़ कर रहा हूं, आख़िरत में आप मुझ से दारोगीर मत फ़रमाइयेगा। और जिस तरह मैं इसको डांट रहा हूं या अल्लाह! क़ियामत के दिन मेरे साथ ऐसा मामला न फ़रमाइयेगा। क्योंकि मैं जो कुछ कर रहा हूं, आपके हुक्म के तहत कर रहा हूं। बहर हाल! इस्लाह व तर्बियत की ज़रूरतों के मौक़ों पर इन दुआओं के साथ आपका ग़ुस्सा था। लोगों ने वैसे ही मशहूर कर दिया कि आप बड़े जलाली बुज़ुर्ग थे।

हज़रत थानवी रह. का वाक़िआ

हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि के एक पुराने ख़ादिम भाई नियाज़ साहिब मर्हूम थे। ख़ानक़ाह थाना भवन में हज़रत के पास रहा

करते थे। चूंकि बहुत अर्से से हज़रते वाला की ख़िदमत कर रहे थे। इसलिये तबीयत में थोड़ा सा नाज़ भी पैदा हो गया था। एक बार किसी ने हज़रत के पास आकर उनकी शिकायत की, कि यह भाई नियाज़ साहिब बड़े मुंह चढ़ गए हैं, कभी कभी लोगों को डांट देते हैं। हज़रते वाला को तश्वीश हुई कि ख़ानक़ाह में आने वाले लोगों को इस तरह नाहक़ डांटना तो बुरी बात है। चुनांचे आपने उनको बुला कर उनसे कहा: मियां नियाज़! यह क्या हर्कत है कि तुम हर एक को डांटते फिरते हो। भाई नियाज़ साहिब के मुंह से यह जुम्ला निकला कि "हज़रत जी! झूठ मत बोलो, अल्लाह से डरो" बज़ाहिर भाई नियाज़ साहिब यह कहना चाह रहे थे कि जिन लोगों ने आप से मेरी शिकायत की है कि मैं लोगों को डांटता फिरता हूं, वे लोग झूठ न बोलें, अल्लाह से डरें। लेकिन उनके मुंह से निकल गया कि "झूठ न बोलो, अल्लाह से डरो" ऐसे मौक़े पर वह नौकर और ज़्यादा सज़ा का और डांट का मुस्तहिक़ होना चाहिए, लेकिन हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अलैहि ने जैसे ही ये अल्फ़ाज़ सुने तो फ़ौरन नज़र नीचे की, और "अस्तग़फ़िरुल्लाह, अस्तग़फ़िरुल्लाह" कहते हुए वहां से चले गए।

बात असल में यह हुई कि उनके इस कहने से हज़रते वाला को यह तंबीह हुई कि मैंने एक तरफ़ा बात सुन कर उनको डांटना शुरू कर दिया। एक आदमी ने उनके बारे में इत्तिला दी थी कि यह ऐसा करते हैं, और ख़ुद उनसे यह नहीं पूछा कि असल वाक़िआ क्या था, और सिर्फ़ उस इत्तिला पर मैंने उनको डांटना शुरू कर दिया, यह बात मैंने ठीक नहीं की। इसलिये फ़ौरन "अस्तग़फ़िरुल्लाह" कह कर वहां से चले गए। ऐसे शख़्स के बारे में यह कहा जाता है कि वह जलाली बुज़ुर्ग थे और लोगों को बड़ी डांट डपट किया करते थे।

डांट डपट के वक़्त इसकी रियायत करें

मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब

रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि हकीकत में हमने हज़रत के यहां सिवाए शफ़क़त और मुहब्बत के कुछ देखा ही नहीं। लेकिन कभी कभी लोगों की इस्लाह के लिए डांट डपट की ज़रूरत पड़ती थी तो वह भी इन रियायतों के साथ करते थे। बहर हाल! अगर कोई छोटा है और उसको डांटने की ज़रूरत पेश आए तो आदमी को इन बातों की रियायत करनी चाहिए। जैसे सब से पहले इस बात का ख़्याल रखे कि उस डांट डपट से अपना गुस्सा निकालना मक़सद न हो बल्कि असल मक़सद उसकी इस्लाह और उसकी तर्बियत हो। जिसका तरीका हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने यह बता दिया कि ऐन इश्तिआल यानी उत्तेजना के वक़्त कोई इक़्दाम न मत करो, बल्कि जब इश्तिआल ठन्डा हो जाए उसके बाद सोच समझ कर जितना गुस्सा करने की ज़रूरत है, मसनूई गुस्सा पैदा करके उतना ही गुस्सा करो, न उस से कम हो और न उस से ज़्यादा हो। लेकिन अगर इश्तिआल की हालत में गुस्से पर अमल कर लिया तो गुस्सा क़ाबू से बाहर हो जायेगा और तुम से ज़्यादती हो जायेगी।

गुस्से का जायज़ मौक़ा

अब देखना यह है कि गुस्से का सही महल और सही जगह क्या है? गुस्सा करने का सब से पहला महल और सही जगह अल्लाह तआला की मासियत और ना फ़रमानी और गुनाह हैं। इन चीज़ों से इन्सान नफ़रत करे और इन चीज़ों को दूर करने के लिए जितना गुस्सा करना चाहिए उतना गुस्सा इन्सान इस्तेमाल करे, यह गुस्से का पहला मौक़ा है।

कामिल ईमान की चार निशानियां

एक हदीस में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमायाः

"مَنْ اَعْطٰى لِلّٰهِ، وَمَنَعَ لِلّٰهِ، وَاَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ فَقَدِاسْتَكْمَلَ اِيْمَانَهٗ"

(ترمذی شریف)

यानी जो शख़्स किसी को कुछ दे तो अल्लाह के लिए दे, और अगर किसी को किसी चीज़ से रोके और मना करे, तो अल्लाह के लिए मना करे, और अगर किसी से मुहब्बत करे तो अल्लाह के लिए करे, और अगर किसी से बुग्ज़ रखे तो अल्लाह के लिए रखे, तो उसका ईमान कामिल है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ऐसे शख़्स के ईमान के कामिल होने की गवाही दी है।

पहली निशानी

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने चार चीज़ें ईमान के कामिल होने की निशानियां बताईं। पहली निशानी यह है कि जब दे तो अल्लाह के लिए दे, इसका मतलब यह है कि अगर किसी नेकी के मौक़े पर कुछ ख़र्च कर रहा है तो वह ख़र्च करना अल्लाह के लिए हो। आदमी अपनी ज़रूरियात में भी ख़र्च करता है, घर वालों और बाल बच्चों पर भी ख़र्च करता है। सदक़ा ख़ैरात करता है, आदमी यह नियत करे कि यह सदक़ा मैं इसलिये दे रहा हूं ताकि अल्लाह तआ़ला राज़ी हो जाएं और अपने फ़ज़्ल व करम से इसका सवाब मुझे अ़ता फ़रमाएं। और सदक़ा देने से एहसान जतलाना या नाम नमूद और दिखावा मक़सद न हो तो उस वक़्त यह सदक़ा देना अल्लाह के लिए होगा।

दूसरी निशानी

दूसरी निशानी यह है कि अगर रोके तो अल्लाह तआ़ला के लिए रोके। जैसे किसी जगह पर किसी मौक़े पर पैसा ख़र्च करने से बचाया। वह बचाना भी अल्लाह के लिए हो। इसलिये कि अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि फ़ुज़ूल ख़र्ची मत करो। तो अब फ़ुज़ूल ख़र्ची से बचने के लिए मैं अपना पैसा बचा रहा हूं। यह रोकना भी अल्लाह के लिए हो गया। यह भी ईमान की निशानी है।

तीसरी और चौथी निशानियां

तीसरी निशानी यह है कि अगर किसी से मुहब्बत करे तो वह भी अल्लाह के लिए करे। जैसे किसी अल्लाह वाले से जो मुहब्बत हो जाती है तो यह मुहब्बत पैसा कमाने के लिए नहीं होती, बल्कि उनसे मुहब्बत इसलिये होती है कि उनसे ताल्लुक़ रखेंगे तो हमारा दीनी फ़ायदा होगा, और अल्लाह तआला राज़ी हो जायेंगे। यह मुहब्बत सिर्फ़ अल्लाह के लिए है, और ईमान की निशानी है। इसी तरह उसकी हर मुहब्बत अल्लाह को राज़ी करने की ख़ातिर हो।

चौथी निशानी यह है कि बुग्ज़ और गुस्सा भी अल्लाह के लिए हो। जिस आदमी पर गुस्सा है या जिस आदमी से बुग्ज़ है वह उसकी ज़ात से नहीं है, बल्कि उसके किसी बुरे अमल से है, या उसकी किसी ऐसी बात से है जो मालिके हक़ीक़ी की नाराज़गी का सबब है। तो यह गुस्सा और नाराज़गी अल्लाह तआला ही के लिए है, और गुस्सा करने का यह एक जायज़ महल और मौक़ा है।

ज़ात से नफ़रत न करें

इसलिये बुज़ुर्गों ने एक बात फ़रमाई है जो हमेशा याद रखने की है। वह यह कि नफ़रत और बुग्ज़ काफ़िर से नहीं बल्कि उसके "कुफ़्र" से है। "फ़ासिक़" से बुग्ज़ नहीं बल्कि उसके "फ़िस्क़" से बुग्ज़ है। नफ़रत और बुग्ज़ गुनाहगार से नहीं बल्कि उसके गुनाह से है। जो आदमी बुराइयों और गुनाह के अन्दर मुब्तला है, उसकी ज़ात गुस्सा का महल नहीं है बल्कि उसका फ़ेल गुस्से का महल है। इसलिये कि ज़ात तो क़ाबिले रहम है। वह बेचारा बीमार है। कुफ़्र की बीमारी में मुब्तला है, बुराइयों की बीमारी में मुब्तला है, और नफ़रत बीमार से नहीं होती बल्कि बीमारी से होती है। इसलिये कि अगर बीमार से नफ़रत करोगे तो फिर उसकी कौन देख-भाल करेगा? इसलिये बुराइयों, गुनाहों और कुफ़्र से नफ़रत होगी, उसकी ज़ात से नफ़रत नहीं होगी। यही वजह है कि अगर उसकी ज़ात बुराइयों और

गुनाहों से बाज आ जाए तो वह ज़ात गले लगाने के लायक़ है। इसलिये कि ज़ात के एतिबार से उस से कोई झगड़ा और कोई ज़िद नहीं।

हुज़ूर सल्ल. का तर्ज़े अ़मल

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अ़मल को देखिए। वह ज़ात जिसने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के महबूब चचा हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अ़न्हु का कलेजा निकाल कर चबाया था, यानी हज़रत हिन्दा और जो उसके सबब बने, यानी हज़रत वह्शी रज़ियल्लाहु अ़न्हु जब ये दोनों इस्लाम के दायरे में दाख़िल हो गए और इस्लाम क़बूल कर लिया तो अब वे आपके इस्लामी बहन और भाई बन गए। आज हज़रत वह्शी के नाम के साथ "रज़ियल्लाहु अ़न्हु" कहते हैं। हिन्दा जिन्होंने कलेजा चबाया था, आज उनके नाम के साथ "रज़ियल्लाहु अ़न्हा" कहा जाता है। बात असल यह थी कि उनकी ज़ात से कोई नफ़रत नहीं थी, बल्कि उनके फ़ेल और उनके एतिक़ाद से नफ़रत थी, और जब वह बुरा फ़ेल और बुरा एतिक़ाद ख़त्म हो गया, तो अब उनसे नफ़रत का सवाल ही पैदा नहीं होता।

ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह. का एक वाक़िआ

हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ऊंचा मक़ाम रखते हैं। उनके ज़माने में एक बड़े आ़लिम और फ़क़ीह मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि मौजूद थे। हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि बहैसियत "सूफ़ी" के मश्हूर थे, और यह बड़े आ़लिम "मुफ़्ती और फ़क़ीह" की हैसियत से मश्हूर थे। और हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रह्मतुल्लाहि अ़लैहि "सिमा" को जायज़ कहते थे। बहुत से सूफ़िया के यहां सिमा का रिवाज था। "सिमा" का मतलब यह है कि मौसीक़ी के आलात के बग़ैर हम्द व नअ़्त वग़ैरह के उम्दा मज़ामीन के शेर तरन्नुम से या बग़ैर तरन्नुम के महज़ अच्छी आवाज़ से किसी का

पढ़ना और दूसरों का उसे अच्छे अक़ीदे और मुहब्बत से सुनना। बाज़ सूफ़िया इसकी इजाज़त देते थे, और बहुत से फ़ुक़हा और मुफ़्ती हज़रात इस सिमा को भी जायज़ नहीं कहते थे, बल्कि "बिद्अत" क़रार देते थे। चुनांचे उनके ज़माने के मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब ने भी "सिमा" के ना जायज़ होने का फ़तवा दिया था और हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया रहमतुल्लाहि अ़लैहि "सिमा" सुनते थे।

जब मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि की वफ़ात का वक़्त क़रीब आया तो हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रहमतुल्लाहि अ़लैहि उनकी इयादत और मिज़ाज पुर्सी के लिए तशरीफ़ ले गए, और यह इत्तिला कराई कि जाकर हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब से अ़र्ज़ किया जाए कि निज़ामुद्दीन मिज़ाज पूछने के लिए हाज़िर हुआ है। अन्दर से हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब ने जवाब भिजवाया कि उनको बाहर रोक दें, मैं मरने के वक़्त किसी बिद्अ़ती की सूरत देखना नहीं चाहता। ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने जवाब भिजवाया कि उनसे अ़र्ज़ कर दो कि बिद्अ़ती, बिद्अ़त से तौबा करने के लिए हाज़िर हुआ है। उसी वक़्त मौलाना हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी पगड़ी भेजी कि इसे बिछा कर ख़्वाजा साहिब इसके ऊपर क़दम रखते हुए आयें और जूते से क़दम रखें, नंगे पांव न आयें। ख़्वाजा साहिब ने पगड़ी को उठा कर सर पर रखी कि यह मेरे लिए दस्तारे फ़ज़ीलत है। इसी शान से अन्दर तशरीफ़ ले गए। आकर मुसाफ़ा किया और बैठ गए, और हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि की तरफ़ मुतवज्जह हुए। फिर ख़्वाजा साहिब की मौजूदगी में हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब की वफ़ात का वक़्त आ गया। ख़्वाजा साहिब ने फ़रमाया कि अल्हम्दु लिल्लाह, हकीम ज़ियाउद्दीन साहिब को अल्लाह तआ़ला ने क़बूल फ़रमा लिया है कि रुतबों की तरक़्क़ी के साथ उनका इन्तिक़ाल हुआ। आपने देखा कि अभी थोड़ी देर

पहले यह हालत थी कि सूरत देखना गवारा नहीं था, लेकिन थोड़ी देर के बाद फ़रमाया कि मेरी पगड़ी पर पांव रख कर अन्दर तशरीफ़ लायें।

गुस्सा अल्लाह के लिए हो

बहर हाल जो बुग्ज़ और गुस्सा अल्लाह के लिए होता है, वह कभी ज़ाती दुश्मनियां पैदा नहीं करता, और वह अदावतें पैदा नहीं करता, वह फ़ितने पैदा नहीं करता। क्योंकि जिस आदमी से बुग्ज़ किया जा रहा है, जिस पर गुस्सा किया जा रहा है, वह भी जानता है कि उसको मेरी ज़ात से दुश्मनी नहीं है, बल्कि मेरे ख़ास फ़ेल से और ख़ास हर्कत से है। इस वजह से लोग उसकी बात का बुरा नहीं मानते। इसलिये कि जानते हैं कि यह जो कुछ कह रहा है, अल्लाह के लिए कह रहा है। इसको फ़रमाते हैं:

"مَنْ اَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ"

यानी जिस से ताल्लुक़ और मुहब्बत है तो वह भी अल्लाह के लिए है, और जिस से बुग्ज़ और नफ़रत है, तो वह भी अल्लाह के लिए है। तो यह गुस्से का बेहतरीन मौक़ा और महल है। बशर्ते कि यह गुस्सा शरई हद के अन्दर हो। अल्लाह तआला यह नेमत हमको अता फ़रमा दे कि मुहब्बत हो तो अल्लाह तआला के लिए हो, गुस्सा और बुग्ज़ हो तो वह भी अल्लाह के लिए हो।

लेकिन यह गुस्सा ऐसा होना चाहिए कि उसके मुंह में लगाम पड़ी हुई हो, जहां अल्लाह तआला के लिए गुस्सा करना है, वहां तो हो, और जहां गुस्सा नहीं करना है वहां लगाम डाल कर उसको रोक दो।

हज़रत अली रज़ि. का वाक़िआ

हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु को देखिए। एक यहूदी ने आपके सामने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी की बात कह दी। अल्लाह अपनी पनाह में रखे। हज़रत

अली रज़ियल्लाहु अन्हु कहां बर्दाश्त कर सकते थे। फ़ौरन उसको पकड़ कर ऊपर उठाया और फिर ज़मीन पर पटख़ दिया और उसके सीने पर सवार हो गए। यहूदी ने जब यह देखा कि अब मेरा क़ाबू तो इनके ऊपर नहीं चल रहा है। उसने लेटे लेटे हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु के मुंह पर थूक दिया। जैसे कहावत है कि "खिसयानी बिल्ली खम्बा नोचे" लेकिन जैसे ही उस यहूदी ने थूका, आप फ़ौरन उसको छोड़ कर अलग हो गए। लोगों ने आप से कहा कि हज़रत! उसने और ज़्यादा गुस्ताख़ीह का काम किया कि आपके मुंह पर थूक दिया, ऐसे में आप उसको छोड़ कर अलग क्यों हो गए? हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमायाः बात असल में यह है कि पहले उस पर जो मैंने हमला किया था, और उसको मारने का इराद किया था। वह हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत में किया था। उसने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की शान में गुस्ताख़ी की, जिसकी वजह से मुझे गुस्सा आ गया, और मैंने उसको गिरा दिया। लेकिन जब उसने मेरे मुंह पर थूक दिया, अब मुझे और गुस्सा आया, लेकिन अब अगर मैं उस गुस्से पर अमल करते हुए उस से बदला ले लेता तो यह बदला लेना हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए न होता बल्कि अपनी ज़ात के लिए होता, और इसी वजह से होता कि चूंकि उसने मेरे मुंह पर थूका है इसलिये मैं उसको और ज़्यादा मारूं। तो इस सूरत में यह गुस्सा अल्लाह के लिए न होता, बल्कि अपनी ज़ात के लिए होता। इस वजह से मैं उसको छोड़ कर अलग हो गया। यह हकीकत में इस हदीसः

"مَنْ اَحَبَّ لِلّٰهِ وَاَبْغَضَ لِلّٰهِ"

पर अमल फ़रमा कर दिखा दिया। गोया कि गुस्से के मुंह में लगाम दे रखी है, कि जहां तक इस गुस्से का शरई और जायज़ मौक़ा है, बस वहां तक तो गुस्सा करना है, और जहां इस गुस्से का

जायज़ मौक़ा ख़त्म हो जाए तो उसके बाद आदमी इस ग़ुस्से से इस तरह दूर हो जाए कि जैसे कि इस से कोई ताल्लुक़ ही नहीं। उन्हीं हज़रात के बारे में यह कहा जाता है:

"كَانَ وَقَّافًا عِنْدَ حُدُوْدِ اللّٰهِ"

यानी ये अल्लाह की हदों के आगे ठहर जाने वाले लोग थे।

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ि. का वाक़िआ

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु एक बार मस्जिदे नबवी में दाख़िल हुए। देखा कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के चचा हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु के घर का परनाला मस्जिदे नबवी की तरफ़ लगा हुआ है, बारिश वग़ैरह का पानी मस्जिदे नबवी की तरफ़ गिरता था। गोया कि मस्जिद की फ़िज़ा में वह परनाला लगा हुआ था। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने सोचा कि मस्जिद तो अल्लाह तआला का घर है, और किसी शख़्स के ज़ाती घर का परनाला मस्जिद के अन्दर आ रहा हो तो यह अल्लाह के हुक्म के ख़िलाफ़ है। चुनांचे आपने उस परनाले को तोड़ने का हुक्म दे दिया, और वह तोड़ दिया गया।

अब देखिए कि आपने उस परनाले को तोड़ने का जो हुक्म दिया है यह ग़ुस्से की वजह से तो दिया, और ग़ुस्सा इस बात पर आया कि यह काम मस्जिद के अहकाम और आदाब के ख़िलाफ़ है। जब हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु को पता चला कि मेरे घर का परनाला तोड़ दिया गया है तो हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के पास आए, उनसे फ़रमाया कि आपने यह परनाला क्यों तोड़ दिया? हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने फ़रमाया कि यह जगह तो मस्जिद की है, किसी की ज़ाती नहीं है। मस्जिद की जगह में परनाला आना शरीअत के हुक्म के ख़िलाफ़ था, इसलिये मैंने तोड़ दिया। हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया: आपको पता भी है कि यह परनाला यहां पर किस तरह लगा था? यह परनाला हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़माने में लगा था, और आपकी ख़ास इजाज़त से मैंने लगाया था। आप उसको तोड़ने वाले कौन होते हैं? हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया किः क्या हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इजाज़त दी थी? उन्होंने फ़रमाया कि हां! इजाज़त दी थी। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि ख़ुदा के लिए मेरे साथ आओ। चुनांचे उस परनाले की जगह के पास गए। वहां जाकर ख़ुद रुकू की हालत में खड़े हो गए और हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया कि अब मेरी कमर पर खड़े होकर यह परनाला दोबार लगाओ। हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मैं दूसरों से लगवा लूंगा। हज़रत फ़ारूके आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की यह मजाल कि वह मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लगाए हुए परनाले को तोड़े। मुझ से यह इतना बड़ा जुर्म सर्ज़द हुआ। इसकी कम से कम सज़ा यह है कि मैं रुकू में खड़ा होता हूं और तुम मेरी कमर पर खड़े होकर यह परनाला लगाओ। चुनांचे हज़रत अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु ने उनकी कमर पर खड़े होकर वह परनाला उसकी जगह पर लगा दिया। वह परनाला आज भी मस्जिदे नबवी में लगा हुआ है। अल्लाह तआला उन लोगों को जज़ाए ख़ैर दे, जिन लोगों ने मस्जिदे नबवी की तामीर की है, उन्होंने अब भी उस जगह पर परनाला लगा दिया है। अगरचे अब उस परनाले का बज़ाहिर कोई मस्रफ़ नहीं है, लेकिन यादगार के तौर पर लगा दिया है। यह हक़ीक़त में इस हदीस पर अमल है किः

"من احبَّ للہ وابغض للہ"

पहले जो गुस्सा और बुग्ज़ हुआ था वह अल्लाह के लिए हुआ था, और अब जो मुहब्बत है वह भी अल्लाह के लिए है। जो शख़्स यह काम कर ले उसने अपना ईमान कामिल बना लिया। यह ईमान के कामिल होने की निशानी है।

बनावटी गुस्सा करके डांट लें

बहर हाल! इस "अल्लाह के लिए नफ़रत" की वजह से भी कभी गुस्से का इज़हार करना पड़ता है। ख़ास तौर से उन लोगों पर इज़हार करना पड़ता है, जो ज़ेरे तर्बियत होते हैं। जैसे उस्ताद है, उसको अपने शागिर्द पर गुस्सा करना पड़ता है। बाप को अपनी औलाद पर गुस्सा करना पड़ता है, शैख़ को अपने मुरीदों पर गुस्सा करना पड़ता है। लेकिन यह गुस्सा इस हद तक होना चाहिए, जितना उसकी इस्लाह के लिए ज़रूरी हो। इस से आगे न बढ़ें। जैसा कि अभी अर्ज़ किया कि इसका तरीक़ा यह है कि जब इन्सान की तबीयत में इश्तिआल और उत्तेजना पैदा हो उस इश्तिआल और गुस्से के वक़्त डांट डपट और मार पीट न करे, बल्कि जब तबीयत में वह इश्तिआल और गुस्सा ख़त्म हो जाए, उस वक़्त मसनूई गुस्सा करके डांट डपट कर ले ताकि यह डांट डपट हद से आगे न हो। यह काम ज़रा मुश्किल है, क्योंकि इन्सान गुस्से के वक़्त बेक़ाबू हो जाता है। लेकिन जब तक इसकी मश्क़ नहीं करेगा उस वक़्त तक इस गुस्से की ख़राबियों और बुराइयों से नजात नहीं मिलेगी।

छोटों पर ज़्यादती का नतीजा

और फिर जो ज़ेरे तर्बियत अफ़राद होते हैं, जैसे औलाद, शागिर्द, मुरीद, उन पर गुस्से के वक़्त हद से आगे निकल जाए तो बाज़ सूरतों में यह बात बड़ी ख़तरनाक हो जाती है, क्योंकि जिस पर गुस्सा किया जा रहा है वह अगर आप से बड़ा है, या बराबर का है तो आपके गुस्सा करने के नतीजे में उसको जो नागवारी होगी उसका इज़हार भी कर देगा। और वह बता देगा कि तुम्हारी यह बात अच्छी नहीं लगी, या कम से कम बदला ले लेगा। लेकिन जो तुम्हारा मातहत और छोटा है वह तुम से बदला लेने पर तो क़ादिर नहीं, बल्कि अपनी नागवारी के इज़हार पर भी क़ादिर नहीं। चुनांचे कोई बेटा अपने बाप से, या शागिर्द उस्ताद से, या मुरीद अपने शैख़ से

यह नहीं कहेगा कि आपने फ़लां वक़्त जो बात कही थी वह मुझे नागवार हुई। इसलिये आपको पता नहीं चलेगा कि आपने उसका कितना दिल दुखाया है। और जब पता नहीं चलेगा तो माफ़ी मांगना भी आसान नहीं होगा। इसलिये यह बहुत नाज़ुक मामला है, और ख़ास तौर से जो छोटे बच्चों को पढ़ाने वाले उस्ताद होते हैं, उनके बारे में हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि उनका मामला बहुत ही नाज़ुक है, इसलिये कि वे ना बालिग़ हैं, और ना बालिग़ का मामला यह है कि अगर वह माफ़ भी कर दे तो माफ़ी नहीं होती। क्योंकि ना बालिग़ की माफ़ी मोतबर नहीं।

ख़ुलासा

बहर हाल, आजकी मज्लिस का ख़ुलासा यह है कि अपने ग़ुस्से पर क़ाबू पाने की कोशिश करनी चाहिए। इसलिये कि यह ग़ुस्सा बेशुमार बुराइयों की जड़ है, और इसके ज़रिये बेशुमार बातिनी बीमारियां पैदा होती हैं। इब्तिदा में तो यह कोशिश करे कि ग़ुस्से का इज़हार बिल्कुल न हो, बाद में जब यह ग़ुस्सा क़ाबू में आ जाए तो उस वक़्त यह देखे कि कहां ग़ुस्से का मौक़ा है, कहां ग़ुस्से का मौक़ा नहीं है। जहां ग़ुस्से का जायज़ महल और मौक़ा हो, बस वहां जायज़ हद तक ग़ुस्सा करे, इस से ज़्यादा न करे।

ग़ुस्से का ग़लत इस्तेमाल

जैसा कि अभी मैंने बताया कि अल्लाह के लिए तो ग़ुस्सा करना चाहिए। लेकिन बाज़ लोग इसका इन्तिहाई ग़लत इस्तेमाल करते हैं। चुनांचे ज़बान से तो यह कहते हैं कि हमारा यह ग़ुस्सा अल्लाह के लिए है, लेकिन हक़ीक़त में वह ग़ुस्सा नफ़सानियत और तकब्बुर और दूसरे की हक़ारत की वजह से होता है। जैसे जब अल्लाह तआला ने ज़रा सी दीन पर चलने की तौफ़ीक़ दे दी और दीन पर अभी चलना शुरू किया तो अब सारी दुनिया के लोगों को हक़ीर समझने लगे। मेरा बाप भी हक़ीर, मेरी मां भी हक़ीर, मेरा भाई भी हक़ीर, मेरी बहन

भी हक़ीर, मेरे सारे घर वाले हक़ीर हैं। उन सब को हक़ीर समझना शुरू कर दिया, और यह समझने लगा कि ये सब तो जहन्नमी हैं, मैं जन्नती हूं। और मुझे अल्लाह तआला ने इन जहन्नमियों की इस्लाह के लिए पैदा किया है। अब उनकी इस्लाह के लिए उन पर ग़ुस्सा करना और उनके लिए ना मुनासिब अल्फ़ाज़ का इस्तेमाल करना और उनका अपमान करना और उनके हुकूक़ ज़ाया करना शुरू कर दिया, और फिर शैतान यह सबक़ पढ़ाता है कि मैं जो कुछ कर रहा हूं यह बुग़्ज़ अल्लाह के लिए है। हालांकि हक़ीक़त में यह सब नफ़सानियत के तहत करता है।

चुनांचे जो लोग दीन पर नए नए चलने वाले होते हैं। शैतान उनको इस तरह बहकाता है कि उनको "बुग़्ज़ फ़िल्लाह" का सबक़ पढ़ा कर उनसे लड़ाइयां, झगड़े और फ़साद होते हैं। बात बात पर लोगों पर ग़ुस्सा करते हैं। बात बात पर लोगों को टोक देते हैं, इसके नतीजे में फ़साद फैल रहा है।

अल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रह. का एक जुम्ला

हज़रत अल्लामा शब्बीर अहमद उस्मानी रह्मतुल्लाहि अलैहि का एक जुम्ला हमेशा याद रखना चाहिए। वह फ़रमाया करते थे कि हक़ बात, हक़ नियत से, हक़ तरीक़े से कही जाए, तो वह कभी बे असर नहीं रहती, और कभी फ़ितना व फ़साद पैदा नहीं करती। गोया कि तीन शर्तें बयान फ़रमा दीं। नम्बर एक, बात हक़ हो, नम्बर दो नियत हक़ हो, नम्बर तीन तरीक़ा हक़ हो। जैसे एक शख़्स किसी बुराई के अन्दर मुब्तला है, अब उस पर तरस खाकर नर्मी, शफ़्क़त से उसको समझाए, ताकि वह इस बुराई से किसी तरह निकल जाए। यह नियत हो। अपनी बड़ाई मक़सद न हो, और दूसरों को ज़लील करना मक़सद न हो। और तरीक़ा भी हक़ हो। यानी नर्मी और मुहब्बत से बात कहे। अगर ये तीन शर्तें पाई जायें तो आम तौर पर फ़ितना पैदा

नहीं होता, और जहां कहीं यह देखो कि हक़ बात कहने के नतीजे में फ़ितना खड़ा हो गया तो ग़ालिब गुमान यह है कि इसका सबब यह है कि इन तीनों बातों में से कोई एक मौजूद नहीं थी। या तो बात हक़ नहीं, या नियत हक़ नहीं, या तरीक़ा हक़ नहीं था।

तुम ख़ुदाई फ़ौजदार नहीं हो

यह बात याद रखें कि तुम ख़ुदाई फ़ौजदार बन कर दुनिया में नहीं आए। तुम्हारा काम सिर्फ़ इतना है कि हक़ बात, हक़ नियत और हक़ तरीक़े से दूसरों को पहुंचाओ और मुनासिब तरीक़े से लगातार पहुंचाते रहो। इस काम से कभी मत उक्ताओ, लेकिन ऐसा काम मत करो जिस से फ़ितना पैदा हो।

अल्लाह तआला अपनी रहमत से और अपने फ़ज़्ल व करम से हम सब को इन बातों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

واٰخردعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

मोमिन एक आईना है

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

عن أبي هريرة رضي الله عنه قال: قال رسول الله صلى الله عليه وسلم:

المؤمن مرآة المؤمن۔ (ابوداؤد شریف)

एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है

हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है। यह हदीस अगरचे बहुत मुख़्तसर है और सिर्फ़ तीन अल्फ़ाज़ पर मुश्तमिल है। लेकिन इस हदीस में हमारे और आपके लिए तालीमात की एक दुनिया पोशीदा है। इस हदीस का ज़ाहिरी मतलब तो यह है कि जिस तरह इन्सान जब आईने के सामने खड़ा होता है तो उसको आईने के अन्दर अपनी शक्ल नज़र आती है, और वह आईना शक्ल व सूरत की तमाम अच्छाइयां और बुराइयां उस इन्सान को बता देता है, कि क्या अच्छाई है और क्या बुराई है। इसलिये कि बहुत सी बुराइयां ऐसी होती हैं कि जो इन्सान को खुद मालूम नहीं होतीं, लेकिन आईना बता देता है कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी है। जैसे अगर तुम्हारे चेहरे पर काला दाग़ लगा हुआ है तो वह आईना बता देगा कि तुम्हारे चेहरे पर काला दाग़ लगा हुआ है। इसी तरह एक मोमिन भी दूसरे मोमिन के लिए आईना है, कि अगर एक मोमिन में कोई ख़राबी या बुराई या ऐब है तो दूसरा मोमिन उसको बता देगा कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी या

बुराई है, तुम इसको दूर कर लो, इसकी इस्लाह कर लो। इस बताने के नतीजे में वह उस ख़राबी को दूरे करने की फ़िक्र में लग जाता है। यह है इस हदीस का मतलब, कि एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है।

तुम्हारी ग़लती बताने वाला तुम्हारा मोहसिन है

इस हदीस शरीफ़ में दोनों के लिए सबक़ है। जो शख़्स दूसरे के अन्दर ख़राबी देख कर उसको बता दे कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी है, उसके लिए भी सबक़ है, और जिसको बताया जा रहा है उसके लिए भी सबक़ है। इसलिये जिस शख़्स को यह बताया जा रहा है कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी है इसको दूर कर लो, उसके लिये इस हदीस में यह सबक़ है कि वह ख़राबी बताने वाले पर नाराज़ न हो, क्योंकि हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मोमिन को आईने से तश्बीह दी है, कि एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है। अगर कोई शख़्स आईने के सामने खड़ा हो जाए और आईना यह बता दे कि तुम्हारे चेहरे पर फ़लां क़िस्म का दाग़ धब्बा लगा हुआ है, उसको दूर कर लो तो वह शख़्स उस आईने पर नाराज़ नहीं होता, और उस पर ग़ुस्सा नहीं करता कि तुमने मुझे यह दाग़ धब्बा क्यों बता दिया। बल्कि वह शख़्स उस आईने का एहसान मन्द (आभारी) होता है कि अच्छा हुआ कि तुमने मेरे चेहरे का दाग़ बता दिया, अब मैं इसको साफ़ कर लूंगा। बिल्कुल इसी तरह एक मोमिन भी दूसरे मोमिन के लिए आईना है। अगर तुम्हारा एक मोमिन भाई तुम्हें बता रहा है कि तुम्हारे अन्दर यह बुराई या ऐब है, या तुम्हारी नमाज़ के अन्दर यह ग़लती है, या तुम्हारे मामलात में यह ग़लती है, तो तुम्हें उसके कहने का बुरा नहीं मानना चाहिए, और उस पर ग़ुस्सा नहीं करना चाहिए, कि उसने तुम्हें यह ऐब क्यों बता दिया। और उस पर नाराज़ नहीं होना चाहिए, बल्कि उसका एहसान मन्द होना चाहिए कि उसने तुम्हें तुम्हारी ग़लती बता दी। और यह कहना चाहिए कि अब इन्शा अल्लाह मैं अपनी इस्लाह की फ़िक्र

करूंगा, और इस ऐब को दूर करने की कोशिश करूंगा।

ग़लती बताने वाले उलमा पर एतिराज़ क्यों?

आजकल लोग उलमा-ए-किराम पर नाराज़गी का इज़हार करते हुए यह कहते हैं कि ये उलमा तो हर एक को काफ़िर और फ़ासिक़ बनाते रहते हैं। किसी पर कुफ़्र का फ़तवा लगा दिया, किसी पर फ़ासिक़ होने का फ़तवा लगा दिया। किसी पर बिद्अ़ती होने का फ़तवा लगा दिया। इनकी सारी उम्र इसी काम में गुज़रती है कि दूसरों को काफ़िर बनाते रहते हैं। इसके जवाब में हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि उलमा लोगों को काफ़िर बनाते नहीं हैं बल्कि बताते हैं। जब किसी शख़्स ने कुफ़्र का जुर्म किया, तो असल में तो ख़ुद उस शख़्स ने कुफ़्र का इर्तिकाब किया। उसके बाद उलमा-ए-किराम यह बताते हैं कि तुम्हारा यह अ़मल कुफ़्र है। जिस तरह आईना तुम्हें बताता है कि तुम बद सूरत हो, तुम्हारे चेहरे पर धब्बा लगा हुआ है। वह आईना बनाता नहीं और न दाग़ धब्बा लगाता है। इसी तरह उलमा-ए-किराम भी यह बताते हैं कि तुमने जो अ़मल किया है वह कुफ़्र का अ़मल है, या फ़िस्क़ का अ़मल है, या बिद्अ़त का अ़मल है। इसलिये जिस तरह आईने को बुरा भला नहीं कहा जाता और न आईने पर यह इल्ज़ाम लगाया जाता है कि आईने ने मेरे चेहरे पर दाग़ लगा दिया। बिल्कुल इसी तरह उलमा पर भी यह इल्ज़ाम नहीं लगाना चाहिए कि उन्होंने काफ़िर या फ़ासिक़ बना दिया। और उन पर नाराज़गी का इज़हार नहीं करना चाहिए। बल्कि उनका एहसान मानना चाहिए कि उन्होंने हमारा ऐब बता दिया। अब हम इसकी इस्लाह करेंगे।

डॉक्टर बीमारी बताता है, बीमार नहीं बनाता

जैसे कभी कभी एक इन्सान को अपनी बीमारी का इल्म नहीं होता कि मेरे अन्दर फ़लां बीमारी है। लेकिन जब वह किसी तबीब

और डॉक्टर के पास जाता है तो वह डॉक्टर बता देता है कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारी है। अब डॉक्टर को यह नहीं कहा जायेगा कि तुमने उस शख़्स को बीमार बना दिया। बल्कि यह कहा जायेगा कि जो बीमारी ख़ुद तुम्हारे अन्दर पहले से मौजूद थी और तुम उसकी तरफ़ से ग़ाफ़िल थे, डॉक्टर ने बता दिया कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारी है, इसका इलाज कर लो।

एक नसीहत भरा वाक़िआ

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपना यह वाक़िआ सुनाया कि एक बार मेरे वालिद माजिद (यानी मेरे दादा) बीमार थे। देवबन्द में क़ियाम था। उस वक़्त दिल्ली में एक नाबीना (अन्धे) हकीम बहुत मश्हूर थे, और बहुत क़ाबिल और माहिर हकीम थे, उनका इलाज चल रहा था। मैं देवबन्द से देहली गया ताकि वालिद साहिब का हाल बता कर दवा ले लूं। चुनांचे मैं उनके दवाख़ाने में पहुंचा और हज़रत वालिद साहिब का हाल बताया और कहा कि उनकी दवा दे दें। हकीम साहिब नाबीना थे। जब उन्होंने मेरी आवाज़ सुनी तो फ़रमाया कि मैं तुम्हारे वालिद साहिब की दवा तो बाद में दूंगा, पहले तुम अपनी दवा लो। मैंने कहा कि मैं तो ठीक ठाक हूं, कोई बीमारी नहीं है। हकीम साहिब ने फ़रमाया कि नहीं यह तुम अपनी दवा लो, सुबह यह खाना, दोपहर को यह खाना और शाम को यह खाना। और एक हफ़्ते के बाद आओ तो अपना हाल बयान करना। चुनांचे उन्होंने पहले मेरी दवा दी और फिर वालिद साहिब की दवा दी। जब मैं घर वापस आया तो वालिद साहिब को बताया कि हकीम साहिब ने इस तरह मुझे भी दवा दी है। वालिद साहिब ने फ़रमाया कि जिस तरह हकीम साहिब ने फ़रमाया है, उसी तरह करो, और उनकी दवा इस्तेमाल करो। जब एक हफ़्ता के बाद दोबारा हकीम साहिब के पास गया तो मैंने अर्ज़ किया कि हकीम साहिब! अब तक यह फ़ल्सफ़ा मेरी समझ में नहीं आया और न कोई बीमारी मालूम हुई। हकीम

साहिब ने फ़रमाया कि पिछले हफ़्ते जब तुम आए थे तो तुम्हारी आवाज़ सुन कर मुझे अन्दाज़ा हुआ कि तुम्हारे फेफड़ों में ख़राबी हो गई है, और अन्देशा है कि कहीं आगे चल कर टी. बी. की शक्ल इख़्तियार न कर ले। इसलिये मैंने तुम्हें दवा दी। और अब अल्हम्दु लिल्लाह तुम उस बीमारी से बच गए। देखिए! बीमार को पता नहीं है कि मुझे क्या बीमारी है। और इलाज करने वाले और डॉक्टर का यह बताना कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारी है, यह उसका एहसान है। इसलिये यह नहीं कहा जायेगा कि डॉक्टर ने बीमार बना दिया, बल्कि उसने बता दिया कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारी पैदा हो रही है, ताकि तुम इलाज कर लो। अब उस बातने की वजह से डॉक्टर पर गुस्सा करने और उस से नाराज़ होने की ज़रूरत नहीं।

बीमारी बताने वाले पर नाराज़ नहीं होना चाहिए

लेकिन बताने के तरीक़े मुख़्तलिफ़ होते हैं। किसी ने आपके ऐब और आपकी ख़राबी को अच्छे तरीक़े से बता दिया। और किसी ने बेढंगे तरीक़े से बता दिया। लेकिन अगर किसी ने आपकी बुराइयां ऐसे तरीक़े से आपको बताईं जो तरीक़ा मुनासिब नहीं था, तब भी उसने तुम्हारी एक बीमारी पर तुम्हें बा ख़बर किया। इसलिये तुम्हें उसका एहसान मानना चाहिए। अरबी के एक शेर का मफ़्हूम यह है कि "मेरा सब से बड़ा महबूब वह है जो मेरे पास मेरे ऐबों का हदिया पेश करे। जो मुझे बताए कि मेरे अन्दर क्या ऐब है। और जो शख़्स तारीफ़ कर रहा है कि तुम ऐसे और वैसे हो, और उसको बढ़ा चढ़ा रहा है, जिसके नतीजे में दिल में तकब्बुर और गुरूर पैदा हो रहा है, यह बज़ाहिर देखने में तो अच्छा मालूम हो रहा है, लेकिन हक़ीक़त में वह नुक़सान पहुंचा रहा है। लेकिन जो शख़्स तुम्हारे ऐबों को बयान कर रहा है उसका एहसान मानो। यह हदीस एक तरफ़ तो यह बता रही है कि अगर कोई शख़्स तुम्हें तुम्हारी ग़लती बताए तो उस पर नाराज़ होने के बजाए उसके बताने को अपने लिए ग़नीमत समझो, जिस तरह आईने के बताने को ग़नीमत समझते हो।

ग़लती बताने वाला लानत मलामत न करे

इस हदीस में दूसरा सबक़ ग़लती बताने वाले के लिए है। इसमें ग़लती बताने वाले को आईने से तश्बीह दी है। और आईने का काम यह होता है कि जब कोई शख़्स उसके सामने खड़ा होता है तो वह यह बता देता है कि तुम्हारे चेहरे पर इतना बड़ा दाग़ लगा हुआ है। और उस बताने में न तो वह कमी ज़्यादती करता है, और न उस शख़्स पर लानत मलामत करता है, कि यह दाग़ कहां से लगा लिया। बल्कि सिर्फ़ दाग़ बता देता है। इसी तरह ग़लती बताने वाला मोमिन भी आईने की तरह सिर्फ़ इतनी ग़लती और ऐब बताए कि जितना उसके अन्दर हक़ीक़त में मौजूद है। उसको बढ़ा चढ़ा कर न बताए और उस बताने में मुबालग़ा न करे। और इसी तरह सिर्फ़ उसको बता दे कि तुम्हारे अन्दर यह ऐब है। लेकिन उसको उसके ऐब पर लानत और मलामत शुरू कर दे और लोगों के सामने उसको ज़लील करना शुरू कर दे, यह मोमिन का काम नहीं है। इसलिये कि मोमिन तो आईने की तरह है। इसलिये उतनी ही ग़लती बताए जितनी उसके अन्दर है। और उस पर लानत मलामत न करे।

ग़लती करने वाले पर तरस खाओ

और जब एक मोमिन दूसरे मोमिन को ग़लती बताता है तो उस पर तरस खाता है, कि यह बेचारा इस ग़लती के अन्दर मुब्तला हो गया है। जिस तरह एक शख़्स बीमार है तो वह बीमार तरस खाने के लायक़ है। वह गुस्से का महल नहीं। कोई शख़्स उस बीमार पर गुस्सा नहीं करेगा कि तू क्यों बीमार हो गया, बल्कि उस पर तरस खायेगा और उसका इलाज करने का मश्विरा देगा। इसी तरह एक मोमिन ग़लती और गुनाह के अन्दर मुब्तला है तो वह तरस खाने के लायक़ है। वह गुस्सा करने का महल नहीं है। उसको प्यार से और नर्मी से बता दो कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी है, ताकि वह उसकी इस्लाह कर ले, उस पर गुस्सा या लानत मलामत मत करो।

ग़लती करने वाले को ज़लील मत करो

आजकल हमको इस बात का ख़्याल भी नहीं आता कि दूसरे मोमिन को उसकी ग़लती पर सचेत करना भी एक फ़रीज़ा है। अगर एक मुसलमान ग़लत तरीक़े से नमाज़ पढ़ रहा है और तुम्हें मालूम है कि यह तरीक़ा ग़लत है तो तुम पर फ़र्ज़ है कि उसको उस ग़लती के बारे में बता दो, इसलिये कि यह भी "अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर" (यानी अच्छाई का हुक्म करने और बुराई से रोकने) के अन्दर दाख़िल है, और यह हर आदमी पर फ़र्ज़ है। आजकल किसी को इस बात का एहसास भी नहीं होता कि उसको ग़लती बता दूं। बल्कि यह सोचता है कि ग़लत पढ़ रहा है तो पढ़ने दो। और अगर किसी को ग़लती बताने का एहसास भी होता है तो यह एहसास इतनी शिद्दत से होता है कि वह अपने आपको ख़ुदाई फ़ौजदार समझ बैठता है। चुनांचे जब वह दूसरों को उनकी ग़लती बताता है तो उन पर डांट डपट शुरू कर देता है। और उनको दूसरों के सामने ज़लील और रुस्वा करना शुरू कर देता है। हालांकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम आईना हो। तुम लानत मलामत और डांट डपट मत करो। न उसको ज़लील और रुस्वा करो। बल्कि उसको ऐसे तरीक़े से बताओ कि उसके दिल में तुम्हारी बात उतर जाए।

हज़राते हसनैन रज़ि. का एक वाक़िआ

वाक़िआ लिखा है कि एक बार हज़रत हसन और हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु दोनों ग़ालिबन दरिया-ए-फ़ुरात के किनारे से गुज़र रहे थे। उन दोनों ने देखा कि दरिया के किनारे एक बड़े मियां वुज़ू कर रहे हैं। लेकिन ग़लत तरीक़े से कर रहे हैं। उनको ख़्याल आया कि इनको ग़लती बताना चाहिए। इसलिये कि यह भी एक दीनी फ़रीज़ा है, कि दूसरों की ग़लती को बताया जाए। लेकिन वह बड़े हैं और हम छोटे हैं। चुनांचे दोनों ने मश्विरा किया, और

फिर दोनों मिल कर बड़े मियां के पास गए और जाकर बैठ गए। बातें करते रहे। फिर कहा कि आप हमारे बड़े हैं, हम जब वुज़ू करते हैं तो हमें शुबह रहता है कि मालूम नहीं कि हमारा वुज़ू सुन्नत के मुताबिक़ हुआ या नहीं? इसलिये हम आपके सामने वुज़ू करते हैं, आप ज़रा हमें देखें कि हमारे वुज़ू में कोई बात गलत और ख़िलाफ़े सुन्नत तो नहीं? अगर हो तो बता दीजियेगा। चुनांचे दोनों भाईयों ने उनके सामने वुज़ू किया। और फिर वुज़ू के बाद उनसे पूछा कि अब बताइये कि हमने इसमें ग़लती तो नहीं की? बड़े मियां को अपनी ग़लती का एहसास हुआ कि मैंने जिस तरीक़े से वुज़ू किया था वह ग़लत था, और इनका तरीक़ा सही है। बड़े मियां ने कहा कि बात असल में यह है कि मैंने ही ग़लत तरीक़े से वुज़ू किया था, अब तुम्हारे बताने से बात वाज़ेह हो गई। अब इन्शा अल्लाह सही तरीक़े से वुज़ू करूंगा। यह है वह तरीक़ा जिसका इस आयते करीमा में हुक्म दिया गया है कि:

"اُدْعُ اِلٰى سَبِيْلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ" (سورة النحل:١٢٥)

यानी अपने परवर्दिगार के रास्ते की तरफ़ हिक्मत से बुलाओ। तुम कोई ख़ुदाई फ़ौजदार नहीं हो कि तुम्हें अल्लाह तआला ने दारोग़ा बना दिया हो कि लोगों को डांटते फिरो और उनको ज़लील करते फिरो। बल्कि तुम आईना हो, और जिस तरह आईना सिर्फ़ हक़ीक़ते हाल बता देता है, डांट डपट और सख़्ती नहीं करता, इसी तरह तुम्हें भी करना चाहिए। यह सबक़ भी इस हदीस: "एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है" से निकल रहा है।

एक का ऐब दूसरे को न बताया जाए

हज़रत हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अलैहि ने इस हदीस के तहत एक नुक्ता यह बयान फ़रमाया है कि आईने का काम यह है कि जो शख़्स उसके समाने आयेगा और उसके ऊपर कोई ऐब होगा तो वह आईना सिर्फ़ उसी

शख़्स को बतायेगा कि तुम्हारे अन्दर यह ऐब है। वह आईना दूसरों से नहीं कहेगा कि फ़लां शख़्स में यह ऐब है। और न उस ऐब को दूसरों के सामने तश्हीर और चर्चा करेगा। इसी तरह मोमिन भी एक आईना है। जब वह दूसरे के अन्दर कोई ऐब देखे तो सिर्फ़ उसी को तन्हाई में ख़ामोशी से बता दे कि तुम्हारे अन्दर यह ऐब है, बाक़ी दूसरों से जाकर कहना कि फ़लां के अन्दर यह ऐब और यह ग़लती है, और उस ग़लती का दूसरों के सामने चर्चा करना, यह मोमिन का काम नहीं है। बल्कि यह तो नफ़्सानियत का काम है। अगर दिल में यह ख़्याल है कि मैं अल्लाह को राज़ी करने के लिए इसका यह ऐब बता रहा हूं, तो कभी भी वह शख़्स दूसरों के सामने उसका तज़्किरा नहीं करेगा। लेकिन अगर दिल में नफ़्सानियत होगी तो वहां यह ख़्याल आयेगा कि मैं उस ऐब की वजह से उसको ज़लील और रुस्वा करूं। जब कि मुसलमानों को ज़लील और रुस्वा करना हराम है।

हमारा तरीक़ा-ए-अमल

आज हम अपने समाज में ज़रा जायज़ा लेकर देखें तो ऐसे लोग बहुत कम नज़र आयेंगे जो दूसरों की ग़लती देख कर उनको ख़ैर ख़्वाही से बता दें कि तुम्हारी यह बात मुझे पसन्द नहीं आई, या यह बात शरीअ़त के ख़िलाफ़ है। लेकिन उसकी ग़लती का तज़्किरा मज्लिसों में करने वाले बेशुमार नज़र आयेंगे। जिसके नतीजे में ग़ीबत के गुनाह में मुब्तला हो रहे हैं। झूठ घड़ने और बोहतान के गुनाह में मुब्तला हो रहे हैं। मुबालग़ा और झूठ का गुनाह हो रहा है। और एक मुसलमान को बदनाम करने का गुनाह हो रहा है। इसके बजाए बेहतर तरीक़ा यह था कि तन्हाई में उसको समझा देते कि तुम्हारे अन्दर यह ख़राबी है, इसको दूर कर लो। इसलिये जब किसी मुसलमान भाई के अन्दर कोई ऐब देखो तो दूसरों से मत कहो, बल्कि सिर्फ़ उस से कहो। यह सबक़ भी इसी हदीस "एक मोमिन दूसरे मोमिन के लिए आईना है" से निकल रहा है।

ग़लती बताने के बाद मायूस होकर मत बैठो

इस हदीस से एक सबक़ यह मिल रहा है कि आईने का काम यह है कि जो शख़्स उसके सामने आकर खड़ा होगा तो वह आईना उस शख़्स का ऐब और ग़लती बता देगा कि तुम्हारे अन्दर यह ऐब है। अगर दूसरी बार वह शख़्स आईने के सामने आयेगा तो वह दूसरी बार बता देगा। जब तीसरी बार आयेगा तो तीसरी बार बता देगा। लेकिन वह आईना तुम्हारे पीछे नहीं पड़ेगा कि अपना यह ऐब ज़रूर दूर करो। अगर वह शख़्स अपना वह ऐब दूर न करे तो वह आईना रूठ कर और थक हार कर अलग होकर नहीं बैठ जायेगा कि तुम अपना यह ऐब दूर क्यों नहीं कर रहे हो, इसलिये अब मैं नहीं बताऊंगा। बल्कि वह शख़्स जितनी बार भी उस आईने के सामने आयेगा वह आईना ज़रूर बतायेगा कि यह ऐब अब भी मौजूद है। वह बताने से बाज़ नहीं आयेगा और बद-दिल भी नहीं होगा। और दारोग़ा बन कर यह नहीं कहेगा कि यह शख़्स जब तक अपना ऐब दूर नहीं करेगा उस वक़्त तक इस से ताल्लुक़ात नहीं रखूंगा।

अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम का तरीक़ा-ए-अ़मल

यही अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम का तरीक़ा है कि वह बद-दिल होकर और हार कर नहीं बैठ जाते। बल्कि जब भी मौक़ा मिलता है अपनी बात कहे जाते हैं। लेकिन अपने आपको दारोग़ा नहीं समझते। कुरआने करीम में फ़रमायाः

"لَسْتَ عَلَيْهِمْ بِمُصَيْطِرٍ" (سورة الغاشية:٢٢)

यानी आपको दारोग़ा बनाकर नहीं भेजा गया। बल्कि आपका काम सिर्फ़ पहुंचा देना है। बस जो ग़लती करे उसको बता दो और उसको मुतनब्बह (सचेत) कर दो। अब उसका काम यह है कि वह अ़मल करे। और अगर वह अ़मल नहीं करता तो दोबारा बता दो। तीसरी बार बता दो। लेकिन मायूस होकर और नाराज़ होकर न बैठ जाओ कि यह शख़्स मानता ही नहीं, अब इसको क्या बताएं। हुज़ूरे

अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम चूंकि उम्मत पर बहुत ज़्यादा मेहरबान थे, इसलिये जब कुफ़्फ़ार और मुश्रिकीन आपकी बात नहीं मानते थे तो आपको सख़्त सदमा होता था, उस पर क़ुरआने करीम में यह आयत नाज़िल हुई:

"لَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ أَلَّا يَكُونُوا مُؤْمِنِينَ" (الشعراء:٣)

क्या आप अपनी जान को हलाकत में डाल देंगे इस सदमे की वजह से कि वे ईमान क्यों नहीं लाते। आपका यह फ़रीज़ा नहीं है। आपका काम सिर्फ़ बात को पहुंचा देना है, मानने या न मानने की ज़िम्मेदारी आप पर नहीं।

यह काम किसके लिए किया था?

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि दावत व तब्लीग़ करने वाले और "अम्र बिल मारूफ़ और नही अनिल मुन्कर" (यानी अच्छाई का हुक्म करने और बुराई से रोकने का काम) करने वाले का काम यह है कि वह अपने काम में लगा रहे। लोगों के न मानने की वजह से छोड़ कर न बैठ जाए। मायूस होकर, या नाराज़ होकर या ग़ुस्सा होकर न बैठ जाए, कि मैंने तो बहुत समझाया लेकिन उन्होंने मेरी बात नहीं मानी, इसलिये अब मैं नहीं कहूंगा। ऐसा न करे, बल्कि यह सोचे कि मैंने यह काम किसके लिए किया था? अल्लाह को राज़ी करने के लिए किया था। आगे भी जितनी बार करूंगा अल्लाह को राज़ी करने के लिए करूंगा। और हर बार मुझे कहने का अज्र व सवाब मिल जायेगा। इसलिये मेरा तो मक़सद हासिल है। अब वह मान रहा है या नहीं मान रहा है, इस से मेरा बराहे रास्त कोई ताल्लुक़ नहीं है। वह तो अल्लाह तआला का मामला है कि अल्लाह तआला किसको हिदायत देते हैं और किसको हिदायत नहीं देते।

माहौल की दुरुस्त करने का बेहतरीन तरीक़ा

हक़ीक़त यह है कि एक मोमिन इख़्लास के साथ बात कहता है

और बार बार कहता है, और साथ साथ अल्लाह तआला से दुआ भी करता है कि या अल्लाह! मेरा फ़लां भाई इस गुनाह के अन्दर मुब्तला है, उसको हिदायत अ़ता फ़रमा, और उसको सीधे रास्ते पर लगा दे। जब ये दो काम करता है तो उमूमन अल्लाह ऐसे मौक़े पर हिदायत अ़ता फ़रमा ही देते हैं। अगर हम यह काम करते रहें तो यह वह काम है कि इसकी बर्कत से सारा माहौल ख़ुद बख़ुद सुधर सकता है। मेरे वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि यह ख़ुदकार यानी आटोमैटिक निज़ाम है, कि अगर एक मोमिन दूसरे मोमिन को इन शर्तों और आदाब के साथ उसकी ग़लतियों पर टोकता रहे तो इसके ज़रिये अल्लाह तआ़ला इस्लाह फ़रमा देते हैं।

ख़ुलासा

बहर हाल, इस हदीस में यह जो फ़रमाया कि एक मोमिन दूसरे मोमिन का आईना है। इस से यह सबक़ मिला कि मोमिन का काम बार बार बता देना है, और न मानने की सूरत में सदमा और ग़म करना या हार मान कर बैठ जाना मोमिन का काम नहीं। और हक़ीक़त यह है कि जब एक मोमिन इख़्लास के साथ बात कहता है और बार बार कहता है तो एक न एक दिन उसका कहना रंग लाता है। इसलिये तुम आईना बन कर काम करो। और जब दूसरा शख़्स आईना बन कर काम करे और तुम्हारी कोई ग़लती बताए तो तुम रंजीदा और नाराज़ मत होना। अल्लाह तआ़ला हम सब को इन बातों पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

واخردعوانا ان الحمد للہ رب العالمین

अ़र्ज़े नाशिर

हज़रत मौलाना मुहम्मद तक़ी साहिब मद्दज़िल्लहुम ने तिर्मिज़ी शरीफ़ के दर्स के इफ़्तिताह के मौक़े पर दौरा-ए-हदीस के तलबा के सामने एक इफ़्तिताही तक़रीर फ़रमाई, जिसमें इल्मे हदीस की फ़ज़ीलत और अहमियत के बयान के साथ इस बात को तफ़सील और वज़ाहत के साथ बयान फ़रमाया कि कोई इल्म, कोई फ़न उस्ताद के बग़ैर हासिल नहीं हो सकता। चाहे वह दुनिया का मामूली फ़न ही क्यों न हो। सिर्फ़ किताबें पढ़ कर और मुताला करके उस फ़न में कमाल और महारत हासिल नहीं हो सकती। सिर्फ़ मुताले के ज़ोर पर न कोई शख़्स मुस्तनद आ़लिमे दीन बन सकता है, न डॉक्टर बन सकता है और न इन्जीनियर बन सकता है। दौरा-ए-हदीस के तालिबे इल्म मुहम्मद तय्यिब अटकी ने यह तक़रीर टेप रिकॉर्डर के ज़रिये क़लम बन्द की, जो पाठकों की ख़िदमत में पेश है।

नाशिर

दो सिलसिले

अल्लाह की किताब और अल्लाह के पैग़म्बर

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنْ لَّا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَنَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَاوَسَنَدَنَاوَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَ اَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا كَثِيْرًا، اَمَّا بَعْدُ:

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ، بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ.

"لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اِذْ بَعَثَ فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْ اَنْفُسِهِمْ يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِهٖ وَيُزَكِّيْهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ" (آل عمران ١٦٤)

दो सिलसिले

अल्लाह तआला ने इन्सानों की इस्लाह के लिए दो सिलसिले एक साथ जारी फ़रमाए, एक किताबुल्लाह का सिलसिला। किताबुल्लाह, अल्लाह की आसमानी किताबें हैं, यानी तौरात, ज़बूर, इन्जील और आख़िर में क़ुरआने करीम नाज़िल फ़रमाया।

और दूसरा सिलसिला रिजालुल्लाह का जारी फ़रमाया, रिजालुल्लाह से मुराद अंबिया अलैहिमुस्सलाम का सिलसिला है। ये अल्लाह के पैग़म्बर अल्लाह की किताब के साथ साथ भेजे गए ताकि वे किताब की तश्रीह और ख़ुलासा करें, और उसकी अ़मली तर्बियत दें, और किताब के मायने और मतलबों को अपने क़ौल व फ़ेल से समझाएं। इस सिलसिले में हज़राते अंबिया अलैहिमुस्सलाम भेजे जाते हैं। क़ुरआने करीम में अल्लाह तआला ने फ़रमायाः

"وَاَنْزَلْنَا اِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ اِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُوْنَ" (النحل:٤٤)

हमने यह ज़िक्र इसलिये नाज़िल किया ताकि आप लोगों के सामने खोल खोल कर बयान कर दें, जो कुछ कि नाज़िल किया जाता है।

पैग़म्बर इसलिये भेजे जाते हैं ताकि किताब की तशरीह करें, तफ़सीर करें और लोगों की तर्बियत करें, इसी के बारे में फ़रमाया है:

"لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اِذْ بَعَثَ فِيْهِمْ رَسُوْلًا مِّنْ اَنْفُسِهِمْ يَتْلُوْا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِهٖ وَيُزَكِّيْهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ"

किसी भी पैग़म्बर के दुनिया में आने का बुनियादी मक़सद किताब की तालीम होता है, इसलिये कि मुअल्लिम की रहनुमाई और खोल कर बयान किए बग़ैर हम इस किताब से फ़ायदा उठाने की अहलियत नहीं रखते।

उस्ताद के बग़ैर सिर्फ़ मुताला काफ़ी नहीं। और यह सिर्फ़ अल्लाह तआला की किताब के साथ ही ख़ास नहीं, दुनिया के हर इल्म व फ़न का यही हाल है। कोई शख़्स अगर यह चाहे कि मैं सिर्फ़ किताब पढ़ कर, मुताला करके किसी फ़न का माहिर बन जाऊं, वह नहीं बन सकता, जब तक कि किसी उस्ताद के सामने शागिर्दी इख़्तियार न करे। जब तक उस्ताद से उस इल्म व फ़न को हासिल न करे, उस वक़्त तक उस इल्म व फ़न का माहिर नहीं बन सकता।

क़ब्रिस्तान आबाद करेगा

इल्मे तिब (मैडिकल साइन्स) एक ऐसा इल्म है इसकी किताबें छपी हुई हैं, हर ज़बान में मौजूद हैं। उर्दू, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी लेकिन कोई शख़्स यह चाहे कि घर बैठे तिब की किताब पढ़ूं और मैं उसका मुताला करके तबीब और डॉक्टर बन जाऊं, अगर मान लीजिए वह बड़ा ज़हीन है, बहुत समझदार है, कुव्वते मुताला बहुत मज़बूत है, क़ाबलियत बहुत आला है और उसने मुताला शुरू कर दिया और उन किताबों को समझ भी गया और समझने के बाद लोगों

का इलाज शुरू कर दिया, वह क्या करेगा? वह क़ब्रिस्तान आबाद करेगा। इस वास्ते कि बावजूद इसके कि उसने किताबें समझ भी लीं, लेकिन किसी उस्ताद से, मुअ़ल्लिम और मुरब्बी से उसकी तर्बियत हासिल न की तो वह तबीब नहीं बनेगा, न पूरी दुनिया में कोई हुकूमत ऐसे शख़्स को यह इजाज़त देगी कि वह इन्सानों की ज़िन्दगियों से खेले, इसलिये कि उसने वह तरीक़ा इख़्तियार नहीं किया जो तबीब के लिए ज़रूरी है। इसलिये इन्सान की फ़ितरत अल्लाह तबारक व तआ़ला ने यह रखी है कि जब तक उसको कोई तर्बियत देने वाला तर्बियत न दे, कोई तालीम देने वाला तालीम न दे, उसको कोई इल्म व फ़न और कोई हुनर ख़ुद से हासिल नहीं होगा।

इन्सान और जानवर में फ़र्क़

अल्लाह तआ़ला ने जानवरों और इन्सानों में थोड़ा सा फ़र्क़ रखा है, वह यह कि जानवरों को मुअ़ल्लिम व मुरब्बी की इतनी ज़रूरत नहीं होती जितनी इन्सान को ज़रूरत है। जैसे मछली का बच्चा पानी के अन्दर मछली के अन्डे से निकला और निकलते ही उसने तैरना शुरू कर दिया। पानी में उसको तैराकी सिखाने के लिए किसी मुअ़ल्लिम व मुरब्बी की ज़रूरत नहीं होती। पैदाइशी तौर पर उसकी फ़ितरत ऐसी बना दी कि उसको तैरना सीखने के लिए किसी दूसरे की तालीम व तर्बियत की ज़रूरत नहीं।

लेकिन कोई इन्सान यह सोच कर कि मछली का बच्चा बग़ैर किसी तालीम व तर्बियत के पानी में तैर रहा है, मज़े में है, मैं भी अपने बच्चे को तैराकी सिखाए बग़ैर पानी में फेंक दूं, तो वह शख़्स अहमक़ होगा कि नहीं? अरे इन्सान का बच्चा कहां और मछली का बच्चा कहां? उसके लिए अल्लाह तआ़ला ने तालीम व तर्बियत की ज़रूरत नहीं रखी। लेकिन तू इन्सान है, इन्सान को तैराकी सीखने के लिए किसी मुअ़ल्लिम व मुरब्बी की ज़रूरत है। या जैसे मुर्ग़ी का बच्चा अन्डे से निकला और निकलते ही उसने दाना चुगना शुरू कर

दिया, उसको दाना खिलाने के लिए किसी मुअ़ल्लिम व मुरब्बी की हाजत नहीं, लेकिन इन्सान का जो बच्चा आज पैदा हुआ वह रोटी नहीं खायेगा। इस वास्ते कि उसको रोटी खिलाने के लिए किसी मुअ़ल्लिम व मुरब्बी की हाजत और ज़रूरत है। जब तक उसको कोई खिलाने वाला खाना सिखायेगा नहीं, उसको एक अ़मली नमूना पेश नहीं करेगा उस वक़्त तक उसको खाना नहीं आएगा। इन्सान की फ़ितरत अल्लाह तआ़ला ने यह रखी है कि वह बग़ैर मुअ़ल्लिम व मुरब्बी के दुनिया का कोई इल्म व फ़न और हुनर नहीं सीख सकता।

किताब पढ़ कर अलमारी बनाइये

बढ़ई का काम है। किताब के अन्दर सब कुछ लिखा है, कि किस तरह मेज़ बनती है, किस तरह कुर्सी बनती है, और क्या क्या आलात उसमें इस्तेमाल होते हैं। किताब सामने रखो और अलमारी बनाओ, क्या उसके तरीक़ों को देख कर अलमारी बन जायेगी? हरगिज़ नहीं। किताब कुछ न पढ़ो, लेकिन एक बढ़ई की सोहबत उठा लो, और उसके पास दो चार महीने बैठ जाओ, उसको देखो कि वह कैसे बनाता है, वह आलात किस तरह इस्तेमाल करता है तो असानी से अलमारी बनानी आ जायेगी।

किताब से बिरयानी नहीं बनती

और मैं कहा करता हूं कि खाना पकाने की किताबें छपी हुई हैं। खाना कैसे पकता है, पुलाव कैसे पकता है, बिरयानी कैसे पकती है, क़ोरमा कैसे पकता है, कबाब कैसे पकते हैं, सब तरकीब लिखी होती है, कि इसको इतना पीसो, इस तरह उसको बनाओ, उसमें इतना नमक और इतनी मिर्च इतना पानी और इतनी फ़लां चीज़ डाल दो, सब सामान उस किताब में लिखे होते हैं। अब अगर एक शख़्स जिसने कभी पकाया नहीं, वह किताब सामने रख ले, जो तरीक़ा उसमें लिखा है उसके मुताबिक़ बिरयानी बनाए, उसको देख देख कर उतने चावल ले लिए, इतना पानी डाल दिया, इतनी आग लगा दी

और बनाने लग जाइए, क्या बिरयानी बन जायेगी? खुदा जाने क्या मलगूबा तैयार होगा। क्यों? इस वास्ते कि किताब से बिरयानी नहीं बनती, जब तक कि किसी बावर्ची ने उसको सिखाया न हो।

इन्सान को अमली नमूने की ज़रूरत है

बहर हाल! यह इन्सान की फ़ितरत है कि महज़ किताब से कोई शख़्स इल्म व हुनर हासिल नहीं कर सकता, जब तक कि मुअ़ल्लिम व मुरब्बी (सिखाने वाले और तरबियत देने वाले) की तर्बियत न पाई हो, उसकी सोहबत हासिल न की हो। सारी दुनिया के उलूम व फ़ुनून में यही तरीक़ा जारी है। जिस तरह उलूम व फ़ुनून में यह तरीक़ा और परम्परा है इसी तरह दीन में भी कोई शख़्स यह चाहे कि मैं तन्हा किताब पढ़ कर उस से दीन सीख लूं, याद रखो ज़िन्दगी भर नहीं हासिल कर सकता। जब तक किसी मुअ़ल्लिम व मुरब्बी से तर्बियत हासिल न की हो, उसकी सोहबत न पाई हो। उसका अ़मली नमूना न देखा हो, उस वक़्त तक इल्मे दीन हासिल नहीं होगा।

तन्हा किताब नहीं भेजी गई

यही राज़ है इस बात का कि अल्लाह तआ़ला ने तन्हा किताब कभी नहीं भेजी। ऐसी मिसालें मौजूद हैं कि अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम आए और कोई किताब नहीं आई, लेकिन ऐसी एक भी मिसाल नहीं कि किताब आई हो और साथ में कोई नबी न आया हो, क्यों?

इसलिये कि अगर तन्हा किताब दी जाती तो इन्सान के अन्दर इतनी क़ाबलियत नहीं थी कि उस किताब के ज़रिये इस्लाहे नफ़्स करे, जब कि अल्लाह तआ़ला के लिए तन्हा किताब भेजना कोई मुश्किल नहीं था। दूसरी तरफ़ मुश्रिकीन का मुतालबा भी था कि:

"لَوْ لَا نُزِّلَ عَلَيْهِ الْقُرْاٰنُ جُمْلَةً وَّاحِدَةً" (الفرقان:٣٢)

कि हमारे ऊपर एक ही बार में क़ुरआन क्यों नाज़िल नहीं किया गया। क्या अल्लाह तआ़ला के लिए कोई मुश्किल काम था कि सुबह

को जब बेदार हों तो हर एक आदमी के सरहाने एक शानदार जिल्द में मुजल्लद कुरआने करीम का नुस्ख़ा रखा हुआ हो, और आसमान से आवाज़ आ जाए कि यह किताब है, इस पर अमल करो। क्या यह काम अल्लाह तआला के लिए मुश्किल था? मुश्किल नहीं था, लेकिन अल्लाह तआला ने यह काम नहीं किया, किताब तन्हा नहीं भेजी, मुअल्लिम भी साथ भेजा, तर्बियत देने वाला भी भेजा, क्यों?

किताब पढ़ने के लिए दो नूरों की ज़रूरत

इसलिये कि किताब उस वक़्त तक समझ में नहीं आयेगी जब तक कि पैग़म्बर की तालीमात का नूर साथ नहीं होगा। किताब तो मौजूद है, बड़ी फ़सीह व बलीग़ भी है, लेकिन मैं अन्धेरे में बैठा हूं मेरे पास रोशनी नहीं है। क्या मैं उस किताब से फ़ायदा उठा सकता हूं? नहीं! जब तक मेरे पास दो नूर न हों, एक तो मेरे पास आंख का नूर होना चाहिए, दूसरा बाहर सूरज या बिजली की रोशनी होनी चाहिए। अगर इनमें से एक नूर भी नदारद हो तो किताब से फ़ायदा नहीं उठा सकता। जैसे बाहर सूरज की रोशनी है। सूरज निकला हुआ है और आंख में नूर नहीं है तो क्या मैं किताब पढ़ सकूंगा?

या जैसे आंख में नूर है लेकिन बाहर नूर नहीं है। न सूरज की रोशनी, न चिराग़ की, न बिजली की रोशनी, क्या मैं किताब पढ़ सकूंगा? नहीं, इसलिये कि किताब को पढ़ने के लिए दो नूरों की ज़रूरत है, एक अपने अन्दर का नूर और एक बाहर सूरज या बिजली का नूर। एक दाख़ली नूर और एक ख़ारजी नूर। दोनों नूर जब होंगे जब किताब से फ़ायदा उठाया जा सकेगा। इसलिये अल्लाह तआला ने दो सिलसिले जारी फ़रमाए, एक अल्लाह की किताब का, और दूसरे अल्लाह वालों का।

हस्बुना किताबुल्लाह का नारा

यहीं से सारी गुमराहियां पैदा होती हैं। चुनांचे एक फ़िर्क़ा है, उसने कहाः

"حَسْبُنَا كِتَابُ اللهِ"

यह बड़ा दिलकश नारा लगाया कि हमें तो अल्लाह तआला की किताब काफ़ी है। ज़ाहिर है कि देखने में तो बड़ी अच्छी बात मालूम होती है। अल्लाह की किताब में हर चीज़ का बयान है। लेकिन यह नारा लगाने वालों से पूछो कि तिब के फ़न की किताब घर में मौजूद है, जिसमें तिब के मज़मून हैं, लेकिन उसके पास उस्ताद की तालीम का नूर न हो तो यह कितबा बेकार होगी। इसी तरह सिर्फ़ अल्लाह की किताब को लेकर यह कहना कि हमें पैग़म्बर की तालीमात की हाजत नहीं। अल्लाह की पनाह, यह अन्धापन और गुमराही है।

बहर हाल एक गिरोह तो वह है जो किताब को चिमट गया और अल्लाह के आदमियों यानी अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम को छोड़ दिया। और गुमराही के गढ़े में गिरा। हक़ीक़त में अल्लाह के आदमियों को छोड़ने से किताब को छोड़ दिया, क्योंकि ख़ुद किताब कह रही है कि हमारे रिजाल (आदमियों) को देखो हमने उनको मुअ़ल्लिम बनाकर भेजा है। हमने उनको नबी बनाकर भेजा। जो शख़्स यह कहता है कि मैं किताब को पकड़ता हूं और रिजाल (आदमियों) को छोड़ता हूं वह हक़ीक़त में किताब ही को नहीं पकड़ता। तिब की किताबों में यह भी लिखा हुआ होता है कि "बग़ैर तबीब के मश्विरे के दवाएं मत खाना" अब अगर उस किताब को पढ़ कर वह बात भूल गए और सारी किताबें पढ़ीं जिसमें हर बीमारी और उसकी दवा लिखी है और अपनी मर्ज़ी से अपना इलाज शुरू कर दिया। नतीजा क्या निकलेगा? कि कल के बजाए आज ही मरेगा। ऐसा ही मामला है उन लोगों का जो "हस्बुना कितबुल्लाह" का नारा लगा कर रिजालुल्लाह (अल्लाह के पैग़म्बरों) से लोगों को बर्गश्ता करते हैं।

सिर्फ़ शख़्सियतें भी काफ़ी नहीं

दूसरे गुमराह वे हैं कि जो शख़्सियतों में ऐसे गुम हुए कि किताब को पीठ पीछे डाल दिया, और यह कहने लगे कि हमें तो शख़्सियात

काफ़ी हैं, हम नहीं जानते कि अल्लाह की किताब क्या होती है, और बस जो शख़्सियतें अपने मतलब की समझ में आईं, उनको अपना मुक़्तदा बना लिया, उनकी परस्तिश शुरू कर दी। यह न देखा कि किताब ने क्या कहा था, सिर्फ़ रिजालुल्लाह को पकड़ कर बैठ गए। अल्लाह की किताब को छोड़ दिया। ये दूसरी गुमराही में दाख़िल हैं।

सही रास्ता

दरमियानी राह और सही रास्ता यह है कि अल्लाह की किताब को भी पकड़ो और अल्लाह के रिजाल (यानी पैग़म्बरों और अल्लाह वालों) को भी पकड़ो, अल्लाह की किताब को अल्लाह के पैग़म्बरों की तालीम व तर्बियत की रोशनी में पढ़ो तो हिदायत का रास्ता पा लोगे। दोनों चीज़ों को जमा करने के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हदीस में इशारा फ़रमाया है कि:

"ما انا علیه واصحابی"

"मा अ–न अ़लैहि" से मुराद किताब और "असहाबी" से रिजालुल्लाह। यानी यह किताब जिस पर मैं हूं इसको पकड़ लेना और मेरे असहाब को पकड़ लेना। जो शख़्स दोनों चीज़ें एक साथ लेकर चलेगा तब हिदायत पायेगा। यह बात अच्छी तरह ज़ेहन में बैठा ली जाए तो आपकी फ़न्नी, नज़रियाती और अ़मली गुमराहियों का रास्ता बन्द हो जाए। जितने लोग किताबों का मुताला कर करके दीनी रहनुमा बन गए। किताबों का मुताला कर लिया तो कह दिया कि हम भी इमाम अबू हनीफ़ा हैं, और नारा लगा दिया कि:

"هم رجال ونحن رجال"

हम भी इन्सान और वे भी इन्सान, और मैं भी वही काम करूंगा जो वे कर रहे थे। उन्होंने जिस तरह क़ुरआन व हदीस से इज्तिहाद करके मसाइल बताए, मैं भी बताऊंगा, तो हक़ीक़त में यह शख़्स गुमराह है, और उसकी मिसाल तो ऐसी है जैसे एक छोटा बच्चा खड़ा हो और डॉक्टरों के बारे में यह कहे कि:

"هم رجال ونحن رجال"

कि वे डॉक्टर हमारी तरह का इन्सान है, वह अगर आप्रेशन करता है, तो मैं भी करूंगा। वह अगर लोगों को काटता है तो मैं भी काटूंगा। अरे अहमक़ वह तो काटता है सेहत हासिल करने के लिए। तरीक़े से काटता है, तू काटेगा तो ज़िबह करेगा। लेकिन नारा यह भी लगा रहा है किः

"هم رجال ونحن رجال"

तो अल्लाह के पैग़म्बरों को छोड़ कर जो नारे आजकल लगते हैं, मुताले के बल पर और उस्तादं से पढ़े और सीखे बग़ैर दीन को हासिल करने का दावा भी करते हैं, वे हक़ीक़त में तीसरी गुमराही में हैं।

अगर मान लीजिए ऐसा आदमी जो ज़हीन है, उसने तिब की किताब का मुताला किया, उसमें लिखा है कि फ़लां बीमारी का इलाज यह होता है, फ़लां बीमारी का यह इलाज है, और उसके बाद उसने अपना दवाख़ाना खोल लिया, और दस आदमियों का इलाज किया, उनको फ़ायदा हो गया, अब लोग कहने लगे कि इसके इलाज में बड़ा फ़ायदा होता है। यह तो बड़ा ज़बरदस्त डॉक्टर है। लोग उसके पीछे लग गए, लेकिन लोगों को यह मालूम नहीं कि दस आदमियों को अगर फ़ायाद हुआ तो वह फ़ायदा एक तरफ़, अगर एक जान चली गई तो वह नुक़सान एक तरफ़। कल को वह अनाड़ी पन में कोई ऐसा काम करेगा जो उसकी जान ले बैठेगा। इसलिये सिर्फ़ यह देख किर कि दस आदमियों को फ़ायदा पहुंचा, किसी अनाड़ी, किसी ग़ैर माहिर, किसी ग़ैर तर्बियत याफ़्ता शख़्स के पीछे लग जाना अक़्ल मन्दी नहीं है। क्यों? इसलिये कि हर वक़्त ख़तरा है कि कब गड़बड़ कर जाए और किसी इन्सान की जान ले बैठे। बड़े नारे लगते हैं कि साहिब फ़लां की किताब पढ़ कर लोग बड़े दीन पर आ गए, पहले बेदीन थे, अब दीनदार हो गए, नमाज़ नहीं पढ़ते थे, अब नमाज़ पढ़ते हैं। अल्लाह से ग़ाफ़िल थे, अब अल्लाह के क़रीब आ गए, वह

तो आदमी अच्छा है। यह मौलवी लोग बिला वजह कहते हैं कि उसके पीछे मत जाओ, उसकी किताब मत पढ़ो। अरे भाई! हमने देखा, किताबें पढ़ीं, बहुत फ़ायदा हुआ। बात असल में यह है कि इसकी मिसाल वही है जो मैंने दी है कि एक आदमी ग़ैर तर्बियत याफ़्ता तिब की किताबों का मुताला करके आए, आठ दस अदमियों का इलाज कर लिया, उनको फ़ायदा हो गया, तो इस से यह लाज़िम नहीं आता कि यह डॉक्टर बन गया और उसके नतीजे में लोगों को कह दिया कि तुम उस से इलाज कराया करो। क्यों? इसलिये कि वह किसी वक़्त गड़बड़ करेगा और तुम्हारी जान ले लेगा। इसी तरह यह शख़्स भी जो सिर्फ़ किताबें पढ़ कर लोगों को दीन सिखा रहा है और लोगों को उस से फ़ायदा हो रहा है, उसके फ़ायदे से धोखे में न आना चाहिए। इसलिये कि किसी भी वक़्त कोई बात ऐसी करेगा जिस से तुम्हारा दीन ख़राब हो जायेगा।

सहाबा-ए-किराम रज़ि. ने यह दीन किस तरह सीखा?

इस दीन की अल्लाह ने फ़ितरत यह बनाई है कि यह सीना ब-सीना आगे मुन्तक़िल होता है। यह आंख से किताब को पढ़ कर लेने से नहीं आता, पढ़ाने वाले के सीने से पढ़ने वाले के सीने में मुन्तक़िल होता है। क्या हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने कोई किताब पढ़ी? कोई डिग्री ली? कोई सनद हासिल की? कुछ नहीं किया, बल्कि सुफ़्फ़ा पर जाकर पड़ गए, न कोई निसाब है, न कोई घन्टा है।

वहां क्या करते थे? सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के कामों को देखा करते थे कि आप क्या कर रहे हैं, क्या फ़रमा रहे हैं। उनको देख देख कर तालीमाते नबवी का नूर उनके दिलों में आ गया, फिर इसी तरह ताबिईन फिर तबऐ ताबिईन से लेकर आज तक इल्मे दीन सीखने का यही सिलसिला चला आ रहा है। और यह जो हम पढ़ते हैं:

"قال حدثنا فلان حدثنا فلان"

"यानी उन्होंने फ़रमाया कि हम से यह हदीस फ़लां ने बयान की और उनसे फ़लां ने बयान की"

यह सब सनद है, यह वह पाक सिलसिला है जिस से हमारा ईमान का रिश्ता जाकर सीधा नबी–ए–अकरम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जुड़ जाता है।

वास्ते के ज़रिये अ़ता फ़रमाते हैं

एक किताब है। अब उस किताब को पढ़ने का एक तरीक़ा यह है कि आप उसका ख़ुद मुताला करें और जो कोई लफ़्ज़ समझ में न आए तो लुग़त में देख लें। और दूसरा तरीक़ा यह है कि वही किताब उस्ताद के सामने बैठ कर पढ़ें। दोनों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है। हालांकि मुताले के दौरान जो बात समझ में आई थी उस्ताद साहिब ने भी वही बताई हो, कोई फ़र्क़ न हो, फिर भी जो उस्ताद साहिब से सुनी हुई बात होगी उसमें जो नूर होगा, उसमें जो बर्कत होगी, उसमें अल्लाह तबारक व तआ़ला के इल्म की तजल्लियात होंगी, वे कभी मुताले से हासिल नहीं होंगी। वजह यह है कि उस्ताद कोई चीज़ नहीं है, उसकी कोई हक़ीक़त नहीं है, देने वाला अल्लाह तआ़ला है। लेकिन उसकी सुन्नत और आ़दत यह है कि वह जब देता है तो वास्ते से देता है। यहां तक कि अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम को भी वास्ते से देता है। क्या अल्लाह तआ़ला क़ादिर नहीं था कि बराहे रास्त नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर 'वही' नाज़िल फ़रमा देता। मगर अल्लाह तआ़ला ने ऐसा नहीं किया, बल्कि जिब्राईल अमीन को वास्ता बनाया। जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम से बात चीत की, तब भी एक पेड़ को वास्ता बना दिया। यानी शजरा–ए–तूर को। इसमें क्या मस्लिहत और क्या हिक्मत? वह जाने, उसकी हिक्मतें जाने। लेकिन उसकी सुन्नत यह है कि जब देता है तो किसी वास्ते से देता है। चाहे वह वास्ता बेजान ही क्यों न हो। जैसा कि यह पेड़, अपनी तजल्ली फ़रमानी चाही तो बराहे रास्त नहीं फ़रमाई, बल्कि तूर पहाड़ पर तजल्ली फ़रमाई, उसको वास्ता बना

दिया, हालांकि उसकी कोई हक़ीक़त नहीं। इसी तरह उस्ताद की कोई हक़ीक़त नहीं मगर उसको वास्ता बना दिया। यह उसकी सुन्नत है। देने का तरीक़ा बता दिया कि अगर लेना है तो इस तरह लो। जैसे यह खिड़की देखिए! इस से सूरज की धूप रोशनी आ रही है, क्या यह खिड़की रोशनी को पैदा कर रही है, कि खिड़की रोशनी की इल्लत बन गई हो? नहीं! रोशनी तो हक़ीक़त में बाहर से आ रही है, लेकिन यह खिड़की वास्ता बन गई है। इसी तरह यह उस्ताद वास्ता है, अगरचे इसकी ज़ात का इल्म की रोशनी में दख़ल नहीं, लेकिन हमें रोशनी पहुंचने में इसकी मदद मिलती है। इस वजह से उस्ताद की क़द्र व इज़्ज़त का रिवाज है, कि उन्हें अल्लाह तआला ने हमारे लिए वास्ता बनाया है।

बहर हाल! मैं जो कह रहा हूं अगरचे अल्लाह की किताब नम्बर एक है, और हदीस नम्बर दो है, लेकिन हमारे लिए अमली नुक़्ता-ए-नज़र से तरतीब यह है कि हदीस से पहले गुज़रेंगे, तब अल्लाह की किताब तक पहुंचेंगे, क्योंकि इसके बग़ैर हम अल्लाह की किताब को नहीं समझ सकते। इसलिये इल्मे हदीस जिसका हम आज आग़ाज़ (इफ़्तिताह) कर रहे हैं, जो हमारे तमाम उलूम मक़सूदा का मादा है। अल्लाह तआला हमें इख़्लास के साथ पढ़ने, पढ़ाने और पूरे आदाब के साथ इल्मे हदीस हासिल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واخر دعوانا ان الحمد للہ رب العالمین